

DUE DATE SLIP**GOVT. COLLEGE, LIBRARY**

KOTA (Raj)

Students can retain library books only for two weeks at the most

BORROWER S No	DUE DATE	SIGNATURE



THE JAIMINIYA OR TALAVAKARA
UPANISHAD BRAHMA'NA.

DEVANAGARĪ TEXT WITH INDEXES.

PREPARED FROM THE EDITION, IN ROMAN SCRIPT

OF
SHRI HANNS OERTEL PH. D.

BY
PANDIT RAJA DEVA, B. A.

WITH

AN INTRODUCTION ON THE HISTORY OF SAMAVEDA LITERATURE.

BY

BHAGAVAD DATTA.

First Edition,
1,000 Copies. }

FEBRUARY 1901

Dharali Mandir
Mahan. Coll. 7th. & 8th. 1
111111 } (O. P. Dico
6 Shillings.

दयानन्द महाविद्यालय-संस्कृत-ग्रन्थमाला।

अनेक विद्वानों की सहायता से ।

भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक वा अध्यक्ष अनुसन्धान-विभाग

दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर द्वारा

सम्पादित ।

ग्रन्थाङ्क ३ ।

ओ३म्

जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

अथवा

तलवकार-उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

पं० रामदेव वी० ए०

द्वारा

श्रीमान् हन्नस अटेल, पी० एच० डी०

महाराष्ट्रस्य

रोमनलिपि-संस्करणात् देवनागर्याम् लिपिकृतम् ।

भगवद्भक्त

संस्कृताध्यापक दयानन्दकान्हेज, लाहौर,

लिखितं

भूमिका-सहितम् ।

आर्य्यं सम्बत् १९६०८५३०२० ।

विक्रम सं० १९७७ ।

सन् १९२१ ई० ।

दयानन्दानन्द ३८ ।

प्रथमावृत्ति १००० प्रति

मूल्य २।। ६०

Printed by Bhairo Prasada,

MANAGER, VIDYA PRAKASHA PRESS, LAHORE.

AND PUBLISHED BY

THE RESEARCH DEPARTMENT, D A V COLLEGE, LAHORE

The Publications of this series can also be had of—

1. MESSRS LUZAC & Co,

46 Great Russell Street,

London W. C.

2. Lala Moti Lal Bunnari Das, The Punjab
Sanskrit Book Depot, Said Mittha Bazar, Lahore.

3. Lala Mohi Chand Lachhman Das, Sanskrit
Booksellers, Said Mittha Bazar, Lahore.

4. Pt. Wazir Chand, Vedic Book Depot, Mohan
Lal Road, Lahore

भूमिका ।

सामवेदीय वाङ्मय का इतिहास ।

परमात्मा से सामवेद का प्रादुर्भाव ।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जग्निरे ।

छन्दांसि जग्निरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

ऋ० १०।६०।६।यजु ३।१।७॥ तै० ब्रा० ३।१।४॥

इस व्यापक सर्वपूर्य परब्रह्म से ऋग्वेद, सामवेद प्रादुर्भूत होते हैं। अथर्ववेद प्रसिद्ध होता है उस से, यजुर्वेद उस से प्रकट हुआ।

(पूर्वपक्ष) 'ऋच' आदि पद बहुवचनान्त हैं, अतः इनका अर्थ ऋग्वेद आदि कैसे हुआ ? इनका अर्थ तो यही है कि ऋचायं, साममन्त्र और छन्द उत्पन्न हुए ।

(उत्तरपक्ष) यह सत्य है, कि 'ऋच', सामानि, और 'छन्दांसि' पद बहुवचनान्त हैं, पर साथ ही 'यजुः' पद एकवचन में भी है। यदि तुम्हारी बात मानी जाये तो 'यजुः' पद से तुम क्या अभिप्राय लोगे ?

(पूर्वपक्ष) 'यजुः' पद यहां जात्यर्थ में एकवचन होता हुआ भी यजुर्मन्त्रों का बोधक है, यजुर्वेद का नहीं ।

(उत्तरपक्ष) यह बात यहां न घटेगी क्योंकि 'छन्दांसि' पद पर पूर्ण विश्वास किसी और परिणाम पर बेजाता है। हेको ! 'छन्दांसि' पद यहां किन्हीं मन्त्र विशेषों का बोधक नहीं है। द्वा. नन्द सरस्वती

में इसी पर विचार करते हुए लिखा है—‘वेदाना गायत्र्यादिच्छन्दा
 ऽन्यतत्वात्पुनश्छन्दोऽसीतिपद चतुर्थस्याथर्ववेदस्योत्पत्तिं क्षापयती-
 त्त्वधेयम्।’ (शु० भाष्यभू० वेदोत्पत्तिवि०) अर्थात् ‘वेदों में सब मन्त्र
 गायत्र्यादि छन्दों से युक्त ही हैं, फिर (छन्दोऽसि) इस पद के कहने
 से चौथा जो अथर्ववेद है उस की उत्पत्ति का प्रकाश होता है ।
 अन्यथा ‘छन्दोऽसि’ का यहा कोई प्रयोजन नहीं । इस अर्थ में अन्य
 प्रमाण भी देखो ।

(१) “ऋचाम्	...गायत्र च्छन्दः ।
यजुषा	त्रैष्टुभ छन्दः ।
साम्नाम्	...जागत च्छन्दः ।
अथर्वणा	..सर्वारि छन्दासि ।”

गो० भा० १।१।२६॥

वैदिक विचार में यह सुप्रसिद्ध है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द
 सम्बन्धी है [यद्यपि यह यजुसन्धेय है कि ऋग्वेद में गायत्री(२०५०)
 की अपेक्षा त्रिष्टुप् (४२५३) क्यों अधिक है ?] यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द
 सम्बन्धी और सामवेद जगती छन्द सम्बन्धी है । अथ रहा अथर्ववेद,
 तो यह पूर्वोक्त गायत्र्यादिछन्द के प्रमाणानुसार सर्व-छन्द सम्बन्धी
 है। उस का किसी एक छन्द से सम्बन्ध विशेष नहीं । यही कारण है
 कि उपस्थित मन्त्र में ‘छन्दोऽसि’ पद से अथर्ववेद का प्रहण होता है।

(२) प्रस्तुत मात्र सम्बन्धी एक अन्य बात भी ध्यान देने योग्य
 है । अथर्ववेद में यह मात्र निम्नलिखित प्रकार में आया है—

तस्माद्यज्ञात् सर्वद्वुत ऋच. सामानि जाशिरे ।

। छन्दो ऽ जाशिरे तस्मात् यजुस्तस्मात्जायत ॥

अथर्वे० १६।६।१३॥

यहां 'छन्दांसि' के स्थान में 'छन्दो ह' पाठ है। इस प्रकार पाठ में भेद कर देने से परमात्मा ने मन्त्रों द्वारा ही अन्य मन्त्रों का व्याख्यान कर दिया है। यह मन्त्र उन्नीसवें काण्ड का है, और यद्यपि पञ्चपट्टिका की भूमिका में लिखे अनुसार हम अभी तक इस काण्ड के सिहितान्तर्गत होने के विषय में कुछ नहीं कह सकते, फिर भी यह तो रुच को स्वीकार करना पड़ेगा कि षड्वचनान्त 'छन्दांसि' पद का अर्थ एकवचन 'छन्द' अर्थात् (पूर्व प्रमाणों की दृष्टि से) अथर्ववेद ही है। रहा क्रियापद 'जह्निरे'। सो वह व्यत्यय ही समझना चाहिये, यद्यपि ऐसे व्यत्ययों के उदाहरण सम्प्रान्त वैदिक ग्रन्थों में अत्यल्प मिले हैं।

पूर्वोद्धृत अथर्ववेद के मन्त्रों से निश्चय होता है कि 'छन्दांसि' आदि पदों का अर्थ एक वचन में ही है। ऐसी अवस्था में यजुः पद भी यजुः मन्त्रों का जाति-वाचक न रहेगा। इस विषय में अन्य प्रमाण देखो—

(३) यस्माद्दृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपात्क्षन् । सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमःस्विदेवसः ॥

अथर्व १०।७।२०॥

इस प्रमाण में 'यजुः' पद एक वचन में है, और अथर्वाङ्गिरस स्पष्ट ही ऋग्वेद का द्योतक है। अतएव 'ऋचः' और 'सामानि' पदों का अर्थ भी ऋग्वेद और सामवेद ही होना चाहिये।

विचारान्तर्गत "तस्माद्यज्ञात्" ऋ० १०।६०।६ मन्त्र की व्याख्या में सत्यव्रत सामाथमी जयीपरिचय तथा निरुक्तालोचन में लिखते हैं कि 'सामवेद छन्द और गान दो भागों याज्ञ है। सो छन्द भाग का ग्रहण छन्दांसि पद से और गान भाग का ग्रहण सामानि पद से करना चाहिये।' इसका कुछ सफेदन तो हरिप्रसाद

जी ने वेदसर्वस्य के उपोद्घात पृ० १५ पर किया है। यद्यपि हम उनके बिचार-क्रम से सहमत नहीं, तथापि उन के इस परिणाम के कि गान भाग तो मूलसंहिता का गेय-रूपान्तर ही है, अनुकूल सम्मति रखते हैं। इस गान भाग के लिये कहीं अन्यत्र मन्त्रों में 'सामानि' वा 'साम' पद प्रयुक्त हुआ होता तो सत्यमत जी का पक्ष कुछ ठहर सकता; पर ऐसा है नहीं, अतः उनका पक्ष निरावार होने से सम्मान योग्य नहीं।

सत्यमत जी के पक्ष को एक बात कुछ आशय दे सकती है, यद्यपि यह इन्होंने स्पष्ट नहीं लिखी। अथर्ववेदीय पिप्पलादशाखा में 'सामानि यस्य लोमानि' के स्थान में 'छन्दांसि यस्य लोमानि' पाठ आया है। बेसी दशा में सत्यमत कह सकता था कि 'छन्दांसि' पद 'सामानि' का पर्यायवाची है, और सामवेद के छन्द भाग का अंतक है। यह बात भी सत्य नहीं ठहरती क्योंकि 'सामानि' आदि पद जैसा आगे थक कर और भी विदित हो जायगा सामवेद बाधक हैं। वैसा कोई छन्दवेद है नहीं, और 'छन्द' पद अथर्ववेद बाधी सिद्ध हो चुका है, अतः पिप्पलाद का पाठ जब तक कि उस शाखा के अन्य लिखित ग्रन्थ न मिले (जो कि बहुत कम सम्भव है) अशुद्ध ही कहा जायगा।

विदेशीय (पारसीक) भाषा में छन्द का अर्थ।

भाषा-विज्ञानी जानते हैं कि छन्द शब्द ही पारसीक भाषा में जन्म बना है। यही जन्म पारसीकों का धर्मग्रन्थ है। इस में अथर्वन पुरोहितों का नाम भी कई बार आया है। हाग के मता-नुसार तो इस में आया हुआ एक मन्त्र भी अथर्ववेद का प्रथम मन्त्र है। इस प्रकार प्रतीत होता है कि जन्म का अथर्ववेद से सम्बन्ध-विशेष है, अतएव छन्द शब्द का अर्थ पूर्वोक्त मन्त्र में अथर्ववेद ही युक्तियुक्त है। ऐसी दशा में 'सामानि' आदि पद भी सामवेद आदि के बाधक है।

ब्राह्मणग्रन्थों में सामानि पद का अर्थ ।

- (१) सामवेद आदित्यात् (पे० २५।७)
- (२) आदित्यात्सामानि (कौषी० ६।१०)
- (३) सूर्यात् सामवेदः (श० ११।५।८)
- (४) सामान्यादित्यात् (छाँ० उ० ४।१७।२)
- (५) सामवेद आदित्यात् (जै० उ० ब्रा० ३।१५।७)
- (६) सामवेदोऽमुष्मात् (पड़वि० ४।१)
- (७) आदित्यात् सामवेदम् (गो० १।६)

इन सात प्रमाणों में से दूसरे और चौथे प्रमाण में 'सामानि' पद आया है, अन्य पांच प्रमाणों में सामवेद । ये ब्राह्मणवाक्य एक प्रकार से पूर्वोक्त वेद मन्त्रों की व्याख्या में ही कहे गये हैं । इन में अधिकांश स्थलों में सामवेद का प्रयोग बता रहा है कि प्राचीन ब्रह्मादि ऋषियों की दृष्टि में भी इन स्थलों में 'सामानि' पद से सामवेद का ही अभिप्राय होता था। अतएव "तस्माच्चक्षात्" मन्त्र का इस खेल के आरम्भ में किया हुआ अर्थ ही सत्य है, और दूसरा नहीं । इस मन्त्र का यही अर्थ ऋषि दयानन्द सरस्वती ने अपने अनेक ग्रन्थों में किया है । हम ने तो उसी का उद्धरण मात्र दिया है ।

इस कल्पारम्भ में सामवेद सब से प्रथम किस को प्राप्त हुआ ?

पुर्वं खेल से यह स्पष्ट होगया होगा कि सामवेदादि वेद उसी यज्ञ-रुक्मिणी-परब्रह्म से प्राप्त हुए । यहां यह विवाद नहीं उठाया जायगा कि वेद-ज्ञान क्यों परमात्मा का है ? इसे किसी जन्म अवसर पर लुंगा । यहां अब यही निर्णय करना है कि इस कल्पारम्भ में सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ वा अनेकों को ।

अनेकों को प्राप्त हुआ, ऐसा मानने वाले बहुत थोड़े हैं। उन के पक्ष में कोई प्रमाण भी नहीं है। जा यह मानते हैं कि सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ, वे दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। एक भाग वालों का मत है कि सामवेद अग्नि के आधिष्ठाता देव को प्राप्त हुआ। उसी से मन्त्र द्रष्टा ऋषियों को प्राप्त हुआ। दूसरे भाग वालों का मत है कि मनुष्य-देह धारी अग्नि ऋषि को प्राप्त हुआ जो इस कल्पारम्भ में अमैतुनि सृष्टि का एक सभासद था। इस पर विचार—

(१) अग्नि आदि द्रव्यों का कोई चेतन जीव अधिष्ठाता है अर्थात् इनको स्व-शरीरवत् बनाये है, ऐसा वेद में कहीं नहीं आया। हाँ, अग्नि ईश्वरदेव का नाम ता सर्वत्र प्रसिद्ध है। इस का विशेष ध्याय्यान भगवान् दयानन्द सरस्वती जी ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका में मिल सकता है। इसी पक्ष के खण्डन में 'जड़ाग्नि से ऋग्वेद का प्रकाश हुआ' इस का खण्डन हो जाता है। कारण कि जड़ को ज्ञान होना असम्भव है।

(२) दूसरे मत में भी एक भारी आपत्ति आती है। पूर्वोक्त ब्राह्मणग्रन्थों के सात प्रमाणों में सूर्यात्=आदित्यात्=अमुष्मात् पद आये हैं। इस पर—

(पूर्वपक्ष) यदि सूर्यादि मनुष्य देहधारियों के नाम होते तो उन के पर्याय आदित्य आदि और 'वायु' का पर्याय "योऽयं पवते" शत० ११।५।८।२ न आते। ब्राह्मणग्रन्थों में "अमुष्मात्" प्रयोग रूपतः इसी सूर्य के लिये आया है। और वायु यदि कोई मानव समाज का सदस्य था तो क्या वह "योऽयं पवते" अर्थात् "जो यह बहता है" ऐसा ही था? क्या मनुष्य भी पवन समान बहते हैं?

(उत्तर पक्ष) प्राचीन संस्कृत धारुमय के न जानने का ही कारण है कि ऐसे पूर्वपक्ष खड़े होते हैं । देखो महाभारत को—

(क) यहां कर्ण के समीप उस के पिता सूर्य का धाना लिखा है । यह सूर्य कोई देवता न था, प्रत्युत मनुष्य देहधारी व्यक्ति ही था । उस के निम्नलिखित नाम महाभारत वनपर्व अध्याय ३०१ में आये हैं ।

अभिप्रायमयो ज्ञात्वा महेन्द्रस्य विभावसुः ।

कुण्डलायें महाराज सूर्यः कर्णमुपागतः ॥६॥

स्वमान्ते लिशि राजेन्द्र दर्शयामास रश्मिवान् ।

कृपया परयाऽऽविष्टः पुत्रस्नेहाच्च भारत ॥७॥

ब्राह्मणो वेदविद्रुत्वा सूर्यो योगर्द्धिरूपवान् ॥८॥

अहं तात सहस्रांशुः सौहृदात्त्वां निर्दशये ॥२२॥

इस का संचित अभिप्राय यह है कि योगसिद्धि-समन्वित सूर्य महात्मा ब्राह्मण वेप में रात्रि के अन्तिम प्रहर में कर्ण के जागने पर उसके समीप आया । उस सूर्य के यहां कई नाम आये हैं जो सूर्य शब्द के पर्याय हैं, यथा विभावसु=रश्मिवान्=सहस्रांशु । अथ रामायण पर किञ्चित् ध्यान दो—

(ख) वाल्मीकिरामायण में वानर जाति का सुविख्यात वर्णन है । वहां भी मुनि वाल्मीकि वानर शब्द के अनेक पर्याय उस जाति के लिये प्रयोग में लाते हैं । ध्यान रहे कि मिथ्या-कथा युक्त विवरण को छोड़ कर वानर जाति मानवेतर जाति सिद्ध नहीं हो सकती । और सत्य तो यह है कि (क) और (ख) स्थलों में सूर्य और वानर के द्रमश पर्याय-प्रयोग को देख कर ही मध्यम काशीन लोगों ने इन्हें देवता या पशु मान लिया था । अन्त में ब्राह्मण ग्रन्थों के वाक्य-प्रयोग पर भी ध्यान देना चाहिये—

(ग) तैत्तिरीयब्राह्मण ३।१।८ में नचिकेता की कथा आई है। वहाँ उस का जिस ऋषि से प्रश्नोत्तर हुआ, उस का नाम मृत्यु ही कहा है। ऋग्वेद में भी यही कथा बड़े विस्तार से आई है। वहाँ मूळ ऐतिहासिक कथा के साथ २ कुछ अलङ्कार भाग मिश्रित करके औपनिषद्-भाव अधिक खोजा गया है। परसब से अधिक विचारणीय यह है कि यहाँ मृत्यु ऋषि के कई दूसरे भी नाम दिये गये हैं। ये सब नाम मृत्यु शब्द के पर्यायवाची हैं, यथा "यम १।५ अन्तर १।२६"।

(घ) वेद के ऋषियों के नाँ फरं ऐसे नाम सर्वानुक्रमणी में आवे हैं, जैसे "अग्नि पायक" ऋ० १०।१४०॥ अग्निस्तापसः ऋ० १०।१४१॥ यहाँ विशेष्य विशेषण भाव से ये समानार्थक शब्द प्रयुक्त हुए हैं। इन पूर्वोक्त प्रमाणों से यही निश्चित होता है कि बहुत प्राचीन काल में व्यक्ति विशेषों के नामों के यदि कोई पर्याय हों तो वे भी उसी के नाम के लिये प्रयुक्त हो जाते थे। और जैसे महाभारत में 'सूर्य' को 'रश्मिदानु' आदि कहा है वैसे ही अतपय ब्राह्मण में 'वायु' को 'योऽय पवते' कह दिया गया है। अतपय ब्राह्मण आदि ग्रन्थों के पूर्वोक्त सात प्रमाणों में "आदित्य" मनुष्य देहधारी ऋषिदेव है, कोई जट वा जट, सूर्य का अधिष्ठाता देव नहीं। इसी आदित्य=सूर्य=रवि के मन में इस कल्पारम्भ के समय सब से पहले परमात्मा ने सामवेद का प्रकाश किया। उसी ने ब्रह्मा आदि को पढ़ाया और फिर यह वेद सर्वत्र फैलता गया। षड्विंशब्राह्मण में जो "अमुष्मात्" प्रयोग आया है उस का यही अर्थ है कि मनुष्य शरीर में शिर स्थान आदित्य या सूर्य सम्बन्धी है। सूर्य ऋषि को समाहित्य दशा में शिर की नाड़ियों में मन के जाने से इन वेद का ज्ञान होता था, अतः यह प्रयोग आ गया है।

सामवेद की शाखाएं ।

आर्यावर्त में सृष्टि के आरम्भ से लेकर दीर्घ कालपर्यन्त लौकिक और वैदिक भाषा का बहुत प्रचार रहा । उस समय वेदादि शास्त्र आज कल की अपेक्षा अल्पपरिश्रम से ही समझे जाते थे । तब प्रवचनकर्त्ता आचार्य वा ऋषि अपने शिष्यों के लाभार्थ कठिन वैदिक शब्दों के स्थान में अन्य सरल वैदिक शब्द प्रयुक्त करके अथवा कुछ २ व्याख्या करके पढ़ाया करते थे । उतने से ही शिष्य यथार्थ अभिप्राय समझ लेते थे । तब किन्हीं विस्तृत भाष्योंकी आवश्यकता न थी । यही ऋषि-प्रवचन था जो पीछे शाखा आदि नाम से प्रसिद्ध हुआ । इसी प्रवचन के समग्रन्थ में भाष्यकार पतञ्जलि मुनि ने लिखा है—

“ न हि च्छन्दांसि क्रियन्ते । नित्यानि च्छन्दांसीति । यद्यप्यथो निसो या त्वसो वर्णानुपूर्वी सानिसा । तद्देदाच्चैतद्भवति काठकं कालापकं मौद्गकं पैपलादकमिति । ” ४।३।१०१॥

अर्थात् वेद तो क्या, साधारण-ग्रन्थों के समान शाखाएं भी बनाई नहीं गईं । इनका शब्दार्थ नित्य है । हां, अर्थ के नित्य होते हुए भी वर्णानुपूर्वी अनित्य है । इसी के भेद से ऋषियों ने नित्य वेदार्थ खोला है । और इसी भेद से काठक आदि अनेक शाखाएं हुई हैं ।

(प्रश्न) मूल सामवेद जिस वी आगे शाखाएं बनीं अब कहां हैं ? उस में ऋग्वेदीय ऋचाएं न होनी चाहियें । अब तो जितने ग्रन्थ सामवेद के नाम से मिलते हैं उन सब में ऋग भाग सम्मिलित है ।

(उत्तर) मूल सामवेद था तो अवश्य क्योंकि बिना इस के साम शाखाएं बनती कैसे, और प्रवचन किस का होता ? उसी मूल का वर्णन ऋग्वेदादि वेदों और ऐतरेय आदि ब्राह्मणों में आया है । वह मूल भी प्रतीत होता है, प्रवचन के बल से पीछे ऋषि-विशेष के नाम से प्रसिद्ध हो गया । ऋग्वेदीय ऋचाएं सामवेद में नहीं

अर न हैं । हम यह कह-सकने हैं कि ऋग्वेद और सामवेद के अनेक मन्त्र सदृश हैं । उन्हीं मन्त्रों का पारिभाषिकनाम 'ऋक्' भी । कर्त्ता परमात्मा ने प्रयोजन विशेष के लिए ये समान मन्त्र दो वेदों में रक्षे हैं । मिथ्या इतिहास प्रचारक जा लेखक हमारे इस पन्थन को नहीं मानते उन्हें हम ऋग्वेद का एक मन्त्र बताते हैं—

गायत्रेण प्रति विधीते अर्कमर्केण साम त्रैष्टुभेन वाक्पृ ।

राकेन वाक् द्विपदा चतुष्पदाक्षरेण विधते सप्त वाणीः ॥

ऋ० १ । १६४ । २४॥

सुप्रसिद्धपक्षमौ चौमटों सूक्त का यह चौबीसवा मन्त्र है । उन पूर्वपती लेखकों के मतानुसार प्रथम मण्डलीय होने से यद्यपि यह मन्त्र अत्यन्त पुराना नहीं तथापि बहुत नया भी नहीं है । इस मन्त्र में भी स्पष्ट ही साम में ऋचाया का होना जताया गया है । अर्थ इस का अर्थात् सरल है । पूर्व लिखा जा चुका है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द प्रधान और यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द प्रधान है । अर्क पद मन्त्र या ऋचा का भी पर्यायवाची है । अतएव मन्त्रार्थ यह है—

गायत्री छन्द स अर्क=ऋचा=ऋग्वेद का (जगदीश्वर) प्रतिमान करता है । ऋचाओं से सामवेद का । त्रिष्टुप् छन्द से वाक्=यजुर्वेद का । यजु मन्त्रों से वाक्=अथर्ववेद का । [जापेसी] सात छन्द युक्त वेद वाणी का मान करते हैं [वे वृत्तरत्य धृते हैं ।] हम से पूर्वपतियों को भी मानना पड़ेगा कि ऋचाएँ वा ऋग्वेदीय मन्त्रों जैसे मन्त्र बहुत पुराने काल से सामवेद में चले आते हैं । हम पूर्व बता चुके हैं कि आर्येतिहासानुसार सामवेद आरम्भ से ही सहितारूप में चला आ रहा है, अत इस दृष्टि में जासत्य ही है आदि गृष्टि से सामवेद में ऋचाएँ चली आती हैं । जा व्यक्ति इन ऋचाओं का साम गाठ से पृथक् जानें, मानें, वह यदि क वाङ्मय के इतिहास से अर्थ है ।

शाखा-विभाग ।

अथ रक्षा शाखा-विभाग पर विचार । इस पर प्रकाश डालने वाला कोई अति प्राचीन ग्रन्थ हमारे पास विद्यमान नहीं । एक चरण-व्यूह ग्रन्थ ही रह गया है । यह विक्रम से पांच, छ सौ वर्ष पूर्व का ही प्रतीत होता है । इस में पाठभेद का बाहुल्य है । नीचे उसी की साची उपास्थान की जाती है ।

चरणव्यूह की साची ।

शौनकीय परिशिष्ट ।

सामवेदस्य किल सहस्रभेदा भवन्ति ।
एष्वनव्यायेष्वधीयानारणे शतमनुष्ये-
षाभिहता ।

शेषानव्याख्यास्याम । तत्र राणायनीया
नां सप्तभेदा भवन्ति । (१) राणाय-
नीयाः (२) शात्यमुग्राः* (३) का-
लोपा (४) महाकालोपा (५) लाङ्ग-
लायनाः (६) शार्दूलाः (७) कौथु-
माश्चेति ।

महिदास प्रदीक्षित प्रकारान्तर ।

तत्र कौथुमाना षड्भेदा भवन्ति ।

(१) कौथुमाः । (२) आसुरायणाः
(३) वातायना (४) प्राञ्चबिद्वैन-
सृतः (५) प्राचीनयोग्याः (६)
नैगमीयाः ।

अथर्व-परिशिष्ट ।

तत्र सामवेदस्य शाखासहस्रमार्तीत् ।
अनव्यायेष्वधीयाना सर्वे ते शत्रेण
विनिहत [श्विलीना] तत्र वेचिदवा-
शिष्टा प्रचरन्ति । तथा ।

(१) राणायनीयाः (२) साद्य-
मुग्रा * (३) कालापाः (४) महा
कालापाः (५) कौथुमाः (६) लाङ्ग-
लिकाश्चेति ।

कौथुमाना षड्भेदा भवन्ति । तथा ।

(१) सारायणीयाः (२) वातराय-
णीया (३) चैतधृताः (४) प्राचीना
(५) तेजसाः (६) अनिटकाश्चेति ।

* सात्यमुग्रा नाम अधिक युक्त है । महाभाष्य १ । १ । ४ ॥

१ । १ । ४८ ॥ पर देसा ही पाठ है ।

जहाँ सैद्धों साम-शाखाओं के नाम विलुप्त हो गये हैं वहाँ विद्यमान नामों में भी पाठ भेद के कारण एक बड़ा अन्तर पड़ गया है। पूर्वोक्त शाखा-नामों के पढ़ने से यह बात सुस्पष्ट हो जाती है। चरणव्यूह के टीकाकार महिदास ने निज व्याख्या में कुछ अन्य नाम भी दिये हैं। उन्हीं का पाठभेद स्वामी हरिप्रसाद जी के वेदरुच्य के पृष्ठ १७२ पर मिलता है। पता नहीं उन्होंने ने स्व-शुद्धि से पाठ संशोधन किया है अथवा किसी लिखित ग्रन्थ के आधार पर ये नाम दिये हैं। तथापि हम उनके पाठभेदों को कोष्ठों में रख कर महिदास के पाठ जो संवत् १९५६ के कार्या-संस्करण में छपे हैं, नीचे देते हैं।

(१) आसुरायणीया (२) वासुरायणीया (३) वार्तान्तेया [वार्तान्तेया] (४) प्राञ्जल [प्राञ्जला] (५) ऋग्वैनविधा. [ऋग्वै-भेदाः] (६) प्रार्चीनयोग्या. [७ ज्ञानयोग्या] (७) राणायनीयाश्चेति। तत्र राणायनीयातां तत्र भेदा भवन्ति। (१) राणायनीया (२) शाठ्या-यनीया (३) शाठ्यमुद्राः [सात्वला] (४) खल्ला (५) महाखल्लाः (६) काङ्गलाः (७) मौथुगा. (८) गीतमा (९) जैमिनीयाश्चेति।

पतञ्जलि मुनि कहते हैं "रुद्रचर्ममा सामवेद." (महाभाष्य कीलहान सं० भाग १, पृ० ९) अर्थात् 'सहस्र शाखा वाला साम वेद है।' उन्हीं सहस्र शाखाओं में से कुछेक का उल्लेख पूर्वोक्त चरणव्यूह के पाठों में है। चरणव्यूह के शाखा-नाम-इतिहास में तथ्य की किस व्यवस्था पर होना सम्भव है। तदनुसार यों या किसी विद्युत् प्रकोप वाले दिन किसी सामशाखीय अध्यापक ने अपनी शाखा का पाठ किया होगा। यह इन्द्र-सूर्य के पञ्च-नदित की धारा से अपने प्राण नष्ट कर बैठा होगा। साथ ही

उस के ग्रन्थ बिनष्ट हो गये होंगे* । परन्तु यह सब दूर की कल्पना प्रतीत होती है । वस्तुतः कालक्रम से ही ये सब शाखाएं लुप्त होती गई होंगी ।

सम्प्राप्त तीन शाखाएं ।

सम्प्रति सामवेद की तीन शाखाएं ही प्रसिद्ध हैं । चरणव्यूह में भी इन्हीं का उल्लेख है । 'गुर्जरदेशे कौथुमी प्रसिद्धा । कार्याटके जैमिनी प्रतिज्ञा । महाराष्ट्रदेशे राणायनीया प्रसिद्धेति ।' अर्थात् गुजरात में कौथुमी, कार्याटक में जैमिनी और महाराष्ट्र में राणायनीय शाखा प्रसिद्ध है ।

पूरोक्त तीन शाखाओं में से कौथुमी शाखा ही सम्प्रति मूल सामवेद माना जाता है । इस का एक कारण तो इस का समस्त भारत में अत्यन्त प्रसिद्ध होना है । अन्य प्रयत्न कारणों की आगे रोज़ होनी चाहिये ।

इस सामवेद के आठ ब्राह्मण हम तक पहुँचे हैं । (१) ताण्ड्य महा-ब्राह्मण अथवा पञ्चविंशद्ब्राह्मण अथवा प्रौढ ब्राह्मण अथवा छान्दोग्य ब्राह्मण (विवलियोथीका इण्डिका संस्करण संवत् १९२७-३०) । (२) पड्विंशद्ब्राह्मण (जीवानन्द सं० १८८१ सन् तथा "विज्ञापनभाष्य-सहितम्," एच० एफ० ईलरिंह सम्पादित, लंडन १९०८) । (३) सामविद्यातब्राह्मण (ए० सी० वॉरेल सम्पादित १८८० सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रत सामा० सम्पा० सं० १९५१) । (४) आर्येय ब्राह्मण (ए० सी० वॉरेल सम्पा० १८७८ सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रतसा० सम्पा०

* अलबेहनी लिखता है कि 'उस के काल से कुछ पूर्व ही कश्मीर के वसुक्र नामक ब्राह्मण ने वेदों को लिपिबद्ध करने की प्रथा चलाई थी ।' (अलबेहनी का भारत भाग दूसरा । श्रीमत्तरामरत अनुवाद । सन् १९२० । पृ० ३१) । इसे इस बात पर विद्वान् नहीं ।

सं० १६४८) । (४) देवताध्याय या देवत ब्राह्मण (ए० सी० यर्नेल सन्पा० सन् १८७३ तथा जीवानन्द सन् १८८१) ; (६) उपनिषद् ब्राह्मण—(क) मन्त्रब्राह्मण (सत्यव्रतसा० सम्पा० सं० १६४७ तथा प्रथम प्रपाठकमान फे० स्टोन्नर सम्पा० १६०१) (ख) छान्दाग्योपनिषद् (अनेक संस्करण निकल चुके हैं) । (७) संहितोपनिषद् ए० सी० यर्नेल सन् १८७१) । (८) षडब्राह्मण (ए० सी. यर्नेल सम्पा १८७३ तथा सत्यव्रत सा० सं० १६४६) ।

कई विद्वानों का मत है कि वस्तुतः सामब्राह्मण एक ही है । यह सम्प्रति चार भागों में विभक्त हो गया है । (१) पचीस अध्यायात्मक पञ्चविंशब्राह्मण (२) पत्र अध्यायात्मक पद्मिंशब्राह्मण (३) अष्ट अध्यायात्मक छान्दाग्योपनिषद् (४) दो अध्यायात्मक गृह्य-कर्म-ग्रन्थान् मन्त्रब्राह्मण । साग ब्राह्मण चाहीस अध्याय युक्त था । अन्य पांच ब्राह्मण अनुब्राह्मणमात्र हैं । जब तक सामवेद सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों के शुद्ध वैज्ञानिक संस्करण न रूप जायें, तब तक इस विषय पर कुछ कहना हमारे लिये अयुक्त है । इस का विचार तभी होसकता है जब इन ब्राह्मण-ग्रन्थों का काल-निरूपण हो जाये ।

तारुण्यब्राह्मण की प्राचीनता ।

अष्टाध्यायी ४। २। १३ पर एक धार्मिक है “चरण सम्बन्धेन नियाम लक्षणोऽयम्” इस पर लिखते हुए पतञ्जलिमुनि चरणसम्बन्धी नौ (६) श्रुतियों को निरास्त-विचार से तीन भागों में बांटते हैं । “अथ प्राच्या । अथ उदीच्याः । अथो माध्यमा ।” काशिकाकार रम् शक्य को ध्यान में रखकर अष्टा० ४ । ३ । १०४ ॥ पर लिखता है— “शम्पायनान्तेधासिनो नत्र ।” आगे चलकर यह कुछ प्राचीन कारिकाएँ उद्धृत करना है । उन में से एक का अर्थ भाग यह है—

ऋचाभारुणितारुड्याश्च मध्यमीयास्त्रयोऽपरे ॥

अर्थात् ऋचाभ, भारुणि और तारुड्य तीनों वैशम्पायन-शिष्य माध्यम=मध्यम भूमि निवासी थे। इन तीनों के अपने २ चरण थे। इन में से तारुड्यों की शाखा आरम्भ से कौथुमी ही चली आ रही है। इस का कुछ पक्ष पाणिनीय गणपाठ से लगता है। वहाँ ६।२।३७ पर यह तीन गण भी दिये हैं। “कठकाखापाः। कठकौथुमाः। कौथुमलौकाद्या।” हम कह चुके हैं कि कठ और तारुड्य आदि सतीर्थ्व=एक गुरु के शिष्य थे। उन में से कठों की अपनी शाखा थी, परन्तु तारुड्यों का अपना चरण ही था। इस लिये गण में कठ और तारुड्य दोनों की शाखाओं का परिचय देने के लिये “कठकौथुमा” कहा है। इस कथन में एक बात ध्यान देने योग्य है। सामविधान ब्राह्मण के अन्त में जो ऋषि परम्परा दी है वहाँ तारुड्य का गुरु प्राजापत्यविधि से वादरायण कहा है। यथा—

सोऽयं प्राजापत्यो विधिस्तमिमं प्रजापतिर्वृहस्पतये प्रोवाच ।
 वृहस्पतिर्नारदाय । नारदो विष्वक्सेनाय । विष्वक्सेनो व्यासाय
 पाराशर्याय । व्यासः पाराशर्यो जैमिनये । जैमिनिः पौष्पिण्ड्याय ।
 पौष्पिण्ड्यः पाराशर्यायणाय । पाराशर्यायणो वादरायणाय ।
 वादरायणस्ताण्डिशायानिभ्याम् । ताण्डिशायानिनौवदुभ्यः ॥

एक तारुड्य का अर्थात् शतपथब्राह्मण ६।१।२।२५ में आया है—“अथ ह स्माह तारुड्यः।” अतः इतना निश्चित है कि चाहे तारुड्य कोई भी हो, है वह अतिप्राचीन। तब उस की संहिता क्यों कौथुम हुई और मूल सामवेद क्यों कौथुम कहलाया ? इस के विचार के लिए बड़े परिश्रम की आवश्यकता है।

सूत्रों का विवरण निम्नलिखित प्रकार से है। (१) मथककल्पसूत्र

अथवा आर्षेयकल्प (डबल्यू० कार्लेण्ड सम्पा० सन् १९०८) ।
 (२) चुद्रसूत्र आर्षेयकल्प का परिशिष्ट ही है (उसी के उत्तर भाग में छपा है) । (३) तात्पर्यायन श्रौतसूत्र (विय० इण्डि० स० १९२८) ।
 (४) गोमिलीय गृह्यसूत्र (कापर सम्पा० १८८४ सन् तथा विय० इण्डि०, द्वि० स०, सन् १९०८) । (५) आश्वकल्प परिशिष्ट, गोमिल अथवा वसिष्ठकृत (विय० इण्डि० द्वि० स० सन् १९०६) ।
 (६) कर्मप्रदीप अथवा छन्दागृह्यपरिशिष्ट (धर्मशास्त्रग्रह सन् १८७६, जीवानन्द संस्करण के पूर्वार्ध पृ० ६०३-६४४ तक, कात्यायन स्मृति या कात्यायनविरचित कर्मप्रदीप के नाम से छपा है । तथा प्रथम प्रपाठक क्र० थ्रेडर सम्पा० हूले १८८६ सन् तथा त्रि० इण्डि० में सन् १९०६ और द्वि० प्रपाठक सृ० हालस्टाइन सम्पा० हूले सन् १८९०) ।
 (७) गृह्यसंग्रह, गोमिलपुत्रकृत (लूमफील्ड द्वारा Z D M G Vol ३५ में सम्पा० तथा विय० इण्डि० द्वि० सन् १९१०) । (८) पञ्चविधसूत्र (सत्यव्रतसा० सम्पा० तथा रि० ज़ीमन सम्पादित १९१३ प्रेसला) । शिक्षाग्रन्थों में तीन शिक्षा प्रसिद्ध हैं ।

(१) नारदीय शिक्षा (सत्यव्रतसा० स० दत्तात्रेय सम्पा० जाहौर सन् १९०६ तथा शिक्षासंग्रह काशी में सन् १८६३) । (२) लोमशरीय शिक्षा (शिक्षा संग्रह स०) (३) गौतमीयशिक्षा (शिक्षा संग्रह स०) । प्रातिशाख्यों में निम्नलिखित ग्रन्थ है ।

(१) ऋष्यतन्त्र (ए० सी० बर्नेल सम्पा० १८७६) । (२) सामतन्त्र (दयानन्द महाविद्यालय के लालचन्द्र पुस्तकालय में इस की एक प्रतिखिपि है जो मद्रास गवर्नमेण्ट के सभ्य के एक ग्रन्थ से कराई गई थी) । (३) पुष्पसूत्र वा पुष्टसूत्र (रि० ज़ीमन सम्पादित) ।

कुछ चाँदह (१४) ग्रन्थों का हम ने ऊपर उल्लेख किया है । इन के अतिरिक्त अठ्ठास (३८) और ग्रन्थ हैं । उन सब के नामादि

जैमिनीय संहिता (von Dr W. Caland, Bieslu, 1917) पृ०
१३—१५ पर देखो ।

२. राणायनीय शाखा ।

इस शाखा की संहिता अभी तक नहीं छपी । इस के सूत्र
अन्य निम्नलिखित हैं ।

- (१) द्राह्यायण श्रौतसूत्र (कुछ भाग रिव्यूटर सम्पादित लण्डन
१८०४ सन्) । (२) खादिरगृह्यसूत्र अथवा द्राह्यायण गृह्यसूत्र (मैसूर
राज्य संस्कृत ग्रन्थमाला १८१३ सन् तथा आनन्दाश्रम पूना सन् १८६४) ।
(३) गौतमपितृमेवसूत्र (कालेण्ड सर्पा० लार्डपेजिंग १८६६ सन्) ।
(४) गौतमस्मृति (स्मृतिसमुच्चय, पूना) ।

राणायनीय-शाखा सम्बन्धी इतने ग्रन्थों का वर्णन करके
डाक्टर कालेण्ड महाशय एक विचार उपस्थित करते हैं । वह इतना
आवश्यक है कि हम उस का अनुवाद दिये बिना नहीं रह सकते—

“ परन्तु इन सब ग्रन्थों का राणायनीय-शाखा सम्बन्धी होना
अनिश्चित ही है । कर्मप्रदीप पर आशार्क का भाष्य है । उस में वह
बताता है कि गोभिलसूत्र कौषीण्यों का ही गृह्यसूत्र नहीं प्रत्युत राणाय-
नीयों का भी है । हेमाद्रि भी अपने श्राद्धकल्प में तीन बार (पृ० १४२४,
१४६०, १४६८) गोभिल को राणायनीय सूत्रकृत् कहता है । यदि यह
वात मान लो जावे तो खादिरगृह्यसूत्र राणायनीयों का सूत्र नहीं रह
सकता । अस्तु, दक्षिण भारत में शारदूलों के एक खादिर गृह्यसूत्र
की विद्यमानता कही जानी है । (देखो Report on a search for
Sanskrit mss in the Bombay Presidency 1892-95, by
A. V. Kathavate Bombay, 1901, No. 79) । शारदूल भी
सामवेद की एक शाखा है । अब यही खादिर गृह्यसूत्र शारदूल
सामगों के खादिर सूत्र से कुछ पाठभेदों को छोड़ के प्राय मिलता

यताया जाता है। हेमाद्रि के काल में शार्दूल शाखा की ऐतिहासिक गृह्यशास्त्र अद्वैत थी, यह भी श्राद्धकल्प से ज्ञात होना है। उस में (पृ० १०७८) पर, यह वेद के उन भागों का उल्लेख करता है जो ब्राह्मणों के भोजन-समय शार्दूल-शाखा वालों को गाने चाहिये। अतएव यह स्पष्ट है कि कम से कम सादिरगृह्यसूत्र में मूलतः शार्दूलों सम्बन्धी गृह्यकर्म थे। परन्तु एक और ऐतिहासिक भी सादिरसूत्र सम्बन्धी है। मैसूर में १८८१ ई. में फण्टभूपरा भाष्य संहिता जो गृह्यरत्न रूपा है उस में अनेक चार गौतमगृह्यसूत्र का उल्लेख है। उस में जितने भी वाक्य गौतम के नाम से दिये गये हैं, वे सब हमारे सादिरगृह्यसूत्र में मिलते हैं। इस के अतिरिक्त जैसा हम पूर्व कह चुके हैं, हमारे पास एक गौतम पितृमेधसूत्र है, एक गौतम घर्मसूत्र (स्टैनज़लर सम्पा० छपदन १८७६) * और एक स्मृति भी है। ये सब गौतमों के ग्रन्थ भी हो सकते हैं कि जो सामवेद का गौण भाग है। ”

हम ने विद्वान् पाठकों के विचारार्थ श्री कालेश्वर-प्रदर्शित ये सब पत्र उद्धृत कर दिये हैं। अपनी सम्मति किसी और समय पर प्रकाशित करेंगे ॥

जैमिनीय शाखा ।

इस शाखा के निम्नलिखित ग्रन्थ अब तक प्रकाशित हो चुके हैं । (१) जैमिनीय संहिता (Dr W Caland's edition, Breslau, 1907) । (२) जैमिनीय-ब्राह्मण (इस के अनेक खण्ड इसस अटेंन ने पाश्चात्य अनुसन्धान पत्रों में प्रकाशित किये हैं। अन्य उपयोगी खण्डों का अधिकांश भाग ग्रन्थरूप में रूप गया है—Das Jaiminiya Brāhmana in Auswahal, Amsterdam, 1919) दृष्टबिधित सामग्री के अपर्याप्त होने से यह पृष्टद्वाराद्वय अभी पूरा नहीं रूप सका) । (३) जैमिनीय-उपनिषद्ब्राह्मण (अर्थात् गायत्र्युपनिषद्-

* इसके दो भारतीय सरकारण निकल चुके हैं (१) मैसूर (२) मद्रास ।

पूर्वोक्त ब्राह्मण का उत्तर भाग है। वृक्षस अटेल सम्पा० १८२४ सन्)
 (४) आर्षेय-ब्राह्मण (५० सी० घनेल सम्पा० मंगलोर १८७८)।
 (५) जैमिनीय श्रौतसूत्र अग्निष्टोम-प्रकरण (डी० गेस्ट्रा सम्पा०
 लार्डन सन् १९०६)* । (६) जैमिनीय-गृह्यसूत्र (edited by Dr.
 W. Caland, Amsterdam, 1905)*

जैमिनीय-ब्राह्मण ।

“शौनकादिन्यदहन्दसि।” ४।३।१०६ के गण में पाणिनि
 “तलवकार” शब्द पढ़ते हैं। इसी तलवकार श्रुषि के नाम पर
 तलवकार शाखा प्रसिद्ध थी। उसी का अर्थ जैमिनि-शाखा नाम
 हो गया है। इसका कारण अभी पूर्णतया ज्ञात नहीं। संहिता के
 समान ब्राह्मण को भी अर्थ जैमिनीय ब्राह्मण कहते हैं।

श्री शङ्कराचार्य केनोपनिषद् भाष्य के प्रारम्भ में लिखते हैं—
 “केनेपितम्” इत्याद्योपनिषत्पञ्चदशविषया धकध्वेति नवमस्या-
 ध्यायस्यारम्भः। प्रागेतस्मात्कर्माण्यशेषतः परिसमापितानि समस्त-
 कर्माश्रयभूतस्य च प्राणस्योपासगान्युक्तानि कर्माङ्गसामविषयाणि
 च। अनन्तरं च गायत्रसामविषय दर्शनं वशान्तमुक्तम्।”

(अर्थ) ‘केनेपितम्’ से आरम्भ होने वाली, पञ्चदशविषय के
 कहने वाली उपनिषद् कहीं जानी चाहिये। यह नवम अध्याय का
 आरम्भ है। इस से पूर्व (आठ) अध्यायों में यज्ञ कर्म पूरे कहे गये
 हैं। प्राणोपासना भी कही गई है। तत्पश्चात् गायत्रसाम और वंश
 कहा गया है।” तलवकार ब्राह्मण का यह वर्णन शङ्करने किया है।

जैमिनीयब्राह्मण जो सम्प्रति मिलता है उसका अध्यायक्रम

* जैमिनीय श्रौतसूत्र समग्र सभाध्य बड़ोदा राजकीय मन्थाला में
 शीघ्र ही छपेगा।

† जैमिनीय गृह्यसूत्र का कालेण्ड सम्पादित भारतीय संस्करण ला०
 मोतीलाल बनारसीदास सैयमिदा बाजार लाहौर द्वारा शीघ्र प्रकाशित किया जायगा।

शङ्कर-दर्शित अध्यायक्रम से विभिन्न है। प्रथम तीन अध्याय हैं। पश्चात् उपनिषद् ब्राह्मण आरम्भ होता है। उम में चार अध्याय हैं। वेन उपनिषद् चतुर्थाध्याय के अठारहवें खण्ड से आरम्भ होता है, और इहोसर्वे पर समाप्त हो जाता है। वंश इस से पूर्व ही समाप्त हो जाता है। सात खण्ड इस से आगे और हैं। सां सारे मिल् के ब्राह्मण के सात अध्याय होते हैं। यदि आपेय-ब्राह्मण भी मिला लिया जाये तो सारे आठ अध्याय होते हैं। सम्भव है और ग्रन्थ मिलने पर इस बात का निर्णय हो जाये।

उपनिषद् ब्राह्मण ।

उपनिषद् ब्राह्मण का टर्नस अटेल महाशय ने अमेरेकन ऑरिएण्टल मासायटी के जर्नलस १५ में रोमन-लिपि में सम्पादित किया था। मेरे पहने पर पण्डित रामदेव जी ने उसी से इस का देवनागरी संस्करण तय्यार किया था। वही अश्रयदां छापा गया है।

हस्तलिखित सामग्री ।

जिस हस्तलिखित सामग्री से अटेल ने अपना संस्करण तय्यार किया था उस का उल्लेख उस ने अपनी भूमिका में इस प्रकार दिया है—

A. वर्नेल के नोटानुमार जो लपेटने वाले फागज पर है, यह हस्तलेख "मखाधार हस्तलेख से नकल किया गया," १८७८ सन् में। अन्त में यह लिखता है "मूल की तिथि, बुद्धम १०४०=१८६४ सन्। पण्डित के हस्तलेख में।"

B. तालपत्रों पर लिखे ग्रन्थ से, लगभग ३०० वर्षपूर्व लिखा गया, तिथेखी से प्राप्त, परन्तु पहले अलेप्पी से खया गया था।" इस के पाठभेद ही दिये गये हैं।

C. वर्नेल के हाथ की रोमनलिपि में किया हुआ ग्रन्थ। यह १।१६ पर समाप्त हो जाता है।

A ग्रन्थ का पाठ और B के पाठभेद ग्रन्थाक्षरों में हरिचर्याय कागज पर हैं। ये प्रो० जानअवेरे द्वारा रामन में लिखे गये थे, जो फापी प्रो० ह्विटने ने मूल से मिला ली थी। उन्होंने C के पाठभेद भी दे दिये थे। इसी कापी से यह संस्करण तय्यार किया गया है। मूल अब इण्डिया आफिस लण्डन के पुस्तकालय में है।

हस्तलेखों में ऐसा शीर्षक है —

तत्त्वकारत्राहणे उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

अनुवाक, खण्ड और कण्डिकादि के विभाग विषय में श्रीअटेल ने यह लिखा है। “वाक्यों (कण्डिकाओं) के अङ्क देने में हस्तलेख असावधान और असङ्गत हैं। A, अनुवाक और खण्डविभाग नहीं देता, परन्तु प्रत्येक अध्याय की कण्डिकाओं पर क्रमशः अङ्क देता है। मैंने अनुवाक और खण्ड विभागों में B, और C, की अथवा कण्डिकाओं के अङ्कों में तीनों हस्तलेखों की साधारण अशुद्धियों और विलोपों का लिखना उपयोगी नहीं समझा। अध्याय २१ से A, और B, अङ्कों का नया प्रकार (कण्डिकाओं की समाप्ति पर) आरम्भ करते हैं। तथापि तीन पहली कण्डिकाएं (२१-३) छोड़ते हैं, और २४ को २ लिखते हैं। पर इस के पश्चात् नियमपूर्वक अर्थात् २५=५ इत्यादि, लिखकर तृतीय अध्याय के अन्त तक जाते हैं, ३४=५७। B, में अङ्क देने के एक और क्रम के भी अवशेष हैं। यहां तीसरे अध्याय की प्रथम तीन कण्डिकाओं पर और अङ्कों के साथ क्रमशः ५६, ५७ और ५८ लिखा है। B में ३१८ पर ७०, ३२२ पर ७२, ३३२ पर ७६ के अङ्क अधिक हैं। इन अन्तिम तीन अनुवाकों की गणना स्पष्ट ही इस अध्याय के प्रथम तीन से विभिन्न है। साथ ही मूल की कण्डिकाओं के क्रम से भी भिन्न है।

“तीनों हस्तलेख एकही सदीप मूल से आए हैं। तीनों में बहुत सामान्य भ्रष्टपाठ हैं। विराम, अक्षर-विन्यास और सन्धि-सम्बन्धी

घातों में भी वे असावधानी से लिगे गए हैं। मैंने इन घातों के ठीक करने में स्वतन्त्रता घती है। सब स्थलों में, जो केवल अक्षर-विन्यास सम्बन्धी नहीं हैं, मैंने हस्तलेखों के पाठ भेद पृष्ठ के नीचे दिये हैं। निर्देशों की सरलता के लिये मैंने प्रत्येक अध्याय में निरर्थक अनुवाक विभाग का ध्यान न करते हुए क्रमशः खण्डाङ्क दे दिया है। हस्त लेखों में फिडकाओं पर कोई अङ्क नहीं तथापि मैंने यह दे दिया है।

अमरेकन सस्करण के अन्न में अटेल महाशय ने चार सूचिया दी हैं। [१] आवश्यक शब्दों और ऋषि नामों आदि की सूची। [२] निर्वचनों की सूची। [३] व्याकरण सम्बन्धी प्रयोजनीय स्थल। [४] उद्धरणों की सूची। हमने प्रथम सूची में से ऋषि नाम पृथक करके उनकी सूची दे दी है। अन्य शब्दों का इस लिए नहीं दिया कि दयानन्द महाविद्यालय के अनुसन्धान विभाग की ओर से उपलब्ध ग्रन्थों आदि की एक विस्तृत सूची तय्यार हो रही है। उसमें ये शब्द और अन्य शब्द भी आवेंगे, अतः उनको यहाँ छापना आवश्यक नहीं समझा। सूचिया (२) और (४) भी हमने दे दी हैं। तीसरी का हम आर्यावर्तीय पण्डितों के लिए अनावश्यक समझते हैं।

प० रामदेव ने पाठभेदों को देने के लिये A.B.C के हृषाले नहीं दिये। सो आवश्यक होने पर भी यह रह गये हैं। पहले फार्मों में उन्होने Omitted के स्थान में 'ओम' दिया था। मैंने आगे चल कर उस के स्थान में संस्कृत शब्द 'नास्ति' कर दिया है। यह संस्कृत शब्द हाने से पतदेशीय जनों के लिये अधिक उपयोगी है। अटेल ने प्रत्येक स्वर सन्धि पर 'कामे' का चिह्न दिया हुआ था। रामदेव जी ने उस के स्थान में '३' चिह्न दे दिया था। संस्कृत में यह अनावश्यक है अतः दूसरे फार्म से मैंने इसे भी हटा दिया है ॥

जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मण के सम्बन्ध में विशेष वक्तव्य ।

जैसा पूर्व लिखा जा चुका है, यह ब्राह्मण, वृहद् जैमिनीय ब्राह्मण का एक भागमात्र है । इस का मूल नाम "गायत्र उपनिषद्" है । जै० उ० ब्रा० ४। ७ के अन्त में यही नाम आया है । यह नाम है भी सार्थक, क्योंकि इन सारे अध्यायों में गायत्र साम का ही वर्णन है । उसी से अमृत अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति जताई गई है । जै० उ० ब्रा० ३।४० के आरम्भ में यही कहा गया है—

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन
देना एतेनर्षयः ॥१॥

अर्थात् वह यही अमृत गायत्र (साम) है । इसी से प्रजापति मुक्त हुआ, इसी से (अन्य) विद्वान्, इसी से मन्त्रार्थ द्रष्टा (ऋषि) ।

इस ब्राह्मण में दो स्थलों पर अर्थात् ३।४०-४१॥ और ४।१६, १७॥ पर दो वंश परम्पराएँ आई हैं । अन्तिम वंश परम्परा पहली से कुछ ही अन्य नाम रखती है । यह है भी छोटी । पहली का आरम्भ 'ब्रह्म' से होता है । (१) ब्रह्म ने (२) प्रजापति के लिये । उसने (३) परमेष्ठी के लिये । उसने (४) देवसविता के लिये इत्यादि ।

शतपथब्राह्मण (माध्यन्दिन) में भी दशम काण्ड की समाप्ति पर और चौदहवें काण्ड के अन्त से कुछ पहले दो ऋषि वंश-वर्णनाएँ आई हैं । पूर्वली में बताया गया है कि स्वयम्भु ब्रह्म ने प्रजापति को विद्या पढ़ाई, और उत्तरली में कहा है कि परमेष्ठी को । जै० उ० ब्रा० में एक रूप से इन दोनों का मेल है । अर्थात् ब्रह्म, प्रजापति, और परमेष्ठी यद्यपि समकालीन थे, तथापि गायत्र साम का रहस्य ब्रह्म ने स्वयं परमेष्ठी को नहीं बताया, प्रत्युत यह उस तक प्रजापति द्वारा आया ।

जैमिनीय ब्राह्मण कोई नया ब्राह्मण नहीं ।

शतपथ ब्रा० के द्वि० वय में ब्रह्म से लेकर अपने आप (धय) तक ६८ नाम हैं । जै० उ० ब्रा० के प्रथम वय में ब्रह्म से लेकर वैपदिचत दा० गुप्त लौहित्य तक ५० नाम हैं । प्रत्येक ब्राह्मण के सब वशों को मिला कर और यदि कुछ नाम छूट गये हैं तो उनका स्थान छेड़ कर भी ब्रह्म से ऋषियों की एक जैसी सत्त्वा हुआयगी। इस से प्रतीत होता है कि आर्यावर्ष के इतिहास में ब्राह्मणों के सकलन का समय प्राय एक ही था । ब्रह्मा से जो अनेक विचार्ये अनेकों कुलों में चली आई थीं, वही इतिहासयुक्त करके प्राय एक काल में एकत्र कर ली गईं । जैमिनीय ब्राह्मण भी उसी समय सकलित हुआ ।

जब यह ग्रन्थ छप रहा था, तब श्रीमान् कालेण्ड महाशय ने मुझे पत्र लिखा कि ये अर्टेक के कई पाठ शुद्ध कर देंगे । तब मैंने उन्हें मुद्रित ७२ पृष्ठ भेज दिये थे । उन्होंने उनके हाशिये पर सशोधन कर दिया है । वह नृमिवा के अन्त में छाप दिया गया है । अगले पृष्ठों का सशोधन फिर सभी छपा जायगा । इस परिश्रम के लिए जो उन्होंने स्वयं मेरा, ध्यान उधर खेंच कर किया है, मैं उन पर अत्यन्त अनुगृहीत हू ।

इस ग्रन्थ के मूफ प० विश्वबन्धु एम० ए० शास्त्री, तथा प० हसराम पुस्तकाध्यक्ष लाबचन्द पुस्तकालय ने देखे हैं । इन दोनों महाशयों का भी मैं वृत्तत हू ।

परमदयामय भगवान् अपनी टपा से इन हृदय पात्रक ग्रन्थों के प्रचार में मेरी सहायता करें । इत्योम

दयानन्द महाविद्यालय
लाबचन्द पुस्तकालय लाहौर
प्राय, सकान्ति स० १९७७

भगवदत्त

श्री कालेरुड-प्रदर्शित सट्टिप्पण पाठ संशोधन ।

पृ०	पंक्ति	प्रकाशित पाठ	संशोधित पाठ
३,	१२	०त्तिच्यादेवमे०	सिच्येत्तैवमे०
५,	१	हेऽपा खला	हेपाखला
५,	७	उतेपा खला	उतेपाखला
५,	११	०प्रति यस्य	प्रत्यस्य
हस्त ले० पाठ शुद्ध है । देखो पाठ भेद ।			
७,	६	लोष्टो	लोष्टो
८,	१	ळयित्वा पनि०	ळयित्वापनि०
८,	६	चघञं	चवृजे*
८,	६	बहुभूं०	बहोभूं०
११,	१२	यं वेद०	वावेद०
१६,	४	यदनृते	यदनृचे
१७,	८	देवा	देवाः
१७,	८	कस्मादु	कस्मा उ
२०,	६	०सप्ताहोरात्रा	सप्त होराः
३४,	१५	अभिपर्यक्त	अभिपर्यस्त
३७,	३	उच्चा	[उच्चा]
३७,	८	ह चे०	ह [स्म] चे०
४०,	२	तद्यद्वै	यद्यद्वै
४६,	१	प्रजापतिर्वा वेद अत्र	प्रजापतिर्विदमत्र
४६,	१२	मुनोति	सनोति
५३,	२	०सर्क	०सर्क
५३,	४	०यतन	०यतना †
५८,	३	०पुनीध्वं न पूना वै	०पुनीध्वमपूना वै
६०,	१५	ययाच ‡	पपाच or पपच

* The mss (Grantha) have चवृज or चघञ which nearly is the same in Grantha. If the Sandhi is effaced we ought to return चवृजे ।

† इदमायतना is a bahuvrīhi compound, पाठभेद जो नीचे दिया है, यह ठीक है ।

‡ Must be corrupt.

शुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
मू० ४	५	सिंहि०	सहि०
" ६	८, ६ ६ ११	अग्नि	सूर्य
२६	१३	०सा	०सा—
२४	१	यत्पर मद्०	यत्परतद्०
३८	३	शामूल प०	शामूलप०
५४	१३	श्रय स	श्रेयस
६३	०	एन वि०	एवनि०
१००	१५	०म्य	०म्य—
१०६	१४	वाड	वाड्
२०७	१५	० पाशाँ	० पानाँ
१११	७	युप्यागु	युप्यागु
११३	११	ग्ना	ग्ना
१३६	३	०मपृणाति	स्पृणाति
१४०	६	म्यगम्य	स्वर्गस्य
१४६	६	चुक्क	चुक्क

जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

जैमिनीय-उपनिषद्-ब्राह्मणम्

प्रजाभतिर्वा इदं त्रयेण वेदेनाऽजयद् यदस्येऽदं जित
 तत् ॥ १ ॥ स ऐक्षतेऽत्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन यद्यन्त
 इमां वाव तेजिति जेष्यन्ति येऽयम्मम । हन्त त्रयस्य वेदस्य रस-
 मादत्रा इति ॥ २ ॥ स भूरित्येवर्ग्वेदस्य रसमादत्त । सेऽयम्पृ-
 थिव्यभयत् । तस्य यो रसः प्राणोदत्त सोऽग्निरभवद्रसस्य रसः
 ॥ ३ ॥ भुव इत्येव यजुर्वेदस्य रसमादत्त । तद्विदमन्तरिद्यम-
 भवत् । तस्य यो रसः प्राणोदत्त स वायुरभवद्रसस्य रसः ॥ ४ ॥
 स्वरित्येव सामवेदस्य रसमादत्त । सौऽसौ धौरभवत् । तस्य यो
 रसः प्राणोदत्त स आदित्योऽभवद्रसस्य रसः ॥ ५ ॥ अथेऽक्षस्ये-
 ऽथाऽक्षरस्य रसं नाऽशक्रोदादातुष ओषित्येतस्यैऽव ॥ ६ ॥
 सेऽयं वागभवत् । ओमेव नामेऽपा । तस्या उ प्राण एव रसः ॥ ७ ॥
 तान्येतान्यतो । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्र साम । द्रक्ष उ गायत्री ।
 तद् उ वावाऽभिसंपद्यते । अष्टाशक्ताः पशवस्तेनो पशव्यम ॥ ८ ॥ १, १
 प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स यद् ओमिति सो-ग्निर्वागिति पृथिव्योमिति वादुर्वा-
 गित्यन्तरिक्षे मित्यादित्यो वागिति द्यौरोमिति प्राणो वागित्येव
 वाक् ॥ १ ॥ स य एतं त्रिद्वानुद्गायत्योमित्येवाऽग्निमादाय पृथि-
 व्याम्प्रतिष्ठापयत्योमित्येव वादुर्मादायाऽन्तरिक्षे प्रतिष्ठापयत्यो-
 मित्येवाऽदित्यमादाय दिवि प्रतिष्ठापयत्योमित्येव प्राणमादाय
 वाक् प्रतिष्ठापयति ॥ २ ॥ तद्वैऽनच्छैलनां गायत्रं गायन्त्यो-
 वा ३ च् ओवा ३ च् ओवा ३ च् हुम्मा ओवा इति ॥ ३ ॥ तद् इ
 तत्पराद् इवाऽनायुष्यम इव । तद्वायोश्चाऽपां चानुवर्त्य गेयम् ॥ ४ ॥
 यद्वा वायुः पराद् एव पवेत क्षीयत (स) । स पुरस्ताद्वाति स
 दक्षिणतस्स पश्चात्स उत्तरतस्स उपरिष्ठात्स सर्वा दिशोऽनुस-
 वाति ॥ ५ ॥ तदेतद्वाहुरिदानीं वा अयमितोऽवासीद्व्येऽस्थाद्वाती
 ऽति । स यद्रेष्माणं जनमानो निवेष्टमानो वाति क्षयादेव विभ्यत्
 ॥ ६ ॥ यद्वा इवा आपः पराक्षीरेषु प्रसृतास्स्यन्देरन् क्षीरेस्ताः ।
 यदद्वाक्षि कुर्वाणा निवेष्टमाना आरतान् यजमाना यन्ति क्षयादेव
 विभ्यतीः । तदेतद्वायोश्चैवाऽपां चाऽनुवर्त्य गेयम् ॥ ७ ॥ १, २ ॥
 प्रथमेऽनुवाके द्वितीय खण्डः ।

२. १ अन्ततीक्ष्णः । २ आवा । ३ वाची । ४ उक्त्वा, क्षीय- । ५
 च । ६ पराद्, पुराद् । ७ विभ्यत् । ८ क्षीय । ९ यजमानां, जमानां ।
 १० यम् ११ दयद्, यद् १२ अद्वाक्षि ।

ओवा ओवा ओवा हुम्भा ओवा इति करोत्येव । एताभ्यां
 सर्वमायुरेति ॥ १ ॥ स यथा वृत्तमानमैण^३रानममाण इयादे-
 वमेवैऽते द्वे-द्वे देवते संघायेऽमां लोकान् रोहन्ते ॥२॥ एक उ
 एव मृत्युरन्वेत्यशनयैऽव ॥ ३ ॥ अथ हिङ्करोति । चन्द्रमा
 वै हिङ्कारोऽन्नमु वे चन्द्रमाः । अन्नेनाऽशनयां ग्रन्ति ॥ ४ ॥
 तां-तामशनयामन्नेन हत्वोऽमित्येनमेवाऽऽदित्य^५समयाऽतिमुच्यते ।
 एतदेव दिवश्छिद्रम् ॥ ५ ॥ यथा खवाऽनस^६स्त्यत्^७रस्य वैऽवमे-
 तदिवश्छिद्रम् । तद्रश्मिभिस्सच्छन्नं दृश्यते ॥ ६ ॥ यद्वायवस्योऽऽ-
 धीं हिङ्कारात्तदमृतम् तदात्मानं दध्यादयो यजमानम् । अथ
 यदिरात् सामोऽऽन्व तस्य प्रतिहारात् ॥ ७ ॥ स यथाऽद्विरा-
 पस्नवृज्येत् यथा ऽग्निनाऽग्निस्संसृज्येत यथा क्षीरे क्षीरमा-
 सिव्यादेऽमेवैऽनदक्षरमेताभिर्देवताभिस्संसृज्यते ॥ ८ ॥ १, ३ ॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीय खण्ड ।

तं वा एतं हिङ्कारं हिम्भा इति हिङ्कुर्वन्ति । श्रीर्षे भाः ।
 असौ वा आदित्यो भा इति ॥ १॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु गभे

३. १ अच २ ऐच् ३ अक्रम ४ इति ५ त्या, त्य ६ नस ७ रसस्य
 ८ अ ९ त्यद्, तद् (?) १० रान् ।

४. १ अच् २ गभ ।

इति । यद्ग इति स्त्रीणाम् उजनन निगच्छति तस्मात्तो ब्राह्मण
 ऋषिफलो जायतेऽतिव्यार्थो राजन्यश्चरः ॥ २ ॥ एत इ वा
 एत न्यङ्गमनु वृषभ इति । यद्ग इति निगच्छति तस्मात्तः पुरयौ
 वलीनिर्दो दुहाना धेनुस्त्रा दशमार्जी जायन्ते ॥ ३ ॥ एत ह वा
 एत न्यङ्गमनु गर्दभ इति । यद्ग इति निगच्छति तस्मात्स पापीया-
 ऽङ्ग्रेयमीषु उगनि तस्मादन्य पापीयसश्रेयो जायतेऽश्वतरो वा-
 ऽश्वतरी वा ॥ ४ ॥ एत ह वा एत न्यङ्गमनु कुश्र इति । यद्ग इति
 निगच्छति तस्मात् साऽन्तर्यस्तनपिराज्ञः पत्न्याति ॥ ५ ॥ तद्दे-
 जनमेके हिङ्कारं हिं वा औसा इति रहिर्देव्यं हिङ्गुर्नन्ति । रहिर्धं
 ऽव वे श्रीः । श्रीर्वा सातो हिङ्कार इति ॥ ६ ॥ स य एत तत्र
 म्रूपाद्ग्रहिर्गन्वा अय श्रियमवित पापीयान् भविष्यति १ ।

स यदा वै श्रियतेऽथाऽग्नौ प्रास्तो भवति ।

क्षिमेऽतमरिष्यत्यग्नौऽनम्भासिष्यन्ति" इति तथा हैऽत्र स्वात्
 ॥ ७ ॥ तस्माद् है त हिङ्कारं हिं वो इत्यन्तरि वैऽवाऽऽत्मन्न-
 र्जयेत् । तथा ह न ग्रहिर्वा श्रियं कुरुते मर्ममायुरेति ॥ ८ ॥ १, ४
 प्रथमेऽनुवाके चतुर्थे खण्डे ।

४ ३ श्रिय ४ जायते इति ५ यत् ६ य ७ इति अधिक ८
 नाख्यत्स नाख्यस ९ अमो ग्रहिष्यत तत्र प्रयाद् १०
 रहिर्देवे अमो । ११ यतीऽति

ता हेऽपा खला देवताऽपमेधन्ताऽतिष्ठति । इदं वै त्वमत्र
 पापमरुर्गोऽहेऽऽप्यासि । यो धं पुरयकृत् स्यात् स इहेऽयादिति
 ॥१॥ स हूयादपश्यो वै तां तद्यदहं तदकरवं तद्वै मा त्वं नाऽका-
 रयिष्यस्त्वं वै तस्य ऊर्ताऽगीति ॥२॥ सा ह वेदसत्यम्माऽऽहे-
 जति । सत्यं हेऽपा देवता । सा ह तस्य नेऽऽशे यदेनमपसेधेव
 सत्यमुपेऽग्रहयते ॥ ३ ॥ अथ होऽवाचैऽऽश्वाकां वा वार्ध्णो-
 ऽनुवक्ता वा सात्यकीर्तं जैपां खला देवताऽपसेदधुमेव ध्रियतेऽ-
 म्ये दिशः ॥ ४ ॥ [तद्] दिवोऽन्तः । तदिमे यावापृथिवी
 भंभिलप्यतः । यावती धं वेदिस्तावतीऽयम्पृथिवी । तद्यत्रैस्तच्चा-
 त्वान् खान् तत्सम्नति स दिव आकाशः ॥ ५ ॥ तद्दहिष्यमाने
 स्तृपमाने मनसोऽद्गृहीयात् ॥ ६ ॥ स ययोऽच्छ्रायम्प्रति यस्य
 प्रपश्येतेऽपमेधैतया^{१२} देवतयेदममृतमभिषर्येति यत्राऽयमिदं तपती-
 ति ॥ ७ ॥ अथ होत्राय—॥ ८, १, ४ ॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चम. खण्ड ।

गोपलो वार्ध्णः क एतमादित्यमर्हति समयैऽनुम् । दूरादा एष
 एतत् तपाति न्यद् । तेन वा एतम्पूर्वेण सामपथस्तदेव मनसा-

१. १ 'जति' अधिक २ त्वद् ३ अर्कं ४ स ५ सत्यम्महे ६ मतम्
 ७ चको ८ सत्यकीर्त ९ अ १० धृय ११ प्रत्यस्य १२ जतय ।

दृत्पयोऽपरिष्ठा देतस्यैऽस्तस्मिन्नमृते निदध्यादिति ॥ १ ॥ तद् उ
 होराच शाश्वायनिस्समयैऽवाऽतदेनं कस्तद्वेद । यचेता भापो वा
 अभितो यद्रायुं वा एष उपद्वयते रश्मीन्वा एष तदेतस्मिं व्यूह-
 तीति ॥ २ ॥ अयं होऽग्गर्वाऽच्युत्स्यौ जानश्रुतेयो यत्र वा एष
 एतद् तपत्येतदेवामृतम् । एतच्चैद्रे भामोति ततो मृत्युना पाप्मना
 व्यावर्तते ॥ ३ ॥ कस्तद्वेद यत्परेणाऽऽदित्यमन्तारिक्षामिदमना-
 नयनमारेण ॥ ४ ॥ अथैज्जडेनाऽमृतम् । एतदेव मा यूयम्भाप-
 यिष्यथ । एतदेवाह नातिमन्य इति ॥ ५ ॥ तान्येतान्यष्टौ ।
 अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्मा-
 भिसम्पद्यते अष्टागफाः पश्चास्तेनो पशच्यम् ॥५॥ १, ६ ॥

प्रथमेऽनुगके षष्ठ खण्ड ।

ता एता अष्टौ देवताः । एताश्चिदं सर्वम् । ते []
 करोति ॥ १ ॥ स नैतु लोकेषु पाप्मने भ्रातृव्यापारराश
 कुर्यात् मनसैव निर्भजेत् ॥ २ ॥ तदेतद्वचाऽभ्यनुच्यते ।

“चत्वारि वारु परिभिता पदानि
 तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः ।

६. १ वाऽप २ तप, त ३ स्थैऽ अयो ५ अमो ६ऽवाचा (१) उलुक्च्ये,
 उलुस्यो ७ बत् ८ परोक्ष ९ अन्विष्य १० त, प्राविष् ११ यत् ।

गुहा त्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ति

तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति” इति ॥३॥

तद् यानि तानि गुहात्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ती (ऽती) ऽम एव
ते लोकाः ॥४॥ तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्तीति । चतुर्भागे द्वे
तुरीयं वाचः । सर्वयास्य वाचा सर्वैरभिलो वैस्सर्वेखास्य कृतम्भ-
वाति य एवं वेद ॥ ५ ॥ स यथादमानमास्वणमृत्वा लोष्टो विध्वं-
सत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्रांसमुपवदाते ॥ ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

अ.मोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

मजापातिर्वा इदं त्रयेण वेदेनाऽजयद्यदस्येद जितं तत् ॥१॥
त ऐततेत्यं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन यक्ष्यन्त इमां वाव ते
जितिं जेष्यन्ति येऽयम्मम ॥ १ ॥ हन्तेऽमं त्रयं वेदम्पीळयानीति
॥ ३ ॥ स इमं त्रयं वेदमपीळयत् । तस्य पीळयःनेव मेवाक्षरं ना-
शयन्नात् पीळयितुमोमिति यदेतत् ॥ ४ ॥ एष उ ह वाव सरसः ।
सरसा ह वा एवंविदस्त्रयीविद्या भवति ॥ ५ ॥ स इमं ररुम्पी-

७. १ तानि २ नो, भोम ३ गयन्ति ४ तानि ५ धोम ६ कृत्वा
७ लोष्टो ८ भोम एवम् विध्वंसते ९ स एषो...उपवदन्ति ।

१. ने १—दा, द ३.—को ४ द्रवं ।

छयित्वा पनिधायोऽऽर्ध्वोऽद्रवत् ॥ ६ ॥ तं द्रवन्तं चत्वारो देवाना-
 मन्वपश्च रन्निन्द्रश्चन्द्रो रुद्रस्समुद्रः । तस्मादेते श्रेष्ठः देवानाम् एते क्ष-
 नमन्वपश्यन् ॥ ७ ॥ स योऽयं रस आसीत्तदेव तपोऽभवत् ॥ ८ ॥
 त इमं रसं देवा अन्वैक्षन्त । तेऽभ्यपप्यन्त स तपो वा अभूदिति
 ॥ ९ ॥ इममु वै त्रयं वेदम्मरीच्यित्वा तस्मिन्नेतदेवात्तरमपीळित-
 मविन्दन्तोमिति यदेतत् ॥ १० ॥ एष उ ह वाय सरसः । तेनै-
 नम्मायुवन् । यथा मधुना लाजान् प्रयुयादेवम् ॥ ११ ॥ तेऽभ्य-
 तप्यन्त । तेषां तप्यमानानामाप्यायत वेदः । तेऽनेन च तपसाऽपीनेन
 च वेदेन तामु एव जितिमजयन् याम्प्रजापतिरजयत् । त एते सर्व
 एव प्रजापनिमात्रा अयाश्म अयश्म इति ॥ १२ ॥ तस्मात्तप्यमा-
 नस्य भूयसी कीर्तिर्भवति भूयो यशः । स य एतदेवं वेदैवमेषा-
 ऽपीनेन वेदेन यजते । यदो याजयत्पेयमेवाऽपीनेन वेदेन याजयति
 ॥ १३ ॥ तस्य हेतस्य नैव काचनाऽर्तिरस्ति य एतं वेद । स
 य एयैनुप्रवृत्तिं सार्तिमृच्छति ॥ १४ ॥

छिन्नी वेऽनुप्राके प्रथम. अण्ड. ।

पु. होरे द. अगे ७ खेन = अन् एव ६ तेष्वय १०-अयन्त-११
 पीळित, ता १० ता १३ प्राय १४ ययाद् १५ तैव हो १७
 तेनै १६ यत् १०-यत् १७ अश्म १८ अ न यजते तपो-वेदो
 २० एव अतो ११-ति २२ अर्ति मृच्छति २३ सार्ति मृ-

तदाहुर्द्यदोवा^१ ओवा इति गीयते कार्त्रभवति क सामेति ॥१॥ ओम
 इति वै साम वागिन्यृक् । ओमिति मनो वागिति वाक् । ओमिति
 प्राणो वागित्येव वाक् । ओमिर्वा २ वागिति सर्वे देवाः । तदे-
 तदिन्द्रो^३ सर्वे देवा अनुयन्ति । ३ ओमित्येतेदेवाक्षरम् । एतेन
 वै संसवे परस्येन्द्रं वृञ्जीत^४ । एतेन ह वै तद्ददौ दालभ्य आजके-
 शिनोमिन्द्रं ववर्ज^५ । ओगिन्येतेनैवाऽऽनिनाय^६ ॥३॥ तान्येतान्यष्टौ ।
 अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साग । वृष्ट उ गायत्री । तद्गु जह्वाभिसाम्प-
 यने । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥४॥ तस्यैतानि नामानीन्द्रः
 कर्माक्षितिरमृतं ज्योमान्तो वाचः । बहुर्भृयस्सर्वे सर्वस्मा-
 दुत्तरं ज्योतिः । ऋतं सत्यं विज्ञानं विवाचनमप्रतिवाच्यम्^७ । पूर्व
 सर्वं सर्वा वाक् । सर्वमिदमपि धेनुः पिबते परागर्वाक् ॥५॥१॥६॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

सा^१ पृथक्सन्निभं कामदुयाक्षिति प्राणसाहितं चक्षुश्श्रोत्रं^२
 वाक्प्रभृतम्मनसा व्याप्तं हृदयाग्रं म्नाक्षणभक्तं मन्त्रशुभं वर्षपवित्रं

१. षया । २ ओजात (=ओजा ३?) ३. ऋग् ।

४. अहुञ्ज-१५-शीन्-शिन-१६. ववर्ज ।

७ धनिनाय (८-६: क्षिति । ९-हित । १०. विजिज्ञा-११-खः ।

१ सा । २-क्षुश्रोत्र-१३-दयोत्र-१४. अक्षरम्, अक्षरम्, भृत्रम् ।

गोभग म्पृथिव्युपरं तपस्तनु वरुणपरियतनमिन्द्रश्रेष्ठं सहस्राक्षर-
 मनुतपारममृत दुहानां सर्वान् इमोलो कानभिश्चरतीऽति ॥१॥
 तदेतन् सत्य मक्षर यदोम इति । तस्मिन्नापः प्रतिष्ठिता अम्भु
 पृथिवी पृथिव्यामिमे लोकाः ॥२॥ यथा मूच्या पनाशानि
 सन्तृणानि स्युरेवमेतेनाक्षरेशोमे लोकास्सृणगाः ॥३॥
 तदिदमिमान् अतिविभ्य दशधा क्षरति शतधा सदमथाऽद्युतथा
 मधुतथा (नियुतथा) ऽर्बुदथा न्यर्बुदथा^{१०} निरर्बुदथा^{११} पद्ममत्तिनि-
 व्योमान्तः ॥४॥ यथाऽग्रे विष्यन्दमानः परः-परोऽरीयान् भव-
 त्येवमेवैतदक्षरम्परः-परोऽरीया^{१२} भवति ॥५॥ ते ह्येते^{१३} लोका
 ऊर्वा एव श्रिताः । इम एव त्रयोदशमासाः ॥६॥ स य एव
 विद्वानुद्गायति स एवमेवैतोलोवानातिवहति । ओमित्येतेनाक्षरेणा-
 मुमादित्यम्मुख आधत्ते । एष ह या एतदक्षरम् ॥७॥ तस्य^{१४}
 सर्वमाप्तम्भरति सर्वं जित न दाऽम्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति
 य एव वेद ॥८॥ तद्ध पृथुर्वेन्या^{१५} दिव्यान् त्रात्यान् पश्यन्ह ।

१ पर्यन्त-। ६-। ७ ओमिति । ८-म्भु । ९ आम, 'इद्' और
 दशधा के मध्य स्थान रिक्त है । १०-निर्बु-। ११-निर्बुदथा, तिसर्वदात् ।
 १२-नाम् । १३-ओम् । पर परो ॥१४-ते । १५-तस्मि । १६-वस्य । १७-वे ।

स्थूणां दिवस्तम्भनीं सूर्यं माहुरन्तरिक्षे सूर्यः

पृथिवीप्रतिष्ठः । अस्सु भूमीरिशिशियरे^{१८} भूरिभाराः^{१९}
किं स्विन्महीरधितिष्ठन्त्याप इति ॥ ६ ॥ ते ह
प्रत्यूचुम्

● स्थूणामेव दिवस्तम्भनीं सूर्यं माहुरन्तरिक्षे
सूर्यः पृथिवीप्रतिष्ठः । अस्सु भूमीरिशिशियरे^{१८} भूरि-
भारास्सत्यम्महीरधितिष्ठन्त्याप^{२०} इति ॥ १० ॥

ओमित्येतदेवाक्षरं सत्यम् । तदेतदापोऽधितिष्ठन्ति ॥ ११ ॥ १११० ॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । द्वितीयांऽनुवाकस्समाप्तः ।

— ०: —

प्रजापतिः प्रजा असृजन । ता एनं यष्टा अन्नकाशिनरिभित-
स्समन्तम्पर्यविशन् ॥१॥ ता अब्रवीत् किंकायास्स्येति । अन्नाय-
काया इत्यब्रुवन् ॥२॥ सोऽब्रवीदेकं वै वेदमन्नायमसृत्ति^१ सामैव ।
तद्वः प्रयच्छानीति । तन्नः प्रयच्छेत्पब्रुवन् ॥३॥ सोऽब्रवीदिमान्वै
पशून् भूयिष्ठमुपजीवामः । एभ्यः प्रयमम्मदास्यामीति ॥४॥
तेभ्यो हिङ्गारम्प्रायच्छत् । तस्मात्पशवो हिङ्गारिकतो^५ विजिज्ञास-

१८-मिश्र । १९ शिशियरे । २० अथित् ।

१. या । २. पाम- । ३. पृथ- । ४ -रुतो ।

माना इव चरन्ति ॥५॥ प्रस्तावम्भुष्येभ्यः । तस्माद्बु ते रतुवत^५
 इवेदम्मे भविष्यत्यदो मे भविष्यतीऽति ॥६॥ शार्दिं दयोभ्यः ।
 तस्मात् तान्पाददानान्बुषापपातमिव चरन्ति ॥७॥ उद्गीथं देवेभ्यो
 ऽमृतम् । तस्मात्तेऽमृताः ॥८॥ प्रतिहारमारण्येभ्यः पशुभ्यः ।
 तस्मात्ते प्रतिहतास्तन्तस्यमाना^६ इव चरन्ति ॥९॥ १ । १५ ॥ ●

तृतीयेऽनुवाके प्रथम खण्ड ।

उपद्रव गन्धर्वाप्सरोभ्यः । तस्मात्त उपद्रव गृह्णन्त इव
 चरन्ति ॥१॥ निधनम्पितृभ्यः । तस्माद्बु ते निधनसस्थाः ॥२॥
 तद्यदेभ्यस्तत् साम प्रायच्छदेतमेभ्यस्तदादिस्थम्प्रायच्छत् ॥३॥
 स यदनुदितस्सहिद्भारोऽधोदितः^२ प्रस्ताव आसगवमादिर्मान्यन्दिन
 उद्गीथोऽपराहणः प्रतिहारो यद्बुपाल्लमय लोहितायाति स उपद्रवो
 ऽस्तमित एव निधनम् ॥४॥ स एष सर्वैर्नोवैस्समः । तद्यदेप
 सर्वैर्नोवैस्समस्तस्मादेप एव साम । स ह वै सामावित्र स साम
 वेद य एव वेद ॥५॥ ते ऽद्युयन् दूरे वा इदमस्मत् । तत्रेद कुरु

५ स्तुवतेव । ६ प्रतिहतास्त । ७ तावु (?) स्त (!) यमाना
 तातास्यमाना ।

१-आपसरेभ्य । २ अधोदित । ३ आदित्य । ४ द्वियार 'स सामवेद'
 वेता हे ।

यत्रोपजीवामेति ॥६॥ तद्वनभ्यत्यनयत् । स वसन्तमेव हिङ्गार-
 मकराद्ग्रीष्मप्रस्ताव वर्षासुदीथ शरदम्प्रतिहार हेमन्त निधनम् ।
 मासार्थमासावेव सप्तमावकरोत् ॥७॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावेतर्हि ।
 तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥८॥ तत् पर्जन्यमभ्यत्यनयत् । स
 पुरोयातमेव हिङ्गारमकरोत् ॥९॥ १ । १०॥

तृतायऽनुवाके द्वितीय खण्ड ।

जीमूतान् प्रस्ताव^१ स्तनयित्नुमुदीथ विद्युतम्प्रतिहार^२ वृष्टि^३
 निधनम् । यद्गृष्टान्प्रजाश्चोपप्रयश्च जायन्ते ते सप्तम्यावकरोत्
 ॥१॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावेतर्हि । तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥२॥
 तद्यज्ञमभ्यत्यनयत् । स यजूष्येव हिङ्गारमकरोत्तृचः प्रस्ताव
 सामान्युद्गीथ स्तोमम्प्रतिहार छन्दो निधनम् । स्वाहाकारवपद्-
 कारावेव सप्तमावकरोत् ॥३॥ तेऽब्रुवन् नेदीयो न्वावेतर्हि । तत्रैव
 कुरु यत्रोपजीवामेति ॥४॥ तत्पुरुषमभ्यत्यनयत् । स मन एव
 हिङ्गारमकरोद्वाचम्प्रस्तावम्प्राणमुद्गीथ चक्षुःप्रतिहार श्रोत्रनिधनम्
 रेवश्चैव प्रजा च सप्तमावकरोत् ॥५॥ तेऽब्रुवन्नत्र वा एनत्तद-

१-म इति । ६ कर्- । ७ प्रस्ताव । वर्षा उद्गीथ , शरदप्रतिहार
 ग्राम शरदप्रतिहारम् ।

१ प्रस्तावप्रथम । २-निर्ग । ३सप्तमम्- । ४म इति । ५ अभ्यत्यन-

कर्यत्रोपजीविष्याम इति ॥६॥ स रिद्यादहमेव सामास्मि मग्येता
देवता इति ॥७॥ १ । १३॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीये खण्ड ।

न ह दूरे देवतस्स्यात् । यावद् वा आत्मना देवानुषान्ते
तावदस्मै देवा भवन्ति ॥ १ ॥ अथ य एतदेवं वेदाऽहमेव
सामाऽस्मि मग्येतारसर्वा देवता इत्येवं हाऽस्मिन्नेतास्सर्वा देवता
भवन्ति ॥२॥ तदेतदेवश्रुत्साम । सर्वा ह वै देवताश्च्यवन्त्येवं-
विदम्पुण्याय साग्ने । ता एनम्पुण्यमेव साधु कारयन्ति ॥ ३ ॥
स ह स्माऽऽह मुचिच्छशैलनौ षो यज्ञकामो मामेव स षुणीताम् ।
तत एवैऽनं यज्ञ उपनंस्यति । एवविद तुद्रायन्तं सर्वा देवता
अनुसंतृप्यन्ति । ता अस्मै तृप्तास्तथा कुरिष्यन्ति यथैऽन यज्ञ
उपनंस्यतीऽति ॥४॥ १ । १ ४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थे खण्ड । तृतीयेऽनुवाकस्समाप्त ।

—०—

देवा वै स्वर्ग लोकमैप्सन् । तं न शयाना नाऽऽसीना न
तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचन कर्मणाऽऽप्नुवन् ॥ १ ॥ ते
देवाः भजापतिमुपायायन् स्वर्ग वै लोक मप्सिष्य । तं न शयाना

१ देवत । २ ओम् । ३ एस्म । ४ देवभृत् । देवश्रुत् । पयश्रुत् । ५-न ।
१-ऽऽर्शाना । २-न्त्यो । ३ उपाय-।

नाऽऽसीना न तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचनकर्मणाऽऽपाम ।
 तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गं लोकमाप्नुयामेऽति ॥७॥ तानब्रवीत्
 साम्नाऽनृचेन स्वर्गं लोकम्प्रायतेऽति । ते साम्नाऽनृचेन स्वर्गं
 लोकम्प्रायन् ॥ ३ ॥ प्र वा उमे साम्नाऽगुरिति । तस्मात्प्रसाम
 तस्माद्दु प्रसाम्यन्नप्राप्तिं ॥४॥ देवा वै स्वर्गं लोकमायन् । त एता-
 न्यृक्पदानि शरीराणि धून्वन्त आयन् । ते स्वर्गलोकमजयन् ॥५॥
 तान्या दिवः प्रकीर्णान्यशेरन् । अथेऽमानि प्रजापतिर्ऋक्पदानि
 शरीराणि सञ्चित्याऽभ्यर्चन् । यदभ्यर्चन्ता एवर्चोऽभवन् ॥६॥
 १ । १.५॥

चतुर्येऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सैऽवर्गभवदियमेव श्रीः । अतो देवा अभवन् ॥१॥
 अथैऽपामिमामसुरादिश्रयपविन्दन्त । तदेवाऽऽसुरमभवत् ॥२॥
 ते देवा अभवन् या वै नऽश्रीरभूदविदन्त तामसुरः । कथं न्वेपा-
 मिमांश्रियम्पुनरेव ज्येमेऽति ॥३॥ तेऽब्रुवन्नृच्येव साम गायामेति ।

४ प्रयामे । ५ प्रयाते, प्रधामे, प्रयामे । ६ लोकंमप्रायत् । ७ इसके
 याद्दुष्टुगड् यड् हे । ५ के पूर्व यह सय में लिखा है 'त एतान्यृक्पदानि
 शरीराणि धून्वन्त आयन् (त्वयन्) । ते स्वर्गलोकमजयन् (-अत्) ।
 अथेऽमानि प्रजापतिर्...ता एवर्चोऽभवन् । ८ यत् । ९ ओम् । ते स्वर्ग
 मजयन्, यहां अधिक है । १० ओम् । यद्..... । ११ ओम् । ता एव ।

१ आस्-। २ तद् । ३ एवा । ४ विन्दन्त । ५ अथ ।

ते पुनः प्रत्यादृत्या^६र्वि सामाऽगायन । तेनाऽस्माह्लोकाद-
 सुरान्नुदन्त ॥४॥ तद्वै माभ्यन्दिने च सयने तृतीयसयने^५ च
 नचोऽपराधोऽस्ति । स यत्ते ऋचि^६ गायति तेनाऽरभह्लोकाद्
 द्विषन्तम्भ्रावृज्यं^७ नुदते । अथ यदमृतं देवतासु प्रातरसवनं गायति
 वेन स्वर्गं लोकमेति ॥५॥ प्रजापतिर्वै ताम्रेऽमांजितिगजयथाऽरये
 ऽयं जितिन्ताम^{११} । स स्वर्गं लोकमारोहन् ॥६॥ ते देवाः प्रजापति-
 मुपेत्याऽब्रुवन्स्मभ्यमपीऽदं साम प्रयच्छेति । तथेति । तदेभ्य-
 स्साम प्रायच्छन् ॥७॥ तदेनानिदं साम स्वर्गं लोकं नाऽक्रामयत^{१३}
 वोढुम ॥८॥ ते देवाः प्रजापति मुपेत्याऽब्रुवन् यद्वै नस्साम प्रादा
 इदं वै नान्स्वर्गं लोकं न कामयते वोढुमिति ॥९॥ तद्वै पाप्मना
 संसृजतेति । कोऽग्य पाप्मेति । ऋगिति । तद्वना समसृजन्
 ॥१०॥ तदिदम्प्रजापतेर्गर्हयन्नाणमनिष्ठुद्विदं वै मा तत्पाप्मना सम-
 स्राक्षुरिति । सोऽन्नगीथस्त्वैतेन व्यावर्तयाद्वै स पाप्मना वर्ताता
 इति ॥११॥ स य एतद्वचा प्रातस्सवने व्यावर्तयति व्येवं^{१५} स
 पाप्मना वर्तते ॥१२॥ १ । १६॥

चतुर्थेऽनुश्लोके द्वितीय गण्ड ।

६-तृच्यत्व । ७-गीन्द्र-। ८-वराधो । ९-चि । १०-नृते । ११ तम ।
 १२ अर-। १३ न कामायते, न कामयते । १४ कामाय-, सामय्. ।
 १५ संस्त्र- । १६ धव ।

तदाहुर्यदोवा ओवा इति गीयते कात्रर्भवति क सामेति ॥१॥
 प्रस्तुवन्नेवाष्टाभिरक्षरैः प्रस्तौति । अष्टाक्षरा गायत्री । अक्षरपक्षरं
 व्यक्षरम् । तच्चतुर्विंशतिस्सम्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्क्षरा गायत्री ॥२॥
 तामेताम्प्रस्तावेन^३र्चमाप्त्वा या श्रीर्पाऽपचितिर्यस्स्वर्गो^३लोको यद्यशो
 यदन्नाद्यं नान्यागायमान आस्ते ॥३॥ १।१७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीय. पण्ड ।

प्रजापतिर्देवानसृजन । तान्^३ मृत्युः पाप्मान्वसृज्यत ॥१॥
 ने देवा प्रजापतिमुपेत्याश्रुवन् कस्माद्^२ नोऽसृष्टा^३ मृत्युं चेन्नः पाप्मा-
 नमन्ववसृज्यन्नासिद्येति ॥२॥ तानव्रवीच्छन्दसि सम्भरत । तानि
 यथायतनम्प्रविशते^४ ततो मृत्युना पाप्मना व्यावत्स्येति ॥३॥
 वसवो गायत्रीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छादयत्
 ॥४॥ रुद्रास्त्रिष्टुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छाद-
 यत् ॥५॥ आदिता जगतीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान्
 साऽच्छादयत् ॥६॥ विश्वेदेवा अनुष्टुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् ।
 तान् साऽच्छादयत् ॥७॥ तान् अस्यामृच्यस्वरायाम्मृत्युर्निरजा-

१ प्रस्तावेप्रस्तवेन । २-र्ग ।

१ ता, ताः । २ कस्मा । ३-ष्टा । ४-सृज्यन् । ५-शन् ।
 ६-यस्य, यत्स्य- । ७ च्छाद्, याम् ।

नाद्यथा मणौ मणिमूत्रम्परिपश्येदेवम् ॥८॥ ते स्वरम्प्राविशन् ।
 तान् स्वरे सतो न निगजानात् । स्वरस्य तु घोषेणाऽन्वैत् ॥९॥
 त ओमित्सेतदेवाक्षरं समारोहन् । एतदेवाक्षरं नपीविद्या । यद्ददौ^१
 ऽमृतं तपति तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्तन्त ॥१०॥
 एवमेवैवं विद्वान् ओमित्सेतदेवाक्षरं समारुह्य यद्ददौ^२ ऽमृतं तपति
 तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्तन्तेऽथो यस्यैवं विद्वानुद्गा-
 यति ॥११॥ १।१८॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थं खण्डं । चतुर्थोऽनुवाकस्तस्मात् ॥

— ० —

अथैतदेकविंशं साम ॥१॥ तस्य अय्येय विद्या द्विङ्कारः ।
 अग्निर्वायुरसावादिस् एष मस्तावः । इम एव लोका आदिः ।
 तेषु^३ हीदं लोकेषु सर्वमाहितम् । श्रद्धा यज्ञो दक्षिणा एष उद्गीथः ।
 दिशोऽवान्तरदिश आकाश एष प्रतिहारः । आपः प्रजा ओपथय
 एष उपद्रवः । चन्द्रमा नक्षत्राणि पितर एतस्त्रिधनम् ॥२॥
 तदेनदेकविंशं साम । स य एवमेतदेकविंशं साम वेदेतेन हास्य

८-वेद् । ९ नास्ति । १० ओ । ११-वेद् । १२ एदो, ओ ।

१ अग्नि । २ वायवायुर । ३ येषु । ४-क्षा ।

सर्वेणोद्गीतम्भवसेतस्माद्देव^५ सर्वस्मादावृच्यते^६ य एव विद्रांसमुप-
वदति ॥३॥ ११७-६॥

पञ्चमाऽनुवाचस्समात्र ।

— ० —

इदमेवेदमग्रेऽन्तरिक्षमासीत् । तद्वेवाप्येताहं ॥१॥ तद्यदेतदन्तरिक्षं^१^२
य एवाऽयम्पवत एतदेवान्तरिक्षम् । एष ह वा अन्तरिक्षनाम ॥२॥
एष उ एवैष विततः तद्यथा काष्ठेन पनाशे विष्कम्भे स्यातामक्षेण
वा चक्रायेवमेतेनैमो लोकौ विष्कम्भौ ॥३॥ तस्मिन्निद्रं सर्वमन्तः ।
तद्यदास्मिन्निद्रं सर्वमन्तस्तस्मादन्तर्यक्षम् । अन्तर्यक्षं ह वै नामैतत् ।
तदन्तरिक्षमिति परोक्षमाचक्षते ॥४॥ तद्यथा मृताः प्रवद्धाः प्रलम्बे-
रक्षेत्रं हैतस्मिन्सर्वे लोकाः प्रवद्धाः प्रलम्बन्ते ॥५॥ तस्यैतस्य
साम्नास्त्रिंशद्भागान्नीण्यागीतानि पङ्क्तिभूतत्रयत्रयः प्रतिष्ठा दश
प्रगास्सप्त संस्था द्वौ स्तोभावेकं रूपम् ॥६॥ तथास्त्रिंशद्भागान्नीण्यागीतानि
एव ते लोकाः ॥७॥ अथ यानि (त्रीण्य्) आगीतान्यग्निर्वायुरस्ता

५-अस् । ६ आवृच्यते ।

१-रिक्ष- । २ अधिक ह ' एष ह वा अन्तरिक्षम् । ३ एवम् ।

४ नास्ति । ५-क्षेत्रा- । ६ नवम् । ७ एतेन । ८ नास्ति । तद् " "

अन्तस् । ९ नास्ति । १०-चन्द्र- । ११-नेस् । १२ अगमा । १३ एक-
रूपम्, एक-रूपम् । १४ तो ।

वाटिस्य एतान्यागीतानि । न ह वै कांचनश्रियमपराध्नोति य एवं
वेद ॥८॥ १२०॥

पष्ठेऽनुवाकं प्रथमं पठन् ।

अथ याप्पइविभृतय ऋतयस्ते ॥१॥ अथ याश्चतस्रः प्रतिष्ठा
इमा एव ताश्चतस्रोद्विशः ॥२॥ अथ ये दश प्रगा इम एव ते दश
प्राणाः ॥३॥ अथ यास्सप्त संस्था या एवैतारसप्तहोराः प्राची-
र्यपद्रुर्वन्ति ता एव ताः ॥४॥ अथ यां द्वौ स्तोभावहोराने एव-
ते ॥५॥ अथ यदेकरूपं कर्मैव तत्र । कर्मणा द्वीदं सर्वं विक्रियते
॥६॥ तस्यैतस्य साज्ञोदेवा आजिमायन् । सा प्रजापतिर्हरसा
द्विङ्कारमुदजयदाग्निस्तेजसा प्रस्तावं रूपेण बृहस्पतिरद्वीथं स्वधया
पिनरः प्रतिहारं वीर्येणोन्द्रोनिधनम् ॥७॥ अथेतरे देवा अन्तरिता
इवासन् । त इन्द्रमव्रुयन् तत्र वै वयं सोऽनुन एतास्मिन् रामन्ना-
भजेति ॥८॥ तेभ्यस्स्वरम्प्रायच्छत् । तम्प्रजापतिरव्रवीत्कथेत्यमकः ।
सर्वं वा एभ्यस्साम प्रादाः । एतावद्वाय साम यायान् स्वरः ऋग्वा
एपते स्वराद्भवतीति ॥९॥ सोऽव्रवीत् पुनर्वाभ्रहमेपामेतं रसमादा-
स्य इति । तानव्रीऽदुष मा गायन्त । अभि मा स्वरतेति । तथेति

१ नास्ति । सप्त एतासु । २-आ । ३ वयं- । ४ चद् ।
५ रपि । ६-सं । ७ तावय । ८-रम । ९ स्वर- । १० एषी, एषोम् ।

॥१०॥ तनुपागायन् । तमभ्यस्वरन् । तेषाम्पुनारसमादत्त ॥११॥

१२१॥

पष्ठेऽनुवाके द्वितीय खण्ड ।

स यथा मधुधाने^१ मधुनाळीभिर्मन्त्रासिञ्चादेवमेव तत्सामन्
पुना रसमासिञ्चन् ॥१॥ तस्माद्गु ह नोऽपगायेत् । इन्द्र एष
यदुद्राता । स यथा साग्भीषां^२ रसमादत्त एवमेव तेषां रसमादत्ते
॥२॥ कामं ह तु यजमान उपगायेद्यजमानस्य ि तद्भवसथो ब्रह्म-
चार्याचार्योक्तः ॥३॥ तद्गु वा आहुरैषं गायेत् । दिशो ह्युपागा-
यन् दिशागेवं सलोकतां जयतीति ॥४॥ ते य एवै^५ मुख्याः
प्राणा एत एवोद्रातारश्चोऽपगातारश्च । इमे ह त्रय उद्रातार इम
उ चत्वार उपगातारः ॥५॥ तस्माद्गु चतुर एवोऽपगातृन्^६ कुर्वीत ।
तस्माद्गुहोऽपगातृन् प्रत्यभिभृशोद्दिगस्थश्चोत्रं मे माहिसिष्टेति ॥६॥
स यस्स रस आसीद्य एवायम्भवत् एष एव स रसः ॥७॥ स यथा
मध्वालोपमद्यादिति ह स्माह मुचिच्चदशैलन एवमेतस्य रसस्यात्मान-
म्पूरयेत् । स एवोद्रातात्मानं च यजमानं चामृतत्वं गमयतीति ॥८॥ १२२

पष्ठेऽनुवाके तृतीय खण्ड । पष्ठोऽनुवाकस्समाप्त ।

११-त्ता ।

१-धुवने । २ 'स' अधिक पदो । ३-यत् । ४-शम् । ५ एव ।
६ य । ७ द्वा-, -तृत् । ८-तृत् ।

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येनर्ति ॥१॥

स यस्स आकाशो वागेव सा । तस्मादाकाशाद्वाग्ब्रूति ॥२॥

तामेतां वाचम्प्रजापतिरभ्यपीळ्यत् । तस्या अभिपीळितायै रसः

प्राणोदत् ३ । त एवेमे लोका अभवन् ॥३॥ स इमो लोकानभ्यपीळ्यत् ।

तेषामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । ता एवैता देवता अभवन्नाग्नि-

र्वायुरसावादिस् इति ॥४॥ स एता देवता अभ्यपीळ्यत् ।

तासामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । सा त्रयीविद्याभवत् ॥५॥

स त्रयी विद्यामभ्यपीळ्यत् । तस्या अभिपीळितायै रसः प्राणोदत् ।

ता एवैता व्याहृतयो ऽभवन् भूर्भुवस्स्वरिति ॥६॥ स एता व्या-

हृतीरभ्यपीळ्यत् । तामामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । तदेतद-

क्षरमभवदोमिति यदेतद् ॥७॥ स एतदक्षरमभ्यपीळ्यत् । तस्या-

ऽभिपीळितस्य रसः प्राणोदत् ॥८॥ १।२३॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तदक्षरदेव । यदक्षरदेव तस्मादक्षरम् ॥१॥ यद्देवाक्षरं ना-

क्षीयत तस्मादक्षरम् । अक्षरं ह वै नामैतत् । तदक्षरमिति

१. एता या । २. रसम् । ३. 'स त्रयीम् ... रसम् (!)

प्राणोदत्' अधिकं हे । ४. नास्ति । ५-आ । ६. नास्ति । स त्रयीम्

... प्राणोदत् । ७-आ ।

१-या ।

परोक्षमाचक्षते ॥२॥ तद्वैतदेक ओमिति गायन्ति । तच्चथा न
गायेत् । ईश्वरो ह्येनदेतेन रसेनान्तर्धातोः^२ । अयो^३ द्वे^४ इवैवम्भवत्
ओमिति । ओ इत्यु द्वेके गायन्ति । तद्दु^५ हं तन्न^६ गीतम् । नैव^७
तथा गायेत् । ओं इत्येव गायेत् । तदेनदेतेन रसेन सन्दधाति ॥३॥
तदेतं रसं तर्पयति । रसस्तृप्तोऽक्षरं तर्पयति । अक्षरं^१ तृप्तं व्याहृती
स्तर्पयति । व्याहृतयस्तृप्तावेदोस्तर्पयन्ति । वेदास्तृप्ता देवतास्तर्प-
यन्ति । देवतास्तृप्ता लोकास्तर्पयन्ति । लोकास्तृप्ता अक्षरं तर्पयन्ति ।
अक्षरं तृप्तं वाचं तर्पयति^{१०} । वाक् तृप्ताकाशं तर्पयति । आकाशस्तृप्तः
प्रजास्तर्पयति । तृप्यति प्रजया पशुभिर्ष एतदेवं वेदायो यस्यैवं^६
विद्रानुद्गायति^{१२} ॥४॥ १२४॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीय खण्ड । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

— ०:—

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स
यस्त आकाश आदित्य एव स । एतस्मिन् (ह्) उदिते^२ सर्व-
मिदमाकाशते ॥२॥ तस्य मर्त्यामृतयोर्वे^३ तीराणि^४ समुद्र एव ।

२ या-। ३-ये । ४ द्वे, द्वे । ५ नास्ति । ६ नि-। ७ ने एव ।
८ ओ । ९ अक्षरंवाचं तर्पयति यह पाठ नहीं । १०-यन्ति ।
११ वाक्स्त् । १२ गायति ।

१ इत् (!) । २ सुदिते । ३ वैश्व । ४ तरणी ।

तद्यत्समुद्रेण परिगृहीतं तन्मृत्योराप्तमथ यत्परं तदन्ततम् ॥३॥ स
 यो ह स समुद्रो य एवायम्यनत एष एव स समुद्रः । एतं हि
 संद्रवन्तं सर्वाणि भूतान्यनुसंद्रवन्ति ॥४॥ तस्य व्यावापृथिवी एव
 रोधसी । अथ यथा नद्यां कंसानि वा प्रहीणानि स्युस्तरांसि वै-
 व मस्यायम्पार्यवस्समुद्रः ॥५॥ स एष पार एव समुद्रस्योदेति ।
 स उद्यन्नेव वायोः पृष्ठ आक्रमते । सोऽमृतादेवोदेति । अमृतमनु-
 संचरति । अमृते प्रतिष्ठितः ॥६॥ तस्येनत्त्रिटद्रूपमृत्सारनाप्तं शुक्लं
 कृष्णम्पुरुषः ॥७॥ तद्यच्छुक्लं तद्राचौरूपमृचोऽग्नेर्मृत्योः । सा या
 सा वायुक् सा । अथ योऽग्निर्मृत्युस्सः ॥८॥ अथ यत्कृष्णं तद्रपां
 रूपमन्नस्य मनसोयजुषः । तथास्ना आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो
 यजुष्टत् ॥९॥ अथ यः पुरुषस्स प्राणस्तत्साम-तद्ब्रह्म तदमृतम् ।
 स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥१०॥ १।२५॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथाध्यात्मम् । इदमेव चक्षुस्त्रिदृच्छुक्लं कृष्णम्पुरुषः ॥१॥

तद्यच्छुक्लं तद्राचो रूपमृचोऽग्नेर्मृत्योः । सा या सा वायुक् सा ।

५-शृणु-। ६-द्रे-। ७ अनुद्र-। ८-या । ९-याम् । १० कसा-
 नि । ११ प्रहीणहानि । १२ अधिक ह 'सस्' स । १३ प्रतिष्ठित' ।
 १४ वाक्पु, वाग् । १५ ऋत् । १६ अन्नमस्य । १७ नाति, तथा-यः
 पुरुषस् ॥ १ शृत् । २ अधिक ' इत्मा ' ।

अथ योऽभिर्मृत्युस्मः ॥२॥ अथ यत्कृष्णं तदर्पां रूपमन्नस्य मनसो
 यजुषः । तथास्ता आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो यजुष्टत् ॥३॥
 अथ यः पुरुषस्स प्राणस्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राण-
 स्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥४॥ सैऽपोऽत्क्रान्तिर्ब्रह्मणः ।
 अथानः पराक्रान्तिः ॥५॥ सा या साऽऽक्रान्तिर्विद्युदेव सा । स
 यदेव विद्युतो विद्योतमानायै श्येतं रूपम्भवति तद्वाचो रूपमृचो-
 ऽग्नेर्मूलोः ॥६॥ यदेव विद्युतस्संद्रवन्सै नीलं रूपम्भवति तदर्पां
 रूपमन्नस्य मनसो यजुषः ॥७॥ य एवैष विद्युति पुरुषस्स प्राण-
 स्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म
 तदमृतम् ॥८॥ १।२६॥

अष्टमोऽनुवाके द्वितीयं खण्डः ।

स हैपोऽमृतेन परिवृद्धो मृत्युमध्यास्तेऽन्नं कृत्वा ॥१॥ अथै-
 ऽप एव पुरुषो योऽयं चक्षुषि । य आदित्ये सोऽतिपुरुषः । यो
 विद्युति स परमपुरुषः ॥२॥ एते ह वाव त्रयः पुरुषाः । आ हास्यैते
 जायन्ते ॥३॥ स योऽयं चक्षुष्येपोऽनुरूपो नाम । अन्वद् ह्येष

३-यो । स्त (!) । ४-त् । ५ नास्ति । ६ श्येतं । ७-त् । ८-ये ।
 ९-मा ।

१-सी । २-यो । ३-यो, या, य । ४-वज्र । ५ ह ।

सर्वाणि रूपाणि । तमनुरूप इत्युपासीत । अन्वञ्चि^१ हेनं^२ सर्वाणि
रूपाणि भवन्ति ॥४॥ य आदित्ये स प्रतिरूपः । प्रत्यङ् लोप
सर्वाणि रूपाणि । तम्प्रतिरूप इत्युपासीत । अन्वञ्चि^३ हेनं सर्वाणि
रूपाणि भवन्ति ॥५॥ यो विद्युति स सर्वरूपः । सर्वाणि^४ ह्येतस्मिन्
रूपाणि । तं^५ सर्वरूप इत्युपासीत । सर्वाणि^६ हाऽस्मिन् रूपाणि
भवन्ति ॥६॥ एते इ वाच त्रयः पुरुषाः । आ हाऽस्यैते जायन्ते य
एतदेवं वेदाधो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥७॥ १।२।७॥

अष्टमोऽनुवाके तृतीय. सप्त । अष्टमोऽनुवाकः समाप्तः ।

----- ० -----

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । त उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स
यस्य आकाश इन्द्र एव सः । स यस्त इन्द्र एव एव स य एव
एव^१ तमति । स एव सत्तरश्मिर्दृष्टुविष्मान् ॥२॥ तस्य वाङ्मयो
रश्मिः प्राङ् प्रतिष्ठितः । सा चा सा वागदिरसः । स दशधा
भदति शतधा सद्यत्त्वाऽनुतथा प्रतुतवा निद्युतथाऽयुदधा^२ न्यर्बुदधा
नितर्बु^३ र्वा पञ्चमद्वि^४ त्पिर्व्यो^५ मन्तः ॥ ३ ॥ स-एव एतस्य रश्मिर्वा-

६-तर्था, चर्त्री, चं । ७ ह्येतत् । ८ प्रत्यं । ९ अथिफ हे
'रूपाणि,' नास्ति-तं उपाणि ।

१ नास्ति । २ अन्- ३ शिद्यर्वाचं । ४-ति । ५-त, स्तोम-

भूत्वा सर्वान्वासु प्रजामु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च वदसेतस्यैव
 रश्मिना वदति ॥४॥ अथ मनोमयो दक्षिणा^१ प्रतिष्ठितः । तद्य-
 चन्मनश्चन्द्रमास्सः । स दशधा भवति ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिर्नो
 भूत्वा सर्वान्वासु प्रजामु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च मनुते एतस्यैव
 रश्मिना मनुते ॥६॥ अथ चक्षुर्मयः^{११} प्रत्यङ् प्रतिष्ठितः^{१२} । तद्यत्तश्चक्षु-
 रादित्यस्सः । स दशधा भवति ॥७॥ स एष एतस्य रश्मिश्चक्षु-
 र्भूत्वा सर्वास्वामु प्रजामु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च पश्यत्येतस्यैव
 रश्मिना पश्यति ॥८॥ अथ श्रोत्रमय उदङ् प्रतिष्ठितः^{१५} । तद्यत्तच्छ्रोत्रं
 दिशस्ताः । स दशधा भवति ॥९॥ स एष एतस्य रश्मिश्श्रोत्र-
 म्भूत्वा सर्वास्वामु प्रजामु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च शृणोत्येतस्यैव
 रश्मिना शृणोति ॥१०॥ १।०८॥

नमोऽनुराके प्रथम राशे ।

अथ प्राणमय ऊर्वः^१ प्रतिष्ठितः । स यस्म प्राणो वायुस्सः ।
 स दशधा भवति ॥१॥ स एष एतस्य रश्मिः प्राणोभूत्वा सर्वान्वासु
 प्रजामु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च प्राणित्येतस्यैव रश्मिना प्राणिति

६ पश्यति । ७ पश्यति । ८ नास्ति । ९ दक्षिणा । १० मनुते ।
 ११ चक्षुम- । १२-यः । १३ वक्षित । १४ त, नास्ति । १५ प्रत्यवस्थित ॥

१-स्य- । २ नास्ति ।

॥२॥ अथाऽऽमुमयस्तिर्यङ् प्रतिष्ठितः । स इ^३ स ईशानो नाम । स
 दशधा भवति ॥३॥ स एष एतस्य रश्मिरम्बुभृत्वा सर्वास्वामु प्रजामु
 प्रत्यवस्थितः । स यः कश्चाऽऽमुमानेतस्यैव रश्मिनाऽऽमुमान् ॥४॥
 अयाऽऽक्षमयोऽर्वाङ् प्रतिष्ठितः । तद्यत्तदन्नमापस्ताः । स दशधा
 भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधान्यर्बुदधा
 निखर्वर्धा पन्नमक्षितिव्योमान्तः ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिरन्नम्भृत्वा
 सर्वास्वामु प्रजामु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्चाश्नासेतस्यैव रश्मिना-
 श्रान्ति ॥६॥ स एष सप्त रश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् । तदेतदृचाऽभ्यनूच्यते
 यस्सप्त रश्मिर्वृषभस्तुविष्मान्वासृजत्सर्तवे सप्तसिन्धून् ।
 योरौहिगा^२मस्फुरद्भ्रवाहुर्द्यामारोहन्त^१ गजनास इन्द्र इति
 ॥७॥ यस्सप्त रश्मिरिति । सप्त षेत् आदिस्यस्य रश्मयः । वृषभ
 इति । एष द्वेवाऽऽस्मात्प्रजानामृषभः । तुविष्मानिति । महीयैऽवा
 स्यैपा ॥८॥ अवासृजन् सर्तवे सप्तसिन्धुनिति । सप्तषेनेसिन्धवः ।

३ स्थान खाली है 'स... ई' । ४-यन्ति । ५ 'यत्' के
 पश्चात् 'तत्तद्बुद्धं नाम' पाठ है, 'तदन्नम्...' 'स' नहीं है । ६ अन्नम् ।
 ७ तद्वा, न । ८ निम्ननां चम, निम्नवंधात् । ९ घं म- १० सामास्य
 ११ नास्ति तदेतद् ... वृषभस्तुविष्मान् । १२ रोह- १३-इ ।
 १४-न । १५ महीयै ।

तैरिदं सर्वं सितम् । तद्यदेतैरिदं सर्वं सितं तस्मात्सिन्धवः ॥६॥

यो रौहिणमस्फुरद्ब्रजबाहुरिति । एष (हि) रौहिणमस्फुरद्ब्रजबाहुः

॥१०॥ घामारोहन्तं स जनास इन्द्र इति । एष हीन्द्रः ॥११॥ १।२-६॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तद्यथा गिरिम्पन्थानस्समुद्रियुरिति इस्माऽऽह शाठ्यायनि-

रेवमेत आदित्यस्य रश्मय एतमादिसं सर्वतोऽपियन्ति । स हैवं

विद्वानोमिताददान एतैरेतस्य रश्मिभिरेतमादिसं सर्वतोऽप्येति ॥१॥

तदेतत् सर्वतो द्वारमनिपेधं साम । अन्यतोद्वारं हैऽनदैक एवा-
ऽभ्रङ्गमुपासते । अतोऽन्यथाविद्युः ॥२॥ अथ य एतदेवं वेद स

एवैतत् सर्वतो द्वारमनिपेधं सामवेद ॥३॥ सा एषा विद्युत् । (यद्)

एतन्मण्डलं समन्तम्परिपतति तत्साम । अथ यत्परमतिभाति स

पुण्यकृत्वायै रसः । तमभ्यतिमुच्यते ॥४॥ तदेतद्भ्रातृव्यं साम ।

न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन

भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं

वेदायो यस्यैवं विद्वानुदायति ॥५॥ १।३०॥

नवमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । नवमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

१६ स्थान आजी है-हन्-बाजा,-हस्तं ।

१ एवम् । २ तिप्रतिधियन्ति । ३ अनुप्- । ४ नास्ति । ५ नत, त ।

६ नास्ति । ७ पत्ताव, पत्ता । ८ गम्- । ९ एतो । १० विद्वा । ११-तृवि ॥

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाऽप्येतर्हि । स
यस्त आकाश इन्द्र एव सः । स यस्त इन्द्रस्तामेवतत् ॥१॥ तस्यै-
तस्य साम्न इयमेव प्राचीदिग्घट्ट^१र इयम्भस्ताव इयमादिरियमुद्गी-
थोऽसौ प्रतिहारोऽन्तरिक्षमुपटव इयमेवनिधनम् ॥२॥ तदेतत्सप्त-
विधं साम । स य एवमेतत्सप्तविधं साम वेद यत्किञ्च प्राच्यांदिशि
या देवता ये मनुष्या ये पशवो यद्वाद्यं तत्सर्वं द्धिङ्गारेणामोति
॥३॥ अथ यदक्षिणायां दिशि तत्सर्वं मस्तावेनामोति ॥ ४ ॥ अथ
यत्पृथ्वीच्यां दिशि तत्सर्वमादिनामोति ॥५॥ अथ यदुदीच्यांदिशि
तत्सर्वमुद्गीचेनामोति ॥६॥ अथ यदमुष्यां दिशि तत्सर्वम्प्रतिदारेणा-
मोति ॥७॥ अथ यदन्तरिक्षे^२ तत्सर्वमुपटवेणामोति ॥८॥ अथ
यदस्यां दिशि या देवता ये मनुष्या ये पशवो यद्वाद्यं तत्सर्वं
निधनेनामोति ॥९॥ सर्वं हैवाऽस्याऽऽप्तम्भरति सर्वं जितं न हा-
ऽस्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥१०॥ स यद्वकिञ्च
किञ्चैवं विद्वानेषु लोकेषु कुरुते स्वस्य हैव तत्स्यतः कुरुते । तदे-
तदचाऽभ्यनृच्यते ॥११॥ १।३१॥

दशमेऽनुवाके प्रथम खण्डः ।

१ दीर् । २-रिञ्- ३ एत् । ४ 'मनुष्या' अधिक है '५-वा ।
६ यहां चौथा श्लोक (मन्त्र) अधिक है और साथ ही प्रतिदारेण
'प्रस्तावेन' के स्थान में । ७ 'अप्यात्' अधिक है । ८ 'दक्षिणायांदिशि' ॥

यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीरुत स्युः । नत्वा
 वज्रिन्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी गति ॥१॥
 यद् प्रात इन्द्र ते शतं शतम्भूमीरतरयुरिति । यच्छतं द्यावस्स्युश्शत-
 म्भूयताभ्य एष एवाऽऽकाशो ज्यायान् ॥२॥ नत्वा वज्रिन्सहस्रं
 सूर्या प्रन्विति । न ह्येतं सहस्रं च न सूर्या अनु ॥३॥ न जातमष्ट
 रोदसी इति । न ह्येतं जान रोदन्ति । इमे ह वाव रोदसी ताभ्या-
 मेव एवाकाशो ज्यायान् । एतस्मिन् देवने अन्तः ॥४॥ स यस्स
 आजान इन्द्र एव सः । स गस्स इन्द्र एष एव स य एष तपति ॥५॥
 स एषोऽध्राण्यतिमुच्यमान एति । तथैषोऽध्राण्यतिमुच्यमान
 एषेवमेव स नर्वन्मातराप्नोऽतिमुच्यमान एति य एवं वेदाथो
 यस्यैवं विद्वानुद्रायति ॥६॥ १।३०॥

दशमोऽनुवाके छिनीय अण्ड । दशमोऽनुवाकस्समाप्त ।

— ० —

त्रित्वात् चतुर्णां । ब्रह्म तृतीयमिन्द्रस्तृतीयम्प्रजापति-
 न्तृतीयमजमेव चतुर्थः पाठः ॥१॥ नद्वै ब्रह्मसमाख्योऽथ य इन्द्र-

१ नास्ति । २-या । ३ नास्ति । ४-यद् । ५ नास्ति, स—स ।
 ६ स्थान ब्राह्मी 'य' तक । ७-मानय्, -यमानय ॥

१त्रित्वात्-

स्ता वागथ यः प्रजापतिस्तन्मनोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥२॥ मन
 एव हिङ्गारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥३॥
 करोत्येव वाचानयति प्राणेन गमयाति मनसा । तदेतन्निरुद्धं यन्मनः ।
 तेन यत्र कामयते तदात्मानं च यजमानं च दधाति ॥४॥ अथाधि-
 दैवतम् । चन्द्रमा एव हिङ्गारोऽग्निः प्रस्ताव आदिस उद्गीथ आप
 एव चतुर्थः पादः । तद्धि प्रसक्तमन्नम् ॥५॥ ता वा एता देवता
 अमावास्यां रात्रिं संयन्ति । चन्द्रमा अमावास्यां रात्रिमादिसम्प्र-
 विशत्यादित्योऽग्निम् ॥ ६ ॥ तद्यत्संयन्ति तस्मात्साम । सं ह वै
 सामवित्स साम वेद य एवं वेद ॥७॥ तासां वा एतासां देवतानामे-
 कैकैव देवता साम भवति ॥८॥ एष एवादित्यस्त्रिष्टुत्तुप्पाद्रश्मयो
 मण्डलम्पुरुषः । रश्मय एव हिङ्गारः । तस्मात्ते प्रथमत एवोद्यत-
 स्तायन्ते । मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्तस्स
 एव चतुर्थः पादः ॥९॥ एवमेव चन्द्रमसो रश्मयो मण्डलम्पुरुषः ।
 रश्मय एव हिङ्गारो मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्त
 स्स एव चतुर्थः पादः ॥१०॥ चत्वार्यन्यानि चत्वार्यन्यानि । तान्यष्टौ ।
 अष्टाक्षरा गायत्री गायत्रं साम ब्रह्म उ गायत्री । तद्ब्रह्माग्नि-
 सम्पद्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनोपशन्यम् ॥११॥ ११११ ॥

एकादशोऽनुवाके प्रथम अष्टादः ।

अथाऽध्यात्मम् । इदमेव चक्षुस्त्रिदृक्षतुष्पाच्छुक्लं कृष्णम्पुरुषः ।
 शुक्रमेव हिङ्गारः कृष्णम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या इमा अपोऽन्तस्स
 एव चतुर्थः पादः ॥१॥ इदमादिसस्यायनमिदं चन्द्रमसः । चत्वारिमानि
 चत्वारिमानि । तान्यष्टौ । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम ब्रह्म उ गा-
 यत्री । तद् ब्रह्माभिसम्पद्यते^१ । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥२॥
 स यो ऽयम्पवते स^२ एष एव^३ मजापतिः । तद्वेव साम । तस्यायं देवो
 योऽयं चक्षुपि पुरुषः । स एष आहुतिमतिमसोत्क्रान्तः ॥३॥ अथ
 यावेतौ चन्द्रमाश्चादिसश्च यावेतावप्सु दृश्येते^४ एतार्वेतयोर्देवौ ॥४॥
 यद् वा इदमाहुर्देवानां देवा इसेते ह ते । त एत आहुतिमतिमसो-
 त्क्रान्ताः ॥५॥ तद् पृथुर्वैन्यो दिव्यान्त्रासान्पप्रच्छ^५ येभिर्वात
 इपितः प्रवार्ति^६ ये ददन्ते पञ्च दिशस्समीचीः । य
 आहुतीरत्यमन्यन्त^७ देवा अपां^८ नेतारः कतमे त आं-
 सन्निति ॥६॥ ते ह मत्पृच्छ रिमामेपाम्पृथिर्वी वस्त एको-
 ऽन्तरिक्षम्पर्येको^९ बभूव । दिवमेको ददते यो विधर्ता^{१०}
 विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्त्यन्य^{११} इति ॥७॥ इमामेपाम्पृथिर्वी

१-पाद-। २ नास्ति । ३-यते । ४ पता उ । ५ तान् । ६ पमिद् ।
 ७ वशास्त्र, दश । ८-ईर् । ९ इत्यम्-। १० पराह । ११-ईच्-। १२-धत्ता ।
 १३ अन्य ।

वस्त एक इत्यग्निर्हसः ॥८॥ अन्तरिक्षं^१र्ष्येको वभूवेति वायुर्हसः ॥९॥

दिवमेको ददते यो विधत्ते^२ऽस्यादित्यो हसः ॥१०॥ विश्वा आशाः

प्रतिरक्षन्त्यन्य इति । एता ह वै देवता विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्ति

चन्द्रमा नक्षत्राणीति । ता एतास्सामैव सस्यो व्यूढोऽन्नाद्याय ॥११॥

१ । ३४ ॥

एकादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

अथैतत्साम । तदाद्दुस्संवत्सर एव सामेति ॥१॥ तस्य वसन्त

एव हिङ्गारः । तस्मात्पशवो वसन्ता हिङ्गुरिक्रतस्समुदायन्ति ॥२॥

ग्रीष्यः प्रजावः । अनिरुक्तो वै प्रजावोऽनिरुक्त ऋतूनां ग्रीष्यः

॥३॥ वर्षा उद्गीथः । उदिव वै वर्षा गायति ॥४॥ शरत्प्रतिहारः ।

शरादि ह खलु वै भृषिष्ठाओपधयः पच्यन्ते ॥५॥ हेमन्तो निधनम् ।

निधनकृता इव वै हेमन्प्रजा भवन्ति ॥६॥ तावेतावन्तौ संधत्तः ।

एतदन्वन्तस्संवत्सरः । तस्यैतावन्तौ यद्धेमन्तश्च वसन्तश्च । एतदनु

ग्रामस्यान्तौ समेतः । एतदनु निष्कस्यान्तौ समेतः । एतदन्वहिर्भो-

गान्पर्योहिसशये ॥७॥ तद्यथा ह वै निष्कस्समन्तं ग्रीवा^५ अभिपर्यक्तं

१४ विधत्ते, विधत्ते । १५ अन्- , 'न्-'-याया ।

१-करिषुं तम्, करिषुं तम् । २ नाम्नि । ३-तत् । ४ सवत्-

५ धी- ६-यत् ।

एवमनन्तं साम । स य एवमेतदनन्तं साम वेदानन्ततामेव जयति
॥८॥ १।३५॥

ब्राह्मोऽनुवाके प्रथम. अयडः ।

अथैतत्पर्जन्ये साम । तस्य पुरोवात एव हिङ्गारः । अथ य-
दभ्राणि सम्प्लावयति स प्रस्तावः । अथ यत् स्तनयति स उद्गीथः ।
अथ यदिद्योतते स प्रतिहारः । अथ यद्रूपति तन्निधनम् ॥१॥
तदेतत्पर्जन्ये साम । स य एवमेतत्पर्जन्ये साम वेदवर्षुको^१ हास्यै
पर्जन्यो भवति ॥२॥ अथैतत् पुरुषे साम । तस्यायमेव हिङ्गारो-
ऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीयोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ॥३॥ तदेतत्पुरुषे
साम । स य एवमेतत्पुरुषे साम वेदोऽऽर्ध्व एव प्रजया^२ पशुभिरा-
रोहन्नेति ॥४॥ य उ एनत्प्रसवेद^३ ये प्रसञ्चो लोकास्ताअयति ।
तस्यायमेव हिङ्गारोऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीयोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ।
ये प्रसञ्चो लोकास्ताअयति ॥५॥ य उ एनत्तिर्यगेद^४ ये तिर्यञ्चो
लोकास्ताअयति । तस्य लोमैव हिङ्गारस्त्वक्प्रस्तावो मांसमुद्गीयोऽस्थि
प्रतिहारो मज्जानिधनम् ॥६॥ तस्य त्रीण्याविर्गीयति प्रस्तावम्प्रतिहारं

७ ऽनन्ताम् ।

१-यक्-। २-यो । ३ प्रजा । ४-ने । ५ नास्ति । ६ एन, एनं ।
७-युच्-, ' म ' अधिक है । ८ लाक्-। ९ हिङ्कारं ॥

निधनम् । तस्मात्पुरुषस्य त्रीण्यस्थीन्याविर्दन्ताश्च द्रव्याश्चनखाः ।
 ये तिर्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥७॥ य उ एनत्संयग्वेद ये सम्यञ्चो
 लोकास्ताञ्जयति । तस्य मन एव हिङ्गारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथ-
 श्चक्षुः प्रतिहार इश्रोत्रं निधनम् । ये सम्यञ्चो लोकास्ताञ्जति ॥८॥
 अथैतद्देवतासु साम । तस्य वायुरेव हिङ्गारोऽग्निः प्रस्ताव आदिस
 उद्गीथश्चन्द्रमा प्रतिहारो दिश एव निधनम् ॥९॥ तदेतद्देवतासु साम ।
 स य एनमेतद्देवतासु साम वेद देवतानामेव सलोकतां जयति ॥१०॥
 १।३६॥

छन्दोऽनुवाके द्वितीय खण्ड ।

तस्यैतास्तिष्ठन्नागा आग्नेयैः^१ ऐन्द्रैः^२ कैः^३ वैश्वदेव्यैः^४ ॥१॥ सा या
 मन्द्रा साऽऽग्नेयी । तथा मातस्सवनस्योद्देयम् । आग्नेयं वै मातस्स-
 वनमाग्नेयोऽयं लोकः । स्वयाऽऽगया मातस्सवनस्योऽद्रायत्यृधोतीमं
 लोकम् ॥२॥ अथ या घोपियुपदिमती सैऽऽन्द्री । तथा माध्य-
 न्दिनस्य सवनस्योद्देयम् । ऐन्द्रं वै माध्यन्दिनं सवनं मैन्द्रोऽसौ
 लोकः । स्वयाऽऽगया माध्यन्दिनस्य सवनस्योद्देयत्यृधोत्सुं लोकम्
 ॥३॥ अथ यां वीह्वयन्निव प्रथयन्निव गायति सा वैश्वदेवी । तथा

१ ऐष्-; २ ऽऽन्द्र । ३ नास्ति, सा.....ऽद् । ४ मैनधी ।

५ नास्ति अथ.....लोकम् । ६-अन्द्री-के लिये स्थान पाली है ।

७-७ दिन । ८-निष्मं । ९ या, ' घोपियुप ', भी बिखा है ।

तृतीयसवनस्योद्देयम् । वैश्वदेवं वै तृतीयसवनं वैश्वदेवोऽयमन्तरा-
 लोकः । स्वयाऽऽगया तृतीयसवनस्योद्गायत्यृध्नोतीमन्तरालोकम्
 ॥४॥ अथो उच्चा खल्वाहु रेक्यैवाऽऽगयोद्देयं यदेवास्यमध्यं वाच
 इति । तद्यथा वैवाचा व्यायच्छमान उद्गायति तदेवास्यमध्यं वाचः ।
 ११
 तथा वा एतया वाचा सर्वा वाच उपगच्छति । अव्यासिक्तामेकस्यां
 श्रियमृध्नोति य एवं वेद ॥५॥ अथ या क्रौञ्चा सा वार्हस्पत्या । स
 यो ब्रह्मवर्चसकामस्स्यात्स^{१२} तयोद्गायेत् । तद्ब्रह्म वै बृहस्पतिः । तद्वै
 ब्रह्मवर्चसमृध्नोति तथा ह ब्रह्मवर्चसीभवति ॥६॥ अथ ह चैकिताने-
 नेय एकस्यैव साम्न आगां गायति गायत्रस्यैव । तदनवानं गेयम्^{१३} ।
 १४
 तत् साम्न एवा भतिहारादनवानं गेयम् । तत्प्राणो वै गायत्रम् ।
 तद्वै प्राणमृध्नोति । तथा ह सर्वमायुरेति ॥७॥ १।३७॥

द्वादशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तं^१ चैकितानेपमुद्गायन्तं कुरव उपोदुरुज्जहिहि
 साम दालभ्येऽति ॥१॥ स होऽपोद्यमानो नितरां जगौ । तं होचुः
 किमुपोद्यमानो नितरामगासीरिति ॥२॥ स होवाचेदं वै लोमेऽस्यै-

१०-यन्ति । ११ तथा । १२ स, नास्ति । १३ 'वै गायत्रम्'
 नीचे से ले के अधिक लिखा है । १४ 'साम्नस्' अधिक है ॥

तदेवैतत्पुण्यं पश्यः । तस्माद्दुये न एतद्दुषावादिपुल्लोमशानीऽवतेपां
 श्मशानानि भवितारः । अथ वयमुदेव गातारस्म इति ॥३॥ अथ
 ह राजा जैवनिर्गलूनसमान्नाकायण शामूल पणाभ्यामुत्थितम्प-
 च्छर्चाऽऽगाता शालावत्या ३ साम्ना ३ इति ॥४॥ नैव राजन्नृचेति
 होवाच न साम्नेऽति । तद्युय तर्हि मर्व एव पणाग्या भविष्यथ य
 एव विद्रांसोऽगायतेति ॥५॥ अथ यद्वाऽवच्यदृचा च साम्ना चाऽऽगामे-
 ति धीतेन वै तद्यातयाम्नाऽमनाकागडेनाऽऽगातेऽति हैनास्तद्वच्यन् ।
 तद् तद्वाच स्वरेण चैव हिङ्गुरिण चाऽऽगामेति ॥६॥ १।३८॥

द्वादशोऽनुवाकेचतुर्थं खण्ड ।

अथ ह सरयाधिवाकश्चैत्रराथिस्मशयज्ञम्पौलुपितमुवाच मार्चीन-
 योगेति मम चैद्वै त्व साम विद्वान् साम्नाऽऽर्विज्य करिष्यसि नैव
 तर्हि पुनर्दीक्षामभिभ्यातासीति । मुहुर्दीक्षीं त्वात् ॥१॥ स होवाच
 यो वै साम्नाश्श्रय विद्वान्साम्नाऽऽर्विज्य करोति श्रीमानेव भवति ।
 मनोवाक् साम्नाश्श्रीरिति ॥२॥ यो वै साम्नाः प्रतिष्ठां विद्वान्साम्ना-
 ऽऽर्विज्य करोति प्रसेव तिष्ठति । वाग्वाच साम्नः प्रतिष्ठेति ॥३॥

४-उपाशु-। ५-पुत्र । ६-तार । ७ गळूनसम, मुळिनसम ।
 ८-त । ९ पणाग्या । १० च चागमे ॥

१ मच । २-क्षी । ३ घा ।

यो वै साम्नस्सुवर्णं विद्वान् साम्नाऽऽर्त्विज्यं करोत्यध्यस्य गृहे
 सुवर्णं गम्यते । प्राणो वाव साम्नस्सुवर्णमिति ॥४॥ यो वै साम्नो
 ऽपचितिं विद्वान्साम्नाऽऽर्त्विज्यं करोत्यपचितिमानेव भवति । चक्षु-
 र्वाव साम्नोऽपचितिरिति ॥५॥ यो वै साम्नश्श्रुतिं विद्वान्साम्ना-
 ऽऽर्त्विज्यं करोति श्रुतिमानेव भवति । श्रोत्रं वाव साम्नश्श्रुतिरिति
 ॥६॥ १।३-६॥

द्वादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

चत्वारिवाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ग्राहणा
 ये मनीषिणः । युहा^१ त्रीणि^२ निहिता^३ नैऽङ्गयन्ति
 तुरीयं^४ वाचो मनुष्या वदन्तीऽति ॥ १ ॥

वागेव साम । वाचा हि साम गायति । वागेवोऽव्ययम् । वाचा
 गुर्व्यं शंसति । वागेव यजुः । वाचा हि यजुरनुवर्तते ॥२॥ तद्य-
 त्किंचाऽर्वाचीनम्ब्रह्मणस्तद्वागेव सर्वम् । अथ यदन्यत्र ब्रह्मोपदिश्यते ।
 नैव हि तेनाऽऽर्त्विज्यं करोति । परोक्षेणैव तु कृतम्भवति ॥३॥

४-द्वौ ।

१-द्वानि । २-द्वितानी । ३ नास्ति । ४-क्- ५ वाचं । ६ ने ।

७ नास्ति ।

तस्या एतस्यै वाचो मनः पादश्चक्षुः पादश्च्रोत्रम्पादो वागेव चतुर्थः
 पादः ॥४॥ तद्यद्वै मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति । यश्चक्षुषा पश्यति
 तद्वाचा वदति । यश्चोत्रेण श्रुणोति^{१०} तद्वाचा वदति ॥५॥ तद्यदे-
 तत्सर्वं वाचमेवाऽभिसमयति^{११} तस्माद्वागेव साम । स ह वै सामवित्स
 सामं वेद य एवं वेद ॥६॥ तस्या एतस्यै वाचः प्राणा^{१२} एवाऽमुः ।
 एषु हीदं सर्वममृतै^{१३} ॥७॥ १।४०॥

त्रयोदशोऽनुवाकेप्रथमः खण्डः ।

तेन हेतेनाऽमुना देवा जीवन्ति पितरो जीवन्ति मनुष्या जी-
 वन्ति पशवो जीवन्ति गन्धर्वाप्सरसो जीवन्ति सर्वमिदं जीवति ॥१॥
 तदाहुर्यदमुनेदं सर्वं जीवति कस्साम्नोऽमुरिति । प्राण इति द्रूयाव ।
 प्राणो ह वाव साम्नोऽमुः ॥२॥ स एष प्राणो वाचि प्रतिष्ठितो वागु
 प्राणे प्रतिष्ठितः । तावतावेवमन्योऽन्यस्मिन्प्रतिष्ठितौ । प्रतिष्ठितौ
 य एवं वेद ॥३॥ तदेतदृचाऽभ्यनूच्यते—

८ 'चतुर्थं' अधिकं हे । ९ स्वाद् । १० श्रुणोति । ११ इति साम-
 १२-णा । १३ 'अमृते' के परे 'एषु हीदं सर्वं मृतेऽति' सय मे
 लिप्सा द्वै (नास्ति 'ति) ॥

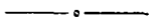
१-न्तीति । २ यदा । ३ येने । ४ 'इदं' अधिकं हे । ५-ये ।

६ मन्पत्न- ७ प्रतिष्ठितः ।

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता
स पुत्रः । विश्वे देवा अदितिः पञ्चजना अदिति-
र्जातमदितिर्जनित्वम् ॥ इति ॥४॥

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमिति । एषा वै द्यौरेषाऽन्तरिक्षम्
॥५॥ अदितिर्माता स पिता स पुत्र इति । एषा वै मातृया पितृया
पुत्रः ॥६॥ विश्वे देवा अदितिः पञ्चजना इति । ये देवा असृरेभ्यः
पूर्वे पञ्चजना आसन् य एवासावादित्ये पुरुषो यश्चन्द्रमसि यो
विद्युति योऽप्सु योऽयमक्षमन्तरेष एव ते । तदेषैव ॥७॥ अदिति-
र्जातमदितिर्जनित्वमिति । एषा ह्येव जातमेषा जनित्वम् ॥८॥ १।४१॥

प्रयोदशोऽनुषाके द्वितीयः खण्डः । प्रयोदशोऽनुषाकरस्समाप्तः ।



आरुणिर्ह वासिष्ठं चैकितानेयम्ब्रह्मचर्यमुपेयाय । तं होवाचा-
ऽऽनानासि सौम्य गौतम यदिदं वर्यं चैकितानेयास्सामैवोपास्महे ।
कां त्वं देवतामुपास्स इति । सामैव भगवन्त इति होवाच ॥१॥
तं ह पप्रच्छ यदग्नौ तद्वेत्या इति । ज्योतिर्वाप्यतस्य साम्नो यद्वयं

८-रीक्स- । ९ नास्ति, अदितिर्माता..... अदितिरन्तरिक्षम् ।

१०-चै । ११-यो । १२-चैर् । १३-यम् । १४ इतिर्, इति ॥

१ (वाचा) आज । २ यं । ३-आह-इति । ४-स नहीं । ५-वत । ६ ता ।

सामोऽपास्मह इति ॥२॥ यत्तृधिव्या तद्वेत्या३ इति । प्रतिष्ठा वा
 एषा तस्य साम्नो यद्वय सामोपास्मह इति ॥३॥ यदप्सु तद्वेत्या३
 इति । शान्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वय सामोपास्मह इति ॥४॥
 यदन्तरिक्षे तद्वेत्या३ इति । आत्मा वा एष तस्य साम्नो यद्वय
 सामोपास्मह इति ॥५॥ यद्वायो तद्वेत्या३ इति । श्रीर्वा एषा तस्य
 साम्नो यद्वय सामोऽपास्मह इति ॥६॥ यदिच्छु तद्वेत्या३ इति ।
 व्याप्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वय सामोपास्मह इति ॥७॥ यदिग्नि
 तद्वेत्या३ इति । विभृतिर्वा एषा तस्य साम्नो यद् वय सामोपा-
 स्मह इति ॥८॥ १।१२॥

चतुर्दशेषुधाकेप्रथम खण्ड ।

यदादित्ये तद्वेत्या३ इति । तेर्जा वा एतत्तस्य साम्नो यद्वय
 सामोपास्मह इति ॥९॥ यच्चन्द्रमासि तद्वेत्या३ इति । भा वा एषा
 तस्य साम्नो यद्वय सामोपास्मह इति ॥१०॥ यद्वज्रत्रैषु तद्वेत्या३
 इति । मर्जा वा एषा तस्य साम्नो यद्वय सामोपास्मह इति ॥११॥
 यदग्ने तद्वेत्या३ इति । रेतो वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयसामोपास्मह

७ हाशिया पर लिखा है । ८ एतस्य । ९ नास्ति यद् इति ।
 १० नास्ति साम्नो ऽप । ११-हा । १२ नास्ति य स्मह ॥
 १ नास्ति । २ प्रजड । ३ नास्ति, 'पात्' में 'तव' ।

इति ॥४॥ यत्पशुपु तद्वेत्या३ इति । यशो वा एतत्तस्य साम्नो
यद्वय सामोपास्मह इति ॥५॥ यद्वचि तद्वेत्या३ इति । स्तोमौ वा एष
तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥६॥ यद्यजुपि तद्वेत्या३ इति ।
कर्म वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥७॥ अथ किं
उपास्स इति । अक्षरमिति । कतमत्तदक्षरमिति । यत्क्षरन्नाऽक्षीयते-
ति । कतमत्तत् क्षरन्नाऽक्षीयतेति । इन्द्र इति ॥८॥ कतमस्स इन्द्र
इति । योऽक्षत्रमत इति । कतमस्स योऽक्षत्रमत इति । इयं देवतेति
होऽवाच ॥९॥ योऽय चक्षुपि पुरुष एष इन्द्र एष प्रजापतिः । (स)
समः पृथिव्या सम आकोशन समोदिवा समस्सर्वेण भूतेन । एष
परो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासितव्यः ॥१०॥ स य
एतदेव वेद ज्योतिष्मान् प्रतिष्ठावाञ्छान्तिमानात्पवाञ्छीमान्
व्याप्तिमान् निभृतिमांस्तेजस्वी भारान् प्रज्ञावाचेतस्वी यशस्वी
स्तोमान् कर्मयानक्षरवानिन्द्रियवान् सामन्वीभवाति ॥११॥ तद्वे-
तद्वचाऽभ्यनूच्यते ॥१२॥ १।४३॥

चतुर्दशमेऽनुवाके द्वितीय खण्ड ।

४ नास्ति । ५ वो । ६ स्ते- । ७ 'स्स' के लिये स्थान छोडा है ।
८-९ । १०-११ । १०-क्ष । ११ इन्द्रमत । १२ सो । १३ नास्ति ।
१४-१५ । ११ दिव्य- । १६-स्तितव्य । १७-वी । १८ स्तोमान् ।
१९ उक् ॥

रूपं-रूपम्प्रतिरूपोबभूव तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणाय ।
 इन्द्रोमायाभिः पुरुरूपं ईयते युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादश ॥
 इति ॥१॥ रूपं-रूपम्प्रतिरूपो बभूवेति । रूपं-रूपं द्वेषप्रतिरूपो बभूव
 ॥२॥ तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणायेति । प्रतिचक्षणाय हाऽस्यैतद्रूपम्
 ॥३॥ इन्द्रो मायाभिः पुरुरूपं ईयते इति । मायाभिर्द्वेषे एतत्पुरु
 रूपं ईयते ॥४॥ युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादशेति । सहस्रं हेत आदि-
 तस्य रश्मयः । तेऽस्य युक्तास्त्रैरिदं सर्वं हरति । तद्यदेतैरिदं
 सर्वं हरति तस्माद्हरयः ॥५॥ रूपं रूपम्मघवा बोभवीति
 मायाः कृशवानः परितन्वं स्वाम् । त्रिर्यदिवः
 परि मुहूर्तमागात् स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावेति ॥६॥
 रूपं-रूपम्मघवा बोभवीतीति । रूपं-रूपं द्वेष मघवा बोभवीति
 ॥७॥ मायाः कृशवानः परितन्वं स्वामिति । मायाभिर्द्वेष एतत्स्वा
 तन्वं गोपायति ॥८॥ त्रिर्यदिवः परिमुहूर्तमागादिति । त्रिर्द वा
 एष एतस्य मुहूर्तस्येवाम्पृथिवी समन्तः पर्येतीमाः प्रजासंचक्षाणः
 ॥९॥ स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावेति । अनृतुपा द्वेष एतद्वतावा ॥१०॥ १४४
 चतुर्दशेऽनुवाके तृतीय खण्डः ।

१ पुरुरूपं, पुरुरूपं । २ रश्मयः । ३-या १४-पद्म । ५-पद्म । ६ रश्मयः ।
 ७ नास्ति, हरयश्च... सेऽस्य । ८ 'म' अधिक है । ९ मुहूर्त-१० नास्ति,
 इति । ११ पुनः विज्ञा है 'रूपंरूपं... धीर्त्तीप्रति (१) । १२ कृशवा ।
 १३-मि । १४ वा । १५ नास्ति । १६ अति । १७ नृतु-१८ कृता ॥

तद्ध पृथुर्वेन्यो दिव्यान्त्रासान्प्रच्छ—

इन्द्रमुक्थमृचमुद्गीथमाहुर्ब्रह्म साम प्राणं व्यानम् ।
मनो वा चक्षुरपानमाहुश्श्रोत्रं श्रोत्रिया बहुधावदन्ती-
ति ॥१॥ ते प्रत्युचुः—

अपय एते मन्त्रहृत पुराजा पुनराजायन्ते वेदानां गुप्तैकम् ।

ते वै विद्वानो वैन्य तददन्ति समानम्पुरुषम्द्रुधा निविष्टम्, इति ॥२॥

इमां ह वा तदेवतां त्रय्यां विद्यायामिमां समानामभ्येकं आप-
यन्ति नैके । यो ह वावैतदेवं वेद स एवतां देवतां सम्प्रति वेद
॥३॥ स एष इन्द्र उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति
नैवोद्गातुश्चोपगातृणां च विज्ञायते । इत एवोऽऽर्ध्वस्स्वरुदेति ।
स उपरि भूर्धो लेलायति ॥४॥ स विद्यादगमदिन्द्रो नेह कश्चन
पाप्मा न्यङ्गः परिशेच्यते इति । तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यङ्गः
परिशिष्यते ॥५॥ तदेतदभ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कंचन
भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते एवमेव न कंचन
भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥६॥ १।४५॥

चतुर्दशोऽनुवाके चतुर्थे ऋग्वेदे । चतुर्दशोऽनुवाकस्तस्मात्तः ।

१-इदम् । २ नो । ३ त्रय्यां, दृ-र्जा । ४ इमां । ५-ना । ६ न्य । ७ ह्ये ।
८ य धे । ९-पुन- । १० 'ति' अधिककरो । ११ ध्वौ । १२ स्वर । १३ परिषे- ।

प्रजापतिर्वा वेद अग्र आसीत् । सोऽकामयत बहुस्स्याम्प्रजोयेय
 भूमानं गच्छेयमिति ॥१॥ स षोडशधाऽऽम्भानं व्यकुरुत भद्रं च
 समाप्तिश्चाऽऽभूतिश्च सम्भूतिश्च भूतं च सर्वं च रूपं चाऽपरिमितं
 च श्रीश्च यशश्च नाम चाऽग्रं च सजाताश्च पयश्च महीयां च रसश्च
 ॥२॥ तद्यद्भद्रं हृदयमस्य तत् । ततस्संवत्सरमसृजत । तदस्य
 संवत्सरोऽनूपतिष्ठते ॥३॥ समाप्तिः रुमास्य तत् । कर्मणा हि
 समाप्नोति । ततश्चतुनसृजत । तदस्यर्तवोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ आ-
 भूतिरन्नमस्य तत् । (तच्) चतुर्धा भवति । ततो मासानर्धमा-
 सानहोरात्रायुपसोऽसृजत । तदस्य मासा अर्धमासा अहोरात्रायु-
 पसोऽनूपतिष्ठन्ते ॥५॥ सम्भूतीं रेतोऽस्य तत् । रेतसो हि सम्भव-
 ति ॥६॥ १।४६॥

पञ्चदशोऽनुवाके प्रथम खण्ड ।

ततश्चन्द्रमसमसृजत । तदस्य चन्द्रमा अनूपतिष्ठते । तस्मात्स
 रेतसः प्रतिरूपः ॥१॥ भूतम्प्राणोऽस्य सः । ततो वायुमसृजत ।
 तदस्य वायुरनूपतिष्ठते ॥२॥ सर्वमपानोऽस्य सः । ततः पथूनसृजत ।
 तदस्य पशवोऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ रूपं न्यानोऽस्य सः । ततः प्रजा

१-चे । २-यो । ३-अन्ते । ४ 'त' अधिक है । ५ तद् ।

नास्ति । ६ अचर्चा, अर्घा । ७-ति, -ता, त ।

१-त । २-या । ३ ऊपरवाचो ।

असृजत । तदस्य प्रजा अनृपतिष्ठन्ते । तस्मादासु प्रजासु रूपाण्य-
धिगम्यन्ते ॥४॥ अपरिमितम्मनोऽस्य तत् । ततो दिशोऽसृजत ।
तदस्य दिशोऽनृपतिष्ठन्ते । तस्मात्ता अपरिमिताः । अपरिमितमिव हि
मनः ॥५॥ श्रीर्वागस्य सा । ततस्समुद्रमसृजत । तदस्य समुद्रो-
ऽनृपतिष्ठते ॥६॥ यमस्तपोऽस्य तत् । ततोऽग्निमसृजत । तदस्या-
ऽग्निरनृपतिष्ठते । तस्मात्स मथितादिव सन्तप्तादिव जायते ॥७॥
नाम चक्षुरस्य तत् ॥८॥ १।४७॥

पञ्चदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तत्र आदित्यमसृजत । तदस्यादिसोऽनृपतिष्ठते ॥१॥ अग्र-
म्भूर्धास्य सः । ततो दिवमसृजत । तदस्य द्यौरनृपतिष्ठते ॥२॥
सजाता अङ्गान्यस्य तानि । अङ्गैर्हि सह जायते । ततो वनस्पती-
नसृजत । तदस्य वनस्पतयोऽनृपतिष्ठन्ते ॥३॥ पर्यो लोमान्यस्य
तानि । तत ओपथीरसृजत । तदस्यौपथयोऽनृपतिष्ठन्ते ॥४॥ महीयो-
षाँसान्यस्य तानि । माँसैर्हि सह महीयते । ततो वयोँस्यसृजत ।
तदस्य वयोँस्यनृपतिष्ठन्ते । तस्मात्तानि प्रपतिष्णुनि । प्रपतिष्णुनी-

४-यते । ५ नास्ति, ततो.....तस्मात् । ६ नास्ति । ७ तस्य ।
८ मथितामिद्, मथितिताद् ॥

१ अंगान्य, अंगहान्य, अङ्गम् । २ ता । ३ मैर् । ४ नास्ति,
पयो.....अनृपतिष्ठन्ते । ५ मभिया, महिया । ६ ता ।

एव महामाँस्तानि ॥५॥ रसो मज्जाऽस्य सः । ततः पृथिवीमसृजत ।
 तदस्य पृथिव्यनूपतिष्ठते ॥६॥ स ह्येवं पौंड्रशथाऽऽत्मानं विकृत्य
 सार्धं समैव । तद्यत्सार्धं समैतत् तत्साम्नस्सामत्वम् ॥७॥ स एवैष
 द्विरणमयः पुरुष उदतिष्ठत्प्रजानां जनिता ॥८॥ १।४८॥

पञ्चदशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

देवाऽमुरा अस्पर्धन्त । ते देवाऽमजापतिमुपाधावाज्यामाऽमु-
 रानिति ॥१॥ सोऽब्रवीन्न वै मां यूयं वित्य नाऽमुराः । यद्वै मां यूयं
 विद्यात् ततो वै यूयमेव स्यात्, पराऽमुराभवेयुरिति ॥२॥ तद्वै
 ब्रूहीऽऽब्रुवन् । सोऽब्रवीत्पुरुषः मजापतिस्सामेति मोऽपाद्भवम् ।
 ततो वै यूयमेव भविष्यथ पराऽमुरा भविष्यन्तीति ॥३॥ तं पुरुषः
 मजापतिस्सामेऽत्युपासत । ततो वै देवा अभवन् पराऽमुराः । स
 यो ह्येवं विद्वान्पुरुषः मजापतिस्सामेऽत्युपास्ते भवत्यात्मना पराऽस्य
 द्विपन् भ्रातृव्यो भवति ॥४॥ १।४९॥

पञ्चदशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । पञ्चदशोऽनुवाकस्तमाप्तः ।

— ०: —

७ महीम-न ए मज्ज्या । सन्ते । १० समैवः सत्यभावात्,
 'तद्यत्सार्धं समैतत्' (!) पुनः द्वि । ११ जयिता ॥

१ एवम् । २-येत् । ३-हिं ॥

देवा वै विजिग्याना^१ अब्रुवन्दितीयं करवामहै । माऽद्वितीया
 भूमेति । तेऽब्रुवन् सामैव^२ द्वितीयं करवामहै । सामैव नो द्वितीय-
 मस्त्विति ॥१॥ त इमे चावापृथिगी^३ अब्रुवन् समेतं साम प्रजनयत-
 मिति ॥२॥ सौऽसावस्या^४ अवीभत्सत । सौऽब्रवीद्बहु वा एतस्यां
 किं चकि च कुर्वन्सधिष्ठीवन्सधिचरन्सध्यासते । पुनीतन्वेनामपूता
 वा इति ॥३॥ ते गाथामब्रुन्त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति ।
 शतसनिस्स्या इति । तथेति । ते गाथयाऽपुनन् । तस्मादुत गाथया
 शतं मुनोति ॥४॥ ते कुम्ब्यामब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं तंत-
 स्स्यादिति । शतसनिस्स्या इति । तथेति । ते कुम्ब्या-
 ऽपुनन् । तस्मादुत कुम्ब्यां शतं मुनोति ॥५॥ ते नाराशंसीमब्रु-
 वन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतसनिस्स्या इति ।
 तथेति । ते नाराशंस्याऽपुनन् । तस्मादुत नाराशंस्या शतं मुनोति
 ॥६॥ ते रैभीमब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतस-
 निस्स्या इति । तथेति । ते रैभ्याऽपुनन् । तस्मादुत रैभ्या शतं

१- विजिज्ञाना । २ वा । ३ सा । ४ अवीभत्- । ५-ष्ठिष्- ।
 ६-नि,-नी । ७-भ्य- । ८ '५' पुन. । लिखा है । ९ तेन । १० शतनी ।
 ११-भिम् । १२ त ॥

मुनोति ॥७॥ मेयम्पृना । अथाऽमुमप्रवीद्धु वै किं च किं च
 पुमँश्चगति । त्वमनुपुनीप्येति ॥८॥ १।५०॥

यादृशान्तरात् प्रथम गगड ।

स फेलेवेनाऽपुनीत । पृतानि ट ग तस्य सामानि पृता
 ऋचः पृतानि यजेपि पृतमनृक्तम्पृत मरिभ्रमरतियएव वेद ॥१॥
 ते समेत साम प्राजनयताम् । तत्रत्समेत साम प्राजनयता तत्सा-
 ऋस्तसामन्वम् ॥२॥ तद्विद साम छष्टमद उन्क्रम्य लेलायदतिष्ठत ।
 तस्य सर्व देवा ममन्विन आसन्मम ममेति ॥३॥ तेऽबुयन्वीद-
 म्भनामहा इति । तस्य विभागे न समपादपन । तान्प्रजापतिर-
 म्भरीदपेत । मम वा एतत् । अद्यमेव वो विभक्ष्यामीति ॥४॥
 सोऽभिप्रतीत्त वै मे ज्येष्ठ पुत्राणाममि । त्वम्प्रथमो टणीप्येति
 ॥५॥ सोऽत्रवीन्मन्द्र साञ्चो द्युगेऽन्नाग्मिति । स य एतद्वायाद-
 चाद एव सोऽग्न्यामु स देवानामृच्छात्र एव विद्राँसमेतद्रायन्त-
 मुपवदादिति ॥६॥ अथन्द्रमन्त्रीत्त्वमनुटणीप्येति ॥७॥ सोऽन्न-

१३ नम ।

१-एव-१ एखवेना । २-याम् । ३ प्रज्ञ-१ ४-अत् । ५ मे ।

६ 'वीश्वर' के लिय स्थान खाली है, चीदा । ७ मयिष्य-१ ८ भियम् ।

९ गायत्राच्च । १० क्रीमात् । ११ अथ । १२ गोमम ।

वीदुग्र^{१०} साम्नो वृणे श्रियमिति । स^{१५} य एतद्गायाच्छ्रीमानेव सोऽस-
 न्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्रो^{१५}समेतद्रायन्तमुपवदादिति ॥८॥
 अथ सोममन्नवीच्वमनुवृणीश्वेति ॥९॥ सोऽन्नवीद्वल्गु साम्नो वृणे
 प्रियमिति । स य एतद्गायात्प्रिय एव स कीर्नेः प्रियश्चक्षुपः प्रिय-
 स्सर्वेपामसन् मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्रो^{१५}समेतद्रायन्तमुप-
 वदादिति ॥१०॥ अथ बृहस्पतिमन्नवीच्वमनुवृणीष्येति ॥११॥
 सोऽन्नवीत्क्रौञ्चं साम्नो वृणे ब्रह्मवर्चसमिति । स य एतद्गायाद्ब्रह्म-
 वर्चस्येव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्रो^{१५}समेतद्रायन्तमुप-
 वदादिति ॥१२॥ १।५१॥

पोटशेऽनुवाके द्वितीय खण्ड ।

अथ विद्वान्देवानन्नवीच्यमनुवृणीध्वमिति ॥१॥ तेऽन्नुवन्नैश्व-
 देवं साम्नो वृणीमहे मजनमिति । स य एतद्गायात्प्रजावानेव सोऽस-
 दस्मानु^१ देवानामृच्छाद्य एवं विद्रो^{१५}समेतद्रायन्तमुपवदादिति ॥२॥
 अथ पशुनन्नवीच्यमनुवृणीध्वमिति ॥३॥ तेऽन्नुमन्दायुर्वा अस्माक-
 मीशे । स एव नो वरिष्यत^३ इति । ते यायुश्च पशयश्चाद्युवन्निरुक्तं साम्नो

१३ वत्गु । १४ प्रियम् । १५ नास्ति, स य * 'सोऽन्नवीद् ६ में ।
 १६ गायत्रच् । १७ नास्ति । १८ लुट्-।

१ 'म' अधिक है । २ नीचे से 'च स धायु' अधिक लेता है ।
 ३ वरिष्ठ । ४ अनिर-।

दृशीमहे पशव्यमिति । स य एतद्गायात्पशुमानेव सोऽसदस्मानु च
 स वायुं च देवानामृच्छाय एवं विद्वांसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥४॥
 अथ प्रजापतिरब्रवीदहमनुवारिष्य इति ॥५॥ सोऽब्रवीदनिरुक्तं
 साम्नो दृशो स्वर्ग्यमिति । स य एतद्गायात्स्वर्गलोक एव सोऽसन्मामु
 स देवानामृच्छाय एवं विद्वांसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥६॥
 अथ वरुणमब्रवीच्चमनुदृशीष्येति ॥७॥ सोऽब्रवीद्यद्वो न कश्चना-
 ऽदृत्त तदहम्परिहरिष्य इति । किमिति । अपध्वान्त साम्नो दृशोऽपश-
 व्यमिति । स य एतद्गायादपशुरेव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाय
 एतद्गायादिति ॥८॥ तानि वा एतान्यष्टौ गीतागीतानि साम्नः ।
 इमान्यु ह वै सप्तगीतानि । अथेयमेव वारण्यागाऽगीता ॥९॥ स
 यां ह कां चैरं विद्वानेतासां सप्तानामागानां गायति गीतमेवास्य
 भवत्येतानु कामात्राध्नाति य एताद्यु वामाः । अथेयामेव वारुणी-
 मार्गां न गायेत् ॥१०॥ १।५२॥

षोडशोऽनुवाके तृतीय खण्डः । षोडशोऽनुवाकस्तमातः ।

—:०—

५-युय । ६ 'इति' तत्र शेष नहीं लिखा । ७ ति । ८ स्वर्गम् ।
 ९ समुत् । १०-दृश्य-य-, यत् । ११ अपध्मातम्, अपध्मातम् । १२
 पशु- । १३ ऋद्धाद् । १४-य, रथ । १५-य् । १६ कामा । १७ नीरुध्-
 निर्भ्रमेति ॥

द्वयं वाचेदमग्र आसीत्सन्नैवासच्च ॥१॥ तयोर्यत् सत्
 तत्साम तन्मनस्स प्राणः । अथ यदसत्सकं सा वाक् सोऽपानः ॥२॥
 तद्यन्मनश्चप्राणश्च तत्समानम् । अथयावाक् चापानश्चतत्समानम् ।
 इदमायतनम्मनश्च प्राणश्चेदमायतनं वाक् चापानश्च । तस्मात्पुमा-
 न्द्वान्निगतो योपामुपशेते ॥३॥ सेयमृगास्मिन् सामन् मियुनमै-
 ष्छत् । तामृच्छन् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् । अथ वा
 अहममोऽस्मीति ॥४॥ तद्यत्सा चाऽमश्चतन् सामाऽभवत्
 तत्साम्नरसामत्वम् ॥५॥ तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा
 वै मम त्वमस्यन्यत्र मियुनमिच्छस्वेति ॥६॥ साऽब्रवीन्न वै तं विन्दा-
 मि येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति । सा वै पुनीधेत्यब्रवीत् ।
 अपूता वा असीति ॥७॥ साऽपुनीत यदिदं विप्रां वदन्ति तेन ।
 साऽब्रवीत्स्वैदम्भविष्यतीति । मत्पूहेत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां
 जीवनं वा एतद्भविष्यतीति । तथेति । तत्प्रत्योहत् । तस्मादेपाधीरेव
 प्रजानां जीवनमेव ॥८॥ पुनीधेत्यब्रवीत् । साऽपुनीत गायया
 साऽपुनीत कुम्भयया साऽपुनीत नारागँस्या साऽपुनीत पुरारोति-

१ म्यक्-अस्म्यदद्य भवितेऽति, (अम्य) भवितेति । २-ना ।
 ३ उपयशेते । ४-म । ५ सम्भवेत् । यम् । ६ 'वा' अधिक है । ७ प्रा,
 रिप्रा । ८ त्वे । ९ त्वत् । १०-म्भ-, 'या' अधिक है ।

हासेम साऽपुनीत यदिदमादाय नाऽऽगायन्ति तेन ॥१॥ साऽब्र-
 वीत्केदम्भविष्यतीति । प्रत्पृहेत्यब्रवीत् । ग्रीर्णा एषा । प्रजाना
 ज्विन वा एतद्गविष्यतीति । तद्येति । तत्पत्यौहत् । तस्मादेपा
 धीर्वेप्रजाना जीवनम्वेत् ॥१०॥ पुनीत्वैवेत्यब्रवीत् ॥११॥ ११५३॥

सप्तदशोऽनुवाक प्रथम खण्ड ।

सा मनुनाऽपुनीत । तस्माद्भुत प्रह्वचारी मधु नाऽश्रीयाद्वेदस्य
 पन्ना^१ इति । वाम ह त्वाचार्यदत्तगन्नीयात् ॥१॥ अथर्क गामा-
 ब्रवीद्बहु वै किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्येति । स
 भरण्डकेष्णेनाऽपुनीत । पृतानि ह वा अस्य सामानि पृता ऋचः
 पूतानि यज्मिं पूतमनूक्तम्पूत सर्वम्भवति य एव वेद ॥२॥ ताभ्या
 सदो मिथुनाय पर्यश्रयन् । तस्माद्भुपरसथीया^५ रारिं सदसिं न
 शयीत् । अत्र होताऽऽसामे एपरसथीया^५ रारिं सदसिं सम्भवतः ।
 स यथा श्रेय स उपट्टं^६ हि शशदीश्वरोऽनुलन्^७ पराभरितोः
 ॥३॥ अथो आहुद्गतुर्मुखे सम्भवतः । उद्गतुरेव मुख नैत्ते-

११ इमम् । १२ मादायना, आदायना ॥

१ सारे पद का पुनर्लेख है । २ स 'कामम्' के स्थान में ।
 मा सर्वत्र है । ३ हरण्डकेष्णेना भरण्ड, भरण्डकेष्णेना । ४-यन् ।
 ५-धीयाम्, -दायाम् । ६-इं । ७ यीत, येत । ८-य- । ९, अद् ।
 १० अनुलन्व, अनुलन्व- ।

वेति ॥४॥ तदु वा आहुः कामेवोद्गतुर्मुखमीक्षेत । उपवसथीयाम्भे-
 वैतां रात्रिं सदसि न क्षयीत । अत्र धैरैतावृक्वामो उपवस्थीयां^{१२} ।
 रात्रिं सदसि सम्भवत इति ॥५॥ तां सम्भविष्यन्नाहाऽमोऽहम-
 स्मि सा त्वं सा त्वमस्यमोऽहम् । सा मामनुव्रता भूत्वा प्रजाः प्रज-
 नयावहे । एहि सम्भवानहा इति ॥६॥ तां सम्भवन्नत्यरिच्यत^{१६}
 सोऽब्रवीन्न वै त्वाऽनुभवामि । विगड् भूत्वा प्रजनयावेति ।
 तयेति ॥७॥ तां विराड्भूत्वा प्राजनयताम् । द्विङ्कारश्चाऽऽहावश्च^{१७}
 प्रस्तावश्च प्रथमा चोद्गीथश्च मध्यमा च प्रतिहारश्चोत्तमा च निधनं
 च षपटकारश्चैव^{१८} विराड् भूत्वा प्राजनयताम्^{१९} । ते अमुमजनयतां
 योऽसौ तपति । ते व्यद्व्रताम्^{२०} ॥८॥ १।५४॥

सप्तदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

मदध्यभुः३मदध्यभूः३दिति । तस्मादाहुर्मधुपुत्रं इति ॥१॥
 तस्मादुतस्त्रियो मधु नाऽश्नन्ति पुत्राणामिदं व्रतं चराम इति वदन्तीः
 ॥२॥ तदयं तृचोऽनृदश्चयत । इयमेव गायत्र्यन्तरिक्षं त्रिष्टुवसौ
 जगती । तस्यैतत्तृचः ॥३॥ स उपरिष्ठात्सामाऽभ्याहितं तपति ।

११ न । १२-थी- । १३ 'रख' अधिक है । १४-प्र- । १५ संभवत ।
 १६ आत्यरिच्यते । १७ हें- । १८ च । एवम् । १९ प्रंज- ।
 २० व्यहपताम्, म्यहयताम्, व्यहपताम् (?) ॥

१-आ । २ इदम् । ३-ईच्- ।

सोऽध्रुव इवासीदनेलायद्विच । स नोर्ध्वोऽनपत् ॥१॥ स देवा-
 नव्रवीदुन्मा गायतेति । किं ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् ।
 मामिह हँहेतेति ॥१॥ तयेति । तमुदगायन् । तमेतदत्राऽहँहन् ।
 तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा देवानांश्रीः ॥१॥ तत एतदूर्ध्वस्तपति ।
 स नार्वाटतपत् ॥७॥ स ऋषीनव्रवीदनु मा गायतेति । किं
 ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हँहेतेति ॥८॥ तथेति ।
 तमन्वगायन् । तमेतदत्राहँहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा ऋषीणां
 श्रीः ॥९॥ तत एतदर्वाह तपति । स न तिर्यहँ भ्रतपत् ॥१०॥
 स गन्धर्वाप्सरसोऽव्रवीदामा गायतेति । किं ततस्स्यादिति ।
 श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हँहेतेति ॥११॥ तयेति । तमगायन् ।
 तमेतदत्राऽहँहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा गन्धर्वाप्सरसां
 श्रीः ॥१२॥ तत एतन् तिर्यहँ तपति ॥१३॥ तानि वा एतानि
 त्रीणि साम्न उद्गीतमनुगीतमागीतम् । तद्यथेदं वयमागायोऽद्यायाम्
 एतदुद्गीतम् । अथ यद्यथागीतं तदनुगीतम् । अथ यत्किंचेति सा-
 म्नस्तदागीतम् । एतानि ह्येव त्रीणि साम्नः ॥१४॥ १।५५॥

सप्तदशोऽनुयाके तृतीयः खण्डः । सप्तदशोऽनुयाकस्समाप्तः ।

१०:

४ सू-५-१ ५ हुँहेते । ६ उदगात् । ७-दत् । ८ तप्-१-६ तिर्यहँ ।
 १० त । ११ तिर्यहँ । १२ आगयां, आगेयो- । १३-धम् ॥

आपो वा इदमग्रे महत्सलिलमासीत् । स ऊर्मिर्लर्मिमस्कन्दत् ।
 ततो हिरण्यमयौ कुक्ष्या^२ समभवतां ते एव^३कसामे^४ ॥१॥ सेयगृगिदं
 सामाऽभ्यप्लवत्^५ । तामपृच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् ।
 अथ वा अहममोऽस्मीति । तद्यत्मा चाऽपश्च तत्साम्नस्सामत्वम् ॥२॥
 तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा वै मम त्वमसि । अन्यत्र
 मिथुनमिच्छस्येति ॥३॥ मा पराप्लवत्^६ मिथुनमिच्छमाना । सा
 समाससहस्रं सप्ततीः पर्यप्लवत् ॥४॥ तदेष श्लोकः—

न्नी र्नेवाऽग्रे सचरतीच्छन्ती सलिले पतिम् ।

ममाम्महस सपती स्ततोऽजायत पश्यत, इति ॥५॥

असौ वा आदित्यः पश्यतः^९ । एष एव तदजायत । एतेन
 हि पश्यति ॥६॥ साऽविच्चा^{११}न्यप्लवत् । साऽब्रवीन्न^{१२}वैतंविन्दामि
 येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति ॥७॥ सा वै द्वितीयामिच्छ-
 स्वस्यब्रवीन्न^{१३} वै मैकोऽद्यंस्यसीति । सा द्वितीयां^{१४} विच्चा^{१५} न्यप्लवत्
 ॥८॥ (तृतीयाम्) इच्छस्वैव^{१६}स्यब्रवीन्नो^{१७} वाव^{१८} मा द्वे^{१९} उद्यंस्यथ
 इति । सा तृतीयां^{२०} विच्चा^{२१} न्यप्लवत् । सोऽब्रवीद्द^{२२}न्न^{२३} वै मोऽद्यंस्यथेति^{२४}

१-द । २ कुक्ष्यौ । ३ येष । ४ कसामे- ५ ह्यम्- ६ परा- ७ सप्तती । ८-ति । ९ पश्यतः । १० तम् । ११ पित्वा । १२ नास्ति
 सा.....न्यप्लवत् । १३-यम् । १४ वै । १५ वा । १६ स्यात् छोडा
 दुष्ठा है, ध्वे । १७ ह्यम्- १८-स्यसी ।

॥६॥ स यदेकयाऽग्रे समवदत्^{११} तस्मादेकचे^{१०} साम । अथ यद्वै अपा-
 सेधत्तस्माद्द्वयोर्न^{१२} कुर्वन्ति । अथ यत् तिसृभिस्समपादयत्^{१३} तस्माद्
 तृचेसाम ॥७॥ ता अववीत्पुनीर्ध्वंनपृता वै स्येति ॥११॥ १.१५६॥

अष्टादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सा गायत्री गाययाऽपुनीत नाराशंस्यानिष्टुवैभ्या जगती ।
 भीमम्भरत^१ मनमपावधिपतेति । तस्माद्भीमलाभियो वा एताः । धियो
 वा इमा मनमपावधिपतेति । तस्माद्भीमलाः । तस्माद्गायता^२
 नाऽभीयात् । मन्त्रेण ह्येते जीवन्ति ॥१॥ अथर्कं^३ सामाऽध्ववीद्ब्रह्म वै
 किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्येति । स ऊर्ध्वगणैना-
 ऽपुनीत ॥२॥ पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः पूतानि
 यजूंषि पूतमनृक्तम्पूतं सर्वम्भरति य एवं वेद ॥३॥ ताभ्यां
 दिशो मिथुनाय पर्याहन् । तां सम्भविष्यन्नहयताऽमोऽहमस्मि सा
 त्वं सा त्वमस्यमोऽहमिति ॥४॥ तामेतदुभयतो वाचाऽऽरिच्यन्
 दिङ्कारेण पुरस्तात्स्तोभेन मध्यतो निधनेनोपरिष्ठात् । अतितिस्रो
 ब्राह्मणायनीस्सदृशी रिच्यते य एवं वेद ॥५॥ तयोर्यस्सम्भवतो-

१६-पद-। २० तिस्र-। २१ सम्भ-॥

१-स्येति । २ य । ३-धे । ४-सा । ५ इती-। ६ किं । ७-तानी ।

८-ता । ९ नृप-। १०-प्यन्-। ११ अथचयन, अहयन्त । १२ साम

१३-धे । १४ त्यरुच्यते ।

रुध्वशूषोऽद्रवत् (प्राणास्) ते । ते प्राणा एवोर्ध्वा अद्रवन् ॥६॥
 सोऽसावादिसस्स एष एव उदगिरैव गी चन्द्रमा एव धम् ।
 सामान्येव उदच एव गी यज्ञेष्वेव थमित्यधिदेवतम् ॥७॥ अथा-
 ऽध्यात्मम् । प्राण एव उद्रागेव गी मन एव थम् । स एषोऽधिदेवतं
 चाऽध्यात्मं चोद्गीयः ॥८॥ स य एवमेतदधिदेवतं चाऽध्यात्मं
 चोद्गीयं वेदैतेन हास्य सर्वेणोद्गीतम्भवसेतस्माद् एव सर्वस्मादा-
 दृश्यते य एवं विद्वांसमुपवदति ॥९॥ १।५७॥

अष्टादशेऽनुवाके द्वितीय पत्रम् ।

तद्यदिदमाहुः क उदगासीरिति क एतमादित्यमगासीरिति
 ह वा एतत्पृच्छन्ति ॥१॥ एतं ह वा एतं त्रय्यां विद्यया गायन्ति ।
 यथा वीणागायिनो गाययेयुरेवम् ॥२॥ स एष हृद्ः कामानाम्पृणो
 यन्मनः । तन्मैषा कुल्या यद्वाक् ॥३॥ तत्रथा वा अपो हृदाकु-
 ल्ययोऽपरामुपनयन्त्येवमेवैतन्मनसोऽधि वाचोऽज्ञाता यजमानम्
 यस्य कामान् प्रयच्छति ॥४॥ स य उद्रातारं दक्षिणाभिराराधयति

१५ सु- १६ द्र- १७ ऽद्वा- १८ गीध- १९-गीध-
 २० भवत्येति, भवन्ति ॥

१-सो । २ प्रच्छन्त्य् । ३ नृच्या । ४-गायिनो, गायन्- । ५ हृद्- ।
 ६ कुल्- । ७ यत् । ८ वात् । ९-त्र । १० अदो । ११-यन्त्य्, -यन्ते,
 -यन्त्य् । १२-ना । १३ दक्षिणोभि । १४ राध- ।

तं सा कुल्योऽपधावति । य उ एनं नाऽऽराधयति स उ तामपि-
हन्ति ॥५॥ अथ वा अतः^{१५} प्रतिश्वैव^{१६} प्रतिग्रहश्च । तद्धूममिति वै^{१७}
प्रदीयते । तद्वाचा यजमानाय प्रदेयम्मनसाऽऽत्मने^{१८} । तथा ह सर्वे
न मयच्छति ॥६॥ तद्यद्विदं सम्भवतो रेतोऽसिन्यत^{१९} तदशयत्^{२०} ।
यथा हिरण्यमधिकृतं^{२१} लेलायदेवम् ॥७॥ तस्य सर्वे देवा ममत्विन
आसन्मम भवेति । तेऽद्युवन्गीदं करवामहा इति । तेऽद्युवञ्छ्रेयो वा^{२२}
इदमस्मत् । आत्मभिरेवैनद्विकरवामहा इति ॥८॥ तद्वात्मभिरेव
व्यकुर्वत । तेषां वापुरेव हिङ्गार आसाऽग्निः प्रस्ताव इन्द्र आदि-
स्तोमवृहस्पती^{२३} उद्गीथोऽश्विनौ प्रतिहारो विश्वे देवा उपद्रवः
मजापतिरेव निधनम् ॥९॥ एता वै सर्वा देवता एता हिरण्यम् ।^{२४}
अस्य सर्वाभिर्देवताभिस्तुतम्भवाति य एवं वेद । एताभ्य उ एव स
सर्वाभ्यो देवताभ्य आद्यञ्च्यते य एवं त्रिद्वौ समुपवदति ॥१०॥ १।५८॥

अष्टादशोऽनुवाके तृतीयः खण्ड ।

अथ ह ब्रह्मदत्तश्चैकितानेयः कुरुजगामाऽभिप्रतारिणो^१ काक्ष-
सेनिम् । स हाऽस्मै मधुपर्कं ययाच ॥१॥ अथ हास्य वै मपद्य^२ पुरो-

१ अथ । १६ प्रतिश्व । १७ धुं- । १८ आत्- । १९ सिन्धु- ।
२० दश- । २१ अपि- , अपितृतं । २२ या । २३ स्तोमाद्य- । २४ हिरण्यम् ॥

१ क- , आत्- । २ एक मे यहां हि समाप्ति है । ३-य ।

हितोऽन्ते निपसाद् शौनकः । त हाऽनामन्त्र्यं मधुपर्कम्पौ ॥२॥
 त होवाच किं विद्वात्रो दालभ्याऽनामन्त्र्यं मधुपर्कम्पिवसीति ।
 सामवैर्यम्प्रपद्येति होवाच ॥३॥ त ह तत्रैव पप्रच्छ यद्वा यौ
 तद्वेत्या इति । हिद्धारो वा अस्य स इति ॥४॥ यदमौ तद्वेत्या इ-
 इति । प्रस्तावो वा अस्य स इति ॥५॥ यदिन्द्रे तद्वेत्या इति ।
 आदिर्वा अस्य स इति ॥६॥ यत्सोमवृहस्पत्योस्तद्वेत्या इति । उद्-
 गीथो वा अस्य स इति ॥७॥ यदश्विनोस्तद्वेत्या इति । प्रतिहारो
 वा अस्य स इति ॥८॥ यद्विश्वेषु देवेषु तद्वेत्या इति । उपद्रवो
 वा अस्य स इति ॥९॥ यत्प्रजापतौ तद्वेत्या इति । निधनं वा
 अस्य तदिति होवाच । आर्षेयं वा अस्य तद्वन्धुता वा अस्य
 सेति ॥१०॥ स होवाच नमस्तेऽस्तु भगवो विद्वानपा मधुपर्कमिति
 ॥११॥ अथ हेतरः पप्रच्छ किं देवसं सामवैर्यम्प्रपद्येति । यद्देवसा-
 मु स्तुवत इति होवाच तद्देवसमिति ॥१२॥ तदेतत् साम्भवेव
 मत्युक्तम् । व्याप्तिर्वा अस्यैपेति होवाच ब्रूयेवेति । मेदं ते नमो-
 ऽकर्मेति होवाच । मैत्र नोऽतिप्राप्तीरिति ॥१३॥ स होवाचाऽप्रच्यं

४-मन्त्र । ५ सामवैर्यं, 'र' रहित । ६ तत् । ७ सोमाङ्ग-
 ८ 'द-' का पुनर्लेख । ९ नास्ति । १० अन्वय । ११-वत्या ।
 १२ सामवैर्यं । १३-उक्तम् ।

धाव त्वा देवतामप्रक्षयं वाव त्वा देवतायै देवताः । वाग्देवसं साम
 वाचो मनो देवता मनसः पशवः पशूनामोपधय ओपधीनामापः ।
 तदेतद्दृश्यो जातं सामाऽप्यु मतिष्ठितमिति ॥१४॥ १।५-६॥

अष्टादशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

देवामसुरा अभिर्षन्त । ते देवा मनसोदगायन् । तदेपामसुरा
 अभिर्षन्त पाप्मना समसृजन् । तस्माद्बहु किं च किं च मनसा
 ध्यायति । पुण्यं चैनेन ध्यायति पापं च ॥१॥ ते वाचोदगायन् ।
 तां तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च किं च वाचा वदति । सर्वं
 चैनया वदत्यनृतं च ॥२॥ ते चक्षुषोदगायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन्
 तस्माद्बहु किं च किं च चक्षुषा पश्यति । दर्शनीयं चैनेन पश्यत्य
 दर्शनीयं च ॥३॥ ते श्रोत्रेणोदगायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु
 किं च किं च श्रोत्रेण शृणोति । श्रवणीयं चैनेन शृणोत्यश्रवणीयं
 च ॥४॥ तेऽपानेनोदगायन् । तं तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च
 किं चाऽपानेन जिघ्रति । सुरभि चैनेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥५॥
 ते प्राणेनोदगायन् । अयामसुरा आद्रवँस्तथा करिष्याम इति
 मन्यमानाः ॥६॥ स यथाऽऽमानमृत्वा लोष्टो विध्वँसेतैवमेवाऽसुरा

१४ म्यो ।

१-ऽगाय- २-प्रक्षय अथवा-द्रव्य । ३-सृज- ४-ध । ५-सूर-
 ६-स्य । ७-वै । ८-नास्ति । ९-गाय ।

ध्वँसन्तं^{१०} । स एषोऽश्माऽऽस्वर्णं^{११} यत्प्राणः ॥७॥ स यथाऽश्मान-
मास्वर्णमृत्वा लोष्टो विध्वंसत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्वाँ-
समुपनदति ॥८॥ १६०॥

अष्टादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टादशोऽनुवाकस्तमातः ।

[इति प्रथमोऽध्यायः ।]

—:०—

१० सते, पन्ता । ११-शौ । १२ आयोम् ।

[अथ द्वितीयोऽध्यायः ।]

देवानां वै पदुद्गातार आसन् वाक् च मनश्च चक्षुश्च
 श्रोत्रं चाऽपानश्च भाणश्च ॥१॥ तेऽधियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै
 येनाऽपहृत्य मृत्युमपहृत्य पाप्मानं स्वर्गलोकमियामेति ॥२॥ तेऽद्भुवन्
 वाचोद्गात्रा दीक्षामहा इति । ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव
 वाचा वदति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥३॥
 तां पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स
 पाप्मा ॥४॥ तेऽद्भुवन् न वै नोऽयम् मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् ।
 मनसोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥५॥ ते मनसोद्गात्राऽदीक्षन्त । स
 यदेव मनसा ध्यायति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवे-
 भ्यः ॥६॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति
 स एव स पाप्मा ॥७॥ तेऽद्भुवन् नो न्वाव नोऽयम् मृत्युं न
 पाप्मानमसवाक्षीत् । चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥८॥ ते चक्षुषो-
 द्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव चक्षुषा पश्यति तदात्मन आगायदथ य
 इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥९॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव
 चक्षुषा पापमपश्यति (स एव स पाप्मा) ॥१०॥ तेऽद्भुवन्नोन्वाव

नोऽयममृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति
 ॥११॥ ते श्रोत्रेणोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव श्रोत्रेण शृणोति
 तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१२॥ तत्पाप्मा-
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा
 ॥१३॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽयम मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् ।
 अपानेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१४॥ तेऽपानेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ।
 स यदेवाऽपानेनाऽपानिति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामा-
 स्तान्देवेभ्यः ॥१५॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेवाऽपानेन पापं
 गन्धमपानिति स एव स पाप्मा ॥१६॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽय-
 ममृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१७॥
 ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव प्राणेन शृणोति तदात्मन
 आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१८॥ तत्पाप्मानाऽन्वसृज्यत ।
 न ह्येतेन प्राणेन पापं वदति न पापं ध्यायति न पापमपश्यति न
 पापं शृणोति न पापं गन्धमपानिति ॥१९॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य
 पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन् । अपहस्य ह्येव मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं
 लोकमेति य एवं वेद ॥२०॥ २।१॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

८ अपाविति ।

सा या सा वागासीत्सोऽग्निरभवत् ॥१॥ अथ यत्तन्मन
 आसीत् स चन्द्रमा अभवत् ॥२॥ अथ यत्तच्चतुरासीत् स
 आदिसोऽभवत् ॥३॥ अथ यत्तच्छ्रोत्रमासीत्ता इमा विशोऽभवन् ।
 ता उरवनिश्वेदेवाः ॥४॥ अथ यस्सोऽपान आसीत्स बृहस्पतिरभवत् ।
 यद्रस्ये वाचो बृहस्यै पतिस्तस्माद्बृहस्पतिः ॥५॥ अथ यस्त प्राण
 आसीत्स मजारातिरभवत् । स एष पुत्री मजावाजु^१रीपो यः प्राणः ।
 तस्य स्वर एव मजाः । मजारान्भवति य एषं वेद ॥६॥ तं ह्येतमेके
 मसक्तमेव भाषन्ति प्राणाः ३ प्राणाः ३ प्राणाः ३ हुम्भा ओवा इति ॥७॥
 तदु होवाच शाक्य^२ यनिरुत एतमर्हति मसक्तं गातुम् । यद्वाय
 वाचा करोति तदेतदेवाऽस्य हृतम्भवतीति ॥८॥ अथ वा अत
 ष्टन्तामोरेव मजातिः । स यदिद्भूरोलभ्येय तेन क्रन्दति^३ । अथ
 यत्प्रस्तोसैव तेन ह्यते । अथ यदादिमादत्ते रेत एव तेन सिञ्चति ।
 अथ यदुद्वायति रेत एव तेन सिक्त सम्भावयति^४ । अथ यत्पाति-
 हरति रेत एव तेन सन्भूतन्वर्षयति । अथ यदुस्रवाति रेत एव
 तेन प्रवृद्धं विररोति । अथ यच्चियनमुपाते रेत एव तेन विवृतम्पज-

१ यत् । २ अतम, अथ । ३ कुर्वति । ४ ए । ५-भेषु, नास्ति
 यति । अथ यत्प्रतिहरति ।

नयति । सैपर्दताम्राः प्रजातिः ॥६॥ स च एवमेतामृक्ताम्राः
प्रजातिं वेद प्र हेनमृक्तामनी जनयतः ॥१०॥ २।२॥

प्रथमोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्तुनातः ॥

—:—

एष एवेदमग्र आसीद्य^१ एष तपति । स एष सर्वेषाम्भूतानां^२
तेजो हर इन्द्रियं वीर्यमादायोर्ध्व उदक्रामत् ॥१॥ सोऽक्रामयते-
कमेराऽत्तरं स्वादु मृदु^३ देवानां वनामतिं ॥२॥ स तपोऽतप्यत ।
स तपत्तरोकनेराऽत्तरनभारं ॥३॥ तं देवाश्चर्षयश्चोपसमेप्सन् ।
अथैपोऽमृरान्नूतहनोऽद्यजैतस्य पाप्मनोऽनन्वागमाय ॥४॥ तं
वाचोपसमेप्सन् । ते वाचं समारोहन् । तेषां वाचन्पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यादत्ता वाक् । सतं च ह्येनया वदत्तनृतं च ॥५॥ तन्म-
नसोपसमेप्सन् । ते मनस्समारोहन् । तेषाम्मनः पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यादत्तम्मनः[ः]म् । पुण्यं च ह्येनेन ध्यायति पापं च ॥६॥
तं चक्षुयोगसनेःतत् । ते चक्षुस्समारोहन् । तेषां चक्षुः पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यादत्तं चक्षुः । दर्शनीयं च ह्येनेन पश्यत्यदर्शनीयं च ॥७॥

६ ल.सं. ; कसासं. ।

१ स । २-या । ३ मृदु । ४ नास्ति । ५ पति । ६ ऐवा ।
७ ' उदेवानाम् ' पूर्व से पुनः हे । ८ पर्यदत्तं ।

तं श्रोत्रेणोपसंभूयन् । ते श्रोत्रं समारोहन् । तेषां श्रोत्रम्पर्यादत्त ।
 तस्मात्पर्यात्तं श्रोत्रम् । श्रवणीयं चनेन शृणोत्यश्रवणीयं च ॥५॥
 त्वदानेनोपसंभूयन् । तेऽपानं समारोहन् । तेषामपानम्पर्यादत्त ।
 तस्मात्पर्यात्तोऽपानः । घुरभि च क्षेपेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥६॥
 तन्प्राणेनोपसंभूयन् । तन्प्राणेनोपसमाप्नुवन् ॥१०॥ अथाऽसुरा
 भूतहन आद्रवन्मोहयिष्याम इति मन्यमानाः ॥११॥ स यथा-
 ऽऽमान्मृत्ना लोष्टो विध्वंसतेवमेवाऽसुरा व्यध्वंसन्त । स एषोऽऽमा-
 ऽऽखणो यत्प्राणः ॥१२॥ स यथाऽऽमान्माखणमृत्ना लोष्टो
 विध्वंसते एवमेव स विध्वंसते य एषं विद्वांसमुपमदाति ॥१३॥ २॥३॥

द्वितीयेऽनुराके प्रथमः खण्डः ।

स एष वशी दीप्ताग्र उद्गीथो यत्प्राणः । एष हीदं सर्वं वशेकुर्वते
 ॥१॥ वशी भवति वशे स्वान्कुर्वते य एवं वेद । अस्य वसाग्रे
 दीप्यते३ अमुप्यं वासः ॥२॥ तं दैतमुद्गीथं शाश्वत्यानिराचष्टे वशी
 दीप्ताग्र इति । दीप्ताग्रा इ वा अस्य कीर्तिर्भवति य एवं वेद ॥३॥
 आभूतिरिति कारीगादयः प्राणं वा अनुमजाः पश्य आभवन्ति ।
 स य एवमेतमाभूतिरित्युपास्त एव प्राणेन प्रजया पशुभिर्भवति ॥४॥

१ पर्याप्त, पर्याप्त ।

२ पर्या तं हृदं सर्वं वशेकुर्वते येषा पाठ देते हैं । २-शो ।

३ अमुप्यं-४ अतः ।

सम्भूतिरिति सात्ययज्ञयः । प्राणं वा अनुमजाः पशवस्सम्भवन्ति ।
 स य एवमेत रन्भूतिरित्युपास्ते समे [व] प्राणेन मजया पशुभि-
 र्भरति ॥२॥ प्रभूतिरिति शेनगाः । प्राण वा अनुमजाः पशवः
 प्रभवन्ति । स य एवमेतम्भूतिरित्युपास्ते प्रैः प्राणेन मजया
 पशुभिर्भरति ॥६॥ भूतिरिति भाल्लविनः । प्राणं वा अनुमजाः
 पशवो भरन्ति । स य एवमेतम्भूतिरित्युपास्ते भरत्येव प्राणेन
 मजया पशुभिः ॥७॥ अररोधोऽनपरुद्ध इति पार्श्वशूलनः ।
 एष ह्यन्यमपरुणादि नैतमन्यः । एष ह वाऽस्य द्विपन्तम्भ्रातृव्यम-
 परुणादि य एव वेद ॥८॥१॥४॥

द्वितीयेऽनुमजाके द्वितीय खण्ड ।

एकवीर इत्यारुणोयः । एको होवैप वीरो यत्प्राणः । आ हा
 ऽस्यैको वीरो वीर्यमाजायते य एव वेद ॥१॥ एकपुत्र इति चौकितानेयः ।
 एको होवैप पुत्रो यत्प्राणः ॥२॥ स उ एव द्विपुत्र इति । द्वौ हि
 प्राणापानौ ॥३॥ स उ एव त्रिपुत्र इति । त्रयो हि प्राणोऽपानो
 व्यानः ॥४॥ स उ एव चतुष्पुत्र इति । चत्वारो हि प्राणोऽपानो

५-भूर । ६ शूलि-७ 'पजया' अधिक हे । ८ भूर । ९ अररोद्धा ।
 १०-एदि । ११ से । १२-त । १३-वीन्-।

१-ह । २ त्य । ३-णय, 'एको'केस्थान में सर्वत्र 'एका' । ४-५ ।
 ५ द्विप-

च्यानस्समानः ॥५॥ स उ एव पञ्चपुत्र इति । पञ्च हि माणोऽपानो
 च्यानस्समानोऽवानः ॥६॥ स उ एव षड्पुत्र इति । षड्माणो-
 ऽपानो च्यानस्समानोऽवान उदानः ॥७॥ स उ एव सप्तपुत्र इति
 सप्त क्षीमे शीर्षण्याः प्राणाः ॥८॥ स उ एव नवपुत्र इति सप्त हि
 शीर्षण्याः प्राणा द्वात्रिंशौ ॥९॥ स उ एव दशपुत्र इति । सप्त-
 शीर्षण्याः प्राणा द्वात्रिंशौ नाभ्यां दशमः ॥ १०॥ स उ एव
 बहुपुत्र इति । एतस्य द्वायं सर्वाःभजाः ॥११॥ एतं ह स्म वैतदुद्गीथं
 विद्मः सः पूर्व्वेद्वाहृणाः वानागापिने आहुः कति ते पुत्रानागास्याम
 इति ॥१२॥ २।५॥

द्विर्नयेऽनुवाके त्वर्नयः खण्डः ।

स यदि ब्रूयादेव न आगायेति प्राण उद्गीथ इति विद्वाने रन्मनसा
 ध्यायेत् । एको हि प्राणः । एकोहाऽचऽऽजापने ॥१॥ स यदि
 ब्रूयाद्द्वौ म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्द्वौ मनसा ध्यायेत् ।
 द्वौ हि प्राणापानौ द्वौ देवाऽस्याऽऽजापने ॥२॥ स यदि ब्रूयाद्द्वौ म आ-
 गायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्द्वौ मनसा ध्यायेत् । त्रयो हि प्राणो

६-ना । ७ अग्नि । ८-अः । ९ घञ्पुत्र । १० यम, दयम् ।

११-मन ॥

१ ऐच्- । २ त्रयो । ३ 'च्यानः' अधिक है । ४ 'स द्वौ प्राणाऽस्याऽऽजा-
 पने' अधिक है । ५ मन ।

ऽपानोऽपान* । त्रयो हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥३॥ स यदि द्रूयात्तुरो ग
 आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वोश्चतुरो मनस । ध्यायेत् । चत्वारो
 हि प्राणोऽपानो व्यानस्तपान* । चत्वारो ह्यस्याऽऽजायन्ते ॥४॥
 स यदि द्रूयात्पञ्च म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्पञ्च मनसा
 ध्यायेत् । पञ्च हि प्राणोऽपानो व्यानस्तपानोऽपानः । पञ्च हैवाऽस्या
 ऽऽजायन्ते ॥५॥ स यदि द्रूयात् षड्म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव
 विद्वान् षड्मनसा ध्यायेत् । षड्म प्राणोऽपानो व्यानस्तपानोऽपान
 चदानः । षड्द्वयं ऽस्याऽऽजायन्ते ॥६॥ स यदि द्रूयात्सप्तम आगा-
 येति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान् सप्तमनसा ध्यायेत् । सप्त हीमे
 शीर्षण्याः प्राणाः । सप्त हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥७॥ स यदि द्रूयात्नव
 म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्नव मनसा ध्यायेत् । सप्त
 शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्छौ । नव हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥८॥ स
 यदि द्रूयाद्दश म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान् दश मनसा
 ध्यायेत् । सप्त शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्छौ नाभ्या दशमः । दश हैवा
 ऽस्याऽऽजायन्ते ॥९॥ स यदि द्रूयात्सहस्रम् आगायेति प्राण उद्गीथ
 इत्येव विद्वान् सहस्रमनसा ध्यायेत् । सहस्र हेत आदित्यरश्मयः ।
 सस्य पुत्रः । सहस्र हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥१०॥ एव ह्यतमुद्गीथ
 ६ नास्ति । स यदि * व्यनत् ७ भा ८ हे १६ द्वा १७ त १८ ह १९ ह ।

म्पर आद्धारः कर्त्वीवाँस्त्रसदस्युरिति पूर्वे महाराजाश्रौत्रियास्सह-
स्रपुत्रमुपनिषेदुः । ते ह सर्व एव सहस्रपुत्रा आसुः ॥११॥ स य एवैवं
वेद सहस्रं देवाऽस्य पुत्रा भवन्ति ॥१२॥ २।६॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थं खण्ड । द्वितीयोऽनुवाकरस्मात् ।

शर्यातो वै मानवः प्राच्यां स्थल्यामयजत^१ । तस्मिन् ह भूता-
न्युद्गीथेऽपित्वमोपरै^२ ॥१॥ तं देवा बृहस्पतिनोद्गात्रा दीक्षामहा
इति पुरस्तादागच्छन्नयं त उद्गायत्विति । वम्नेना^३ऽऽजद्विषेण
पितरो दक्षिणतोऽयं^४ त उद्गायन्तित्युशनसा वाच्येना^५ऽमुराः
पश्चादयं^६ त उद्गायत्वित्ययास्येना^७ऽऽङ्गिरसेन मनुष्या उत्तरतो-
ऽयं^८ त उद्गायत्विति ॥२॥ स हेत्वाचके हन्तेनात्र पृञ्जानि
कियतो^९ वा एक ईशे कियत एरुः कियत एक इति ॥३॥ स होवाच
बृहस्पतिं यन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति^{१०} ॥४॥ स होवाच दधे-
ष्वेव श्रीम्स्यादेवेष्वीशा स्वर्गमुत्वांनोकं गमयेयमिति ॥५॥ अथ
होवाच वम्बमाजद्विषम्यन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति ॥६॥ स

१२ अंज् । १३ यद् ।

१ शर्या- २ स्थालशाम् । ३ अजयत । ४ ऽपिसधम् ।
५ पेशिरे । ६ विम्ब- ७ दक्षिणतो । ८ वास्येना । ९-१० द्वात् ।
११ अवांछस्येना, अयद्विस्येना । १२ क्रिय । १३ ति । १४ अथम'अधिवः
द्वे । १५ नास्ति, स होवाच * * * * ततस्स्यादिति ।

होवाच पितृष्वेव श्रीस्स्यात्पितृष्वीशा स्वर्गमु त्वां लोकं गमयेयमिति
 ॥७॥ अथ होवाचोशनसं काव्यं^{१६} यन्मे त्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति
 ॥८॥ स होवाचाऽसुरेष्वेव श्रीस्स्यादसुरेष्वीशा स्वर्गमु त्वां लोकं
 गमयेयमिति ॥९॥ अथ होवाचाऽयास्यमाद्भिरसं यन्मे त्वमुद्गायेः किं
 ततस्स्यादिति ॥१०॥ स होवाच देवानेव देवलौके दध्याम्भनुप्या-
 न्मनुष्यलोके पितॄन्^{२१} पितृलोके नुदेयाऽस्माल्लोकादसुरान् स्वर्गमु त्वां
 लोकं गमयेयमिति ॥११॥१॥७॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथम खण्डः ।

स होवाच त्वं मे भगव उद्गाय य एतस्य सर्वस्य यशो [ऽसी]ति
 ॥१॥ तस्य हाऽयास्य एवोज्जगौ । तस्मादुद्गाता वृत उत्तरतो
 निवेशनं लिप्सेत । एतद् नाऽऽरुद् निवेशनं यदुत्तरतः ॥२॥
 उत्तरत आगतो यास्य आद्भिरसशशर्यातस्य मानवस्योज्जगौ । स
 प्राणेन देवान्देवलोके ऽधादपानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन
 पितॄन् पितृलोके हिङ्गारेण वज्रेणाऽस्माल्लोकादसुराननुदत् ॥३॥
 तान् होवाच दूरं गच्छतेति । स दूरो ह नाम लोकः । तं ह जग्मुः ।
 त एतेऽसुरा असम्भाव्यम्पराभृताः ॥४॥ छन्दोभिरेव वाचा

१६ य । १७ जे । १८-शाः । १९ न्वं । २०-ध्यात् । २१-त्वं ।
 २२ 'उ' अधिक है । २३ हं ॥

१-शस । २-तुन् । ३ असंक्षेपम्-।

शर्यात्तम्मानं स्वर्गं लोकं गमयांचकार ॥५॥ ते द्योचुरसुरा एत तं
 वेदाम यो नोऽयामित्यमधत्तेति । तत आगच्छन् । तमेसाऽपश्यन् ॥६॥
 तेऽब्रुवन्नयं वा आस्य इति । यदब्रुवन्नयं वा आस्य इति तस्मादय-
 मास्यः । अयमास्यो ह वै नामैषः । तमयास्य इति परोक्षमाच-
 क्षते ॥७॥ स प्राणो वा अयास्यः । प्राणो ह वा एनान् स
 नुनुदे ॥८॥ स य एवं विद्वानुद्रायति प्राणेनैव देवान्देवलोके
 दधात्यपानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन पितॄन् पितृलोके
 दिङ्मारेणैव वज्रेणाऽस्माद्धोकाद्विपन्तम्भ्रातृव्यं नुदते ॥९॥१०॥

तृतीयेऽनुषाके द्वितीय खण्ड ।

तं ह श्रुत्वाद्दूरं गच्छेति । स यमेव लोकमसुरा अगच्छंस्तं ह वै
 गच्छति ॥१॥ छन्दोभिरेव वाचा यजमानं स्वर्गं लोकं गमयति ॥२॥
 ता एता व्याहृतयः । मेस्येति वाग् [इति] भूर्भुवस्स्वारित् [उदिति] ॥३॥
 तद्यत्प्रेति तत्राणस्तदयं लोकस्तदियं लोकमस्मिन्नोक आभजति ॥४॥
 एतपानस्तदसौ लोकस्तदमुं लोकममुष्मिन्नोक आभजति ॥५॥
 वागिति तद्ब्रह्म तदिदमन्तरिक्षम् ॥६॥ भूर्भुवस्स्वारिति सा प्रपी-
 विद्या ॥७॥ उदिति सोऽसावादित्यः । तद्यदुदित्युदिव श्लेष-

४ शय्या-। ५ स । ६-हस्त । ७-असौ । ८ पान्-। ९ पद्विष्-।
 १०-वान् ॥

१-धा । २ स्या-। ३ सत् ।

यति ॥८॥ तद्यदेकमेवाऽभिसम्पद्यते तस्मादेकवीरः । एको ह तु
 सन्वीरो वीर्यवान् भवति । आहाऽस्यैको^५ वीरो वीर्यवान् जायते
 य एवं वेद ॥९॥ तद्गु होवाच शाश्व्यायनिर्बहुपुत्र एष उद्गीथ^६ इत्ये-
 चोपासितव्यम् । बहवो ह्येत आदिस^७ रश्मयस्तेऽस्य पुत्राः । तस्मा-
 द्बहुपुत्र एष उद्गीथ इत्येवोपासितव्यमिति ॥१०॥२।९॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीय खण्ड । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवामुरास्समयतन्तेसाहुः । न ह वै तद्देवामुरास्सम्येतिरे ।
 प्रजापतिश्च ह वै तन्मृत्युश्च सम्येताते ॥१॥ तस्य ह प्रजापतेर्देवाः
 मियाः^१ पुत्रा अन्त आसुः । तेऽधियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै येना-
 ऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्वा-
 चोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥३॥ ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य^३
 इदं वागागायथादिदं वाचा वदति यदिदं वाचा भुञ्जते ॥४॥
 ताम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स पाप्मा ॥५॥
 तेऽब्रुवन् न वै नोऽयम्मृत्युं न पाप्मानमखवाचीव^३ । मनसोद्गात्रा
 दीक्षामहा इति ॥६॥ ते मनसोद्गात्रा दीक्षन्त । तेभ्य इदम्मन

४ श्येष्-१५-ए। ६-यावान् । ७-ए (इत्य) । ८-आदित्यं स्य । ९-त ॥

१-याय । २ 'नोद्गात्रा दीक्षामहा इति' अधिक है पर 'ते'
 और 'भ्य' के बीच खाल रद्द से फाटा गया है । ३ अथवत्-।

आगायद्यदिदम्नसा ध्यायति यदिदम्नसा भुञ्जते ॥७॥ तत्पा-
 प्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति स एव स
 पाप्मा ॥८॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् ।
 चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥९॥ ते चक्षुषोद्गात्राऽदीक्षन्त ।
 तेभ्य इदं चक्षुरागायद्यदिदं चक्षुषा पश्यति यदिदं चक्षुषा
 भुञ्जते ॥१०॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव चक्षुषा पापम्पश्यति
 स एव स पाप्मा ॥११॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयम्मृत्युं न पाप्मा-
 नमसवाक्षीत् । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१२॥ ते श्रोत्रेणो-
 द्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं श्रोत्रमागायद्यदिदं श्रोत्रेण शृणोति
 यदिदं श्रोत्रेण भुञ्जते ॥१३॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव
 श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा ॥१४॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव
 नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा
 इति ॥१५॥ ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं प्राण आगाय-
 द्यदिदं प्राणेन प्राणिति यदिदं प्राणेन भुञ्जते ॥१६॥ तत्पाप्मा-
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव प्राणेन [पापं] प्राणिति स एव स
 पाप्मा ॥१७॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् ।
 अग्नेन मुख्येन प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१८॥ तेऽग्नेन

मुह्येन प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ॥१६॥ सोऽब्रवीन्मृत्युरेष एषां स
 उद्गाता येन मृत्युमत्सेप्यन्तीति ॥२०॥ न ह्येतेन प्राणेन पापं
 वदति न पापं ध्यायति न पापम्पश्यति न पापं शृणोति न पापं
 गन्धमपानिति ॥२१॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्ग
 लोकमायन् । अपहस्य इव मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्ग लोकमेति य
 एवं वेद ॥२२॥२।१०॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथम सर्गः ।

स यथा हत्वा प्रमृद्याऽतीयादेवमेवैतन्मृत्युमत्यायन् ॥१॥
 स वाचम्प्रथमामत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं^२ न्यदधात् । सोऽग्निर-
 भवत् ॥२॥ अथ मनोऽत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं^२ न्यदधात् । स
 चन्द्रमा अभवत् ॥३॥ अथ चक्षुरत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं^२ न्यदधात् ।
 स आदित्योऽभवत् ॥४॥ अथ श्रोत्रमत्यवहत् । तत्परेण
 मृत्युं^२ न्यदधात् । ता इमा दिशोऽभवन् । ता उ एव विश्वे देवाः
 ॥५॥ अथ प्राणमत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं^२ न्यदधात् । स वायुर-
 भवत् ॥६॥ अथाऽऽत्मने^४ केवलमेवाऽन्नाद्यमागायत् ॥७॥ स एष

७-यम् । ८ गमयन् ।

१ स अधिक है, 'अत्यायन्' के स्थान में-यत् । २-यु । ३-न् ।
 ४ दया । .

एवाऽयास्यः । आस्ये^५ धीयते^६ । तस्मदयास्यः । यद्वेवा^७ [ऽयम्]
 आस्य^८ रमते तस्माद्वेवाऽयास्यः^९ ॥८॥ स एष एवाऽऽङ्गिरसः ।
 अतो हीमान्यद्भानि रसं लभन्ते । तस्मादाङ्गिरसः^{१०} । यद्वेवैपा-
 मद्भानां रसस्तस्मा द्वेवाऽऽङ्गिरमः ॥९॥ तं देवा अद्भुवन् केवलं
 वा आत्मनेऽन्नाद्यमागासीः । अनु न एतास्मिन्ननाथ आभज^{११} ।
 एतदस्याऽनामयत्वमस्तीति^{१२ १३} ॥१०॥ तं वै प्रविशतेति । स वा
 आकाशान् कुरुष्वेति । स इमान् प्राणानाकाशानकुरुत^{१४ १५} ॥११॥
 तं वागेव भूत्वाऽग्निः प्राविशन्मनो भूत्वा चन्द्रमाश्चक्षुर्भूत्वा
 ऽऽदित्यश्चोत्रम्भूत्वा दिशः प्राणो भूत्वा वायुः ॥१२॥ एषा वै
 दैवी परिपदैवी सभा दैवी संसत् ॥१३॥ गच्छति ह वा एतां^{१७}
 दैवीम्परिपदं दैवीं सभां दैवीं संसदं य एवं वेद ॥१४॥२११॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः अष्टकः ।

यत्रो ह वैरु चैता^१ देवता निस्पृशन्ति न इव तत्र कश्चन
 पाप्मान्वद्भः परिशिष्यते ॥१॥ स विद्यान्नेह कश्चन पाप्मान्वद्भः
 परिशेच्यते सर्वमेवैता^२ देवताः पाप्मानं निवक्ष्यन्तीति । तथा इव

५ आसे । ६ च्यति । ७ एष । ८ स्ये । ९-ंऽयास्य । १० अङ्ग-
 ११ अः । १२ आमयत्वम् । १३ असी । १४ आकाशात् ।
 १५ आशासनम् । १६ कुरुत । १७ 'न' नास्ति । १८ प्रेची-॥

१ चे । २ इते । ३ एयम् । ४ एषा ।

भवति ॥२॥ य उ ह वा एवंविदमृच्छति^५ ययैता देवता ऋत्वा
 नीयादेवं न्येति^७ । एतासु ह्येवेनं देवतासु प्रपन्नमेतासु वसन्तमुप-
 वदति ॥३॥ तस्य हेतस्य नैव काचनाऽऽर्तिरस्ति य एवं वेद । य
 एवेनमुपवदति स आर्तिमार्च्छति^१ ॥४॥ स य एनमृच्छादेव तादेवता
 उपचल्य द्यूयादयम्याऽऽरव^{११} स इभामाति^{१२} न्येत्विति । तां देवाऽऽर्ति
 न्येति ॥५॥ यापदावासा^{१३} उ हाऽस्येमे प्राणा अस्मिँलोक एतावदा-
 वासा^{१३} उ हाऽस्यैता देवता अमुष्मिलोके भवन्ति ॥६॥ तस्माद्
 ह्येवं विद्वान्नैवाऽऽगृहतायै^{१४} विभीयान्नाऽलोकतायै । एता मे देवता
 अस्मिँलोके गृहान् करिष्यन्ति । एता अमुष्मिलोके भवन्ति ।
 तस्माद् लोकम्प्रदास्यन्तीति^{१५} ॥७॥ तस्माद् ह्येवं विद्वान्नैवाऽऽगृहतायै
 विभीयान्नाऽलोकतायै । एता मे देवता अस्मिँलोके गृहेभ्यो
 गृहान् करिष्यन्ति स्वेभ्य^{१६} आयतनेभ्य इति ह्येव पिद्याद् [एता]
 देवता^{१८} अमुष्मिलोके लोकम्प्रदास्यन्तीति ॥८॥ तस्माद् ह्येवं

५-विद् वा विद । ६-दुच्छति । ७-नेति । ८-तीर । ९-आच्छति ।

१०-एव । ११-राव । १२-अति । १३-दावशा । १४-ग्रह- । १५-अस्मिन् ।

१६-प्रयदा- । १७-‘आयतनेभ्य’ अधिक द्वे । १८-एव ता ॥

विद्वाभैवाऽऽहतायै विभीषाणाऽलोकतायै एता म एतदुर्मयं
संनस्पन्तीति ह्यै वियाव । तथा ह्यै भवति ॥६॥२॥१२॥

चतुर्थेऽनुवाके श्रुताय खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवा वै ब्रह्मणो वत्सेन^१ वाचमदुहन् । अग्निर्देवै ब्रह्मणो
वत्सः ॥१॥ सा या सावाग्रब्रह्मैव तव । अथ योऽग्निर्मृत्युस्तः ॥२॥
तामेतां वाचं यथा धेनुं वत्सेनोपसृज्य प्रप्तां दुहीतैवमेव देवा वाचं
सर्वान्कामानदुहन् ॥३॥ दुहे ह वै वाचं सर्वान्कामान्य एवं वेद ।
स हैपोऽनानृतो वाचं देवीमुदिन्ये^४ वद वद वदेति ॥४॥ तथादिह^५
पुरुषस्य पापं कृतम्भवति तदाविष्करोति । यदिहैनदपि रहसीव
कुर्वन्मन्यते^६थ हैनदाविरेव करोति । तस्माद्वाव पापं न
कुर्यात् ॥५॥२॥१३॥

पञ्चमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एष उ ह वाव देवानां नेदिष्ठमुपचर्यो यदग्निः ॥१॥ तं
साधूपचरेत् । य एनमास्मिन्नोके साधूपचरति तमेधोऽमुष्मिन्नोके

१ वत्सेन, वत्सेन । २ वच्च- । ३-र । ४ जहे । ५ उदिग्ये ।
६ अग्निह । ७-त । ८ अय- । ९ 'एष उ ह वा' दूसरे अनुवाक का
यहां अधिक है ॥

१ चरति ।

साधूपचरति । अथ य एनमस्मिँलोके नाऽऽद्रियते तमेपोऽमुष्मिँ-
लोके नाऽऽद्रियते । तस्माद्वा अग्नि साधूपचरेत् ॥२॥ तं नैव
हस्ताभ्यां स्पृशेत् पादाभ्यां न दण्डेन ॥३॥ हस्ताभ्यां स्पृशति
यदस्याऽन्तिकमवनेनिके । अथ यदभिमतारयति तत्पादा-
भ्याम् ॥५॥ स एनमास्पृष्ट ईश्वरो दुर्घायां धातोः । तस्माद्वा
अग्नि साधूपचरति । सुधायां ह्वैः न दधाति ॥६॥२।१४॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीय खण्ड ।

एष उ ह वाव देवानाम्महाशनतमो यदाग्निः ॥१॥ तदा
व्रत्यमददानोऽश्रीयात् । यो वै महाशनेऽनभ्रत्यक्षतीश्वरो ह्येनम-
मिपङ्क्तोः । पूतिमिव शाऽश्रीयात् ॥२॥ अथो इ प्रोक्तेऽशने ब्रूयात्
समिन्स्वाऽग्निमिति । स यथा प्रोक्तेऽशने श्रेयोऽसम्परिषेष्टवै-
ब्रूयात्तादृक् तत् ॥३॥ एतद्बु ह वाव साम यदाक् । यो वै चतु-
स्साम श्रोत्रं सामेत्युपास्ते न ह तेन करोति ॥४॥ अथ य
आदित्यस्साम चन्द्रमास्सामेत्युपास्ते न ह वै तेन करोति ॥५॥
अथ यो वाक् सामेत्युपास्ते स एवाऽनुष्ठया साम वेद । वाचा हि

२ तण्डेनम्, तण्डेनम् ।

१ प्र-। २ दद्यासीतो । ३ अभिष्(ष)केताः ।
४-इत् । ५ इयमिव । ६ ऽग्नी-। ७ तम् । ८ ना । ९ यद् ।

साम्नाऽऽत्विज्यं क्रियते ॥६॥ स यो वाचस्वरो जायते सोऽ
 प्रिर्वाग्भेव वाक् । तदत्रैकधा साम भवति ॥७॥ स य एवमेतदे-
 कधा साम भवेद्देवैर्देवैर्देकधा साम भवतीत्येकधेव श्रेष्ठस्त्वा-
 नाम्भवति ॥८॥ तस्माद्देवैर्वाग्भेव साम्नाऽऽत्विज्यं कारयेत् ।
 स ह वाच साम वेद य एवं वेद ॥९॥१०॥११॥

पञ्चमोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । पञ्चमोऽनुवाकरुमाप्तः ॥

[तृतीयोऽध्यायः ।]

एका ह वाच कृत्वा देवताऽर्धदेवता एवाऽन्याः । अयमेव
योऽयम्यवते ॥१॥ एष एव सर्वेषां देवानां ग्रहाः ॥२॥ स हैषो-
ऽस्तं नाम । अस्तमिति हेह पश्चाद्ग्रहानाचक्षते ॥३॥ स यदादिसो-
ऽस्तमगादिति ग्रहानगादिति हैतत् । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवा-
ऽप्येति ॥४॥ अस्तं चन्द्रमा एति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्ये-
ति ॥५॥ अस्तं नक्षत्राणि यन्ति । तेन तान्यसर्वाणि ।
तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥६॥ अन्वभिर्गच्छति । तेन सोऽसर्वः । स
एतमेवाऽप्येति ॥७॥ एतहः । एति रात्रिः । तेन ते असर्वे । ते
एतमेवाऽपीतः ॥८॥ मुदन्ति दिगो न वै तां रात्रिम्यज्ञापन्ते ।
तेन ता असर्वाः । ता एतमेवाऽपियन्ति ॥९॥ वर्पति च पर्जन्य
उच्च गृह्णाति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्येति ॥१०॥ क्षीयन्त
आप एवमोपत्रय एवं वनस्पतयः । तेन तान्यसर्वाणि ।
तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥११॥ तद्यदेतत्सर्वं वायुमेवाऽप्येति तस्माद्वा-

१ षेवा । २-र. । ३-ताः । ४ तां । ५ 'स साम वेद' अधिक है ।

६ पत्र- , घोषा- ।

पुरेव साम ॥१२॥ स ह वै सामवित्स [कृत्स्नं] साम वेद य एवं
 वेद ॥१३॥ अथाऽध्यात्मम् । न वै स्वप्नश्चावा वदति । सेयमेव
 प्राणमप्येति ॥१४॥ न मनसा ध्यायति । तदिदमेव प्राणमप्ये-
 ति ॥१५॥ न चक्षुषा पश्यति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१६॥
 न श्रोत्रेण शृणोति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१७॥ तद्यदेतत्सर्व-
 म्प्राणमेवाऽभिसमेति तस्मात्प्राण एव साम ॥१८॥ स ह वै
 सामवित्स कृत्स्नं साम वेद य एवं वेद ॥१९॥ तद्यदिदमाहुर्न
 पताऽथ वातीति[स] हेतत्पुरूपेऽन्तर्निरमते स पूणस्सेदमान
 आस्ते ॥२०॥ तद् शौनके^{११} च कोपेयमभिप्रतारिणं च[काक्षसेनिम्]
 ब्राह्मणः परिवेद्विष्यभाणा^{१२} उपावत्राज ॥२१॥३१॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तौ ह विभिर्जे । तं ह नाऽऽद्राते को वा कोवेति मन्यमानौ
 ॥१॥ तौ होपजर्गा ।

महात्मनश्चतुरो देव एक कर्म जगार भुवनस्य गोमा ।

त कोपेयं न विजानन्त्यकेऽभिप्रतारिन् बहुषा निविष्टम् ॥

— ७ अम । ८-यति । ९-मिने । १०-शा । ११-काक्ष १२विष्या- ।

१३-मोजा ॥

१ क्रिम्- । २ द्राते । ३ स्तो । ४ काक्षपेय । ५ निविष्टम् ।

इति ॥२॥ स होवाचाऽभिमतारीमं वाव प्रपद्य प्रतिब्रूहीति ।

त्वया^८ वा^९ अयम्प्रत्युच्य^{१०} इति ॥३॥ तं ह प्रत्युवाच—^{११}

आत्मा देवानामुत मर्त्यानां^{१३} हिरण्यदन्तो रपसो न सृज ।^{१४ १५}

महान्तमस्य महिमानमाहुरनघमानो यदद^{१६} तमसि ॥^{१७ १८ १९}

इति ॥४॥ महात्मनश्चतुरो [देव] एक इति । वाग्वा अग्निः ।^{२० २१}

स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति तद्वाचम्प्राणो गिरति ॥५॥^{२२}

मनश्चन्द्रमास्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति तन्मनः प्राणो^{२३}

गिरति ॥६॥ चक्षुरादित्यस्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति^{२४}

तच्चक्षुः प्राणो गिरति ॥७॥ श्रोत्रं दिशस्तां महात्मानो देवाः ।^{२५}

स यत्र स्वपिति तच्छ्रोत्रं प्राणो गिरति ॥८॥ तद्यन्महात्मनश्चतुरो

देव एक इत्येतद्ध तव ॥९॥ कस्स जगारेति । प्रजापतिर्वै कः । स^{२६ २७ २८}

हैतज्जगार ॥१०॥ भुवनस्य गोपा इति । स उवाच भुवनस्य गोपाः

॥११॥ त कापेय न विजानन्त्येक इति । न ह्येतमेके विजानन्ति ॥१२॥^{२९}

अभिमतारिन् बहुधा निविष्टमिति । बहुधा ह्येवैप निविष्टो यत्प्राणः

॥१३॥ आत्मा देवानामुत मर्त्यानामिति । आत्मा ह्येव देवाना-

६ म(म)म, मा । ७ घय्या, यय्या । ८ अया । ९ वाय । १०-युञ्जे ।

११ इति । १२-याच । १३ मत्- । १४ परसो । १५ जु । १६ मसि- ।

१७ यदि । १८ दत्तम, दँतम । १९ अति । २० पाश, वा । २१ धा ।

२२ स्वपितिपिति । २३-न, इस के पश्चात् प्रा । २४-अर् । २५ महात्मा

अधिक है । २६ क । २७ सो । २८ जगैर- । २९-पध । ३०-धो ।

मुत मर्त्यानाम् ॥१४॥ हिरण्यदन्तो रपतो न मृनुरिति । न शेष
 मृनुः । मृनुन्पा^{३६} शेष सन्न मृनुः ॥१५॥ महान्तमस्य महिमानमा-
 हुरिति । महान्तं^{३३} श्वेतस्य महिमानमाहुः ॥१६॥ अनघमानो
 यददन्तमचीति । अनघमानो तेषोऽदन्तमचि ॥१७॥३।२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ॥

तस्यैप श्रीरात्मा समुद्रूढा यदसावादिसः । तस्माद्वायवस्य स्तोत्रे
 णाऽवान्यानेच्छ्रिया अयच्छ्रिया इति ॥१॥ स एष एवोक्यम् ।
 यत्पुरस्तादवानिति तदेतदुक्थय शिरो यद्दक्षिणतरस दक्षिणः पक्षो
 यदुत्तरतस्त उत्तरः पक्षो यत्पश्चात् [तव] पुच्छम् ॥२॥ अथमेव
 प्राण उक्थस्याऽऽत्मा । स य एवमेतमुक्थस्याऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं
 वेद स हाऽमुष्मिं लोके साहस्रतनुस् [सर्वम्] सम्भवति ॥३॥
 शश्वद् वा अमुष्मिं लोके यदिदमुरुपस्यऽऽण्टौ शिशं कर्णौ नासिके
 यत्किं चाऽनस्थिकं न सम्भवति ॥४॥ अथ य एवमेतमुक्थस्या-
 ऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं वेद स हेवाऽमुष्मिं लोके साहस्रतनुस्सर्व-
 स्सम्भवति ॥५॥ तदेतद्वैश्वामित्रमुक्थम् । तदन्नं वै विश्वम्प्राणो मिथम्

३१-से । ३२ नम् । ३३ स् । ३४ आहुद् । और 'इति महान्त
 श्वेतस्य महिमाहुः' अधिक है । ३५ अन्तम् । ३६ मृनुत्-॥

१ समग्र- २ यद्दक्ष- ३ वा इति । ४-इयाः । ५ सद् । ६ तद् ।

७ सांगतम् । ८-तद् । ९ अक्षय- ।

॥६॥ तद् विश्वामित्रश्रमेण तपसा व्रतचर्येणैन्द्रस्य प्रियं धामो-
 पजगाम ॥७॥ तस्मा उ हैतत्प्रोवाच यदिदम्भुप्यानागतम् ॥८॥
 तद् स उपनिषसाद् ज्योतिरेतदुक्थमिति ॥९॥ ज्योतिरिति द्वे
 अक्षरे प्राण इति द्वे अक्षमिति द्वे । तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितम् ॥१०॥
 अथ हैनं जमदग्निरुपनिषसादाऽऽपुरेतदुक्थमिति ॥११॥ आपुरिति
 द्वे अक्षरे प्राण इति द्वे अक्षमिति द्वे । तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितं ॥१२॥
 अथ हैनं वासिष्ठ उपनिषसाद् गौरेतदुक्थमिति । तदेतदन्नमेव ।
 अन्नं हि गौः ॥१३॥ तदाहुर्यदस्य प्राणस्य पुरुषश्शरीरमथ केना-
 ऽन्यं प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१४॥ स ब्रूयाद्यद्वाचा वदति
 तद्वाचश्शरीरं यन्मनसा ध्यायति तन्मनसश्शरीरं यच्चक्षुषा पश्यति
 तच्चक्षुषश्शरीरं यच्छ्रोत्रेण शृणोति तच्छ्रोत्रस्य शरीरम् । एवमु
 हाऽन्ये प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१५॥ ३।३॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तदेतदुक्थं सप्तविधम् । शस्यते स्तोत्रियोऽनुरूपो धार्या
 मगायस्मूक्तं निवित्परिधानीया ॥ १ ॥ इयमेव स्तोत्रियो

१० म-न ११ तद् । १२ उत्प- । १३ (-साद्) तद्, प्राणुर्गौर ।
 १४-वृ । १५ उ.तेद् । १६ अन्येन ।

१ प्रथमद् अक्षिक द्वे । २-तीयम् । ३ नास्ति ।

अग्निगुरुपु वायुर्धाप्या^५न्तरिक्षम्प्रगाथो^६ द्यौस्सूक्तमादित्यो निवित्र ।
 तस्माद्ब्रह्मचा उदितं निविदमधीयन्ते । आदित्यो हि निवित्र ।
 दिशः परिधानीयेत्यधिदेवतम् ॥२॥ अथाध्यात्मम् । आत्मैव
 स्रोत्रियः प्रजाऽनुरूपः प्राणो^६ धार्या^६ मनः प्रगाथदिशरस्सूक्तं
 चक्षुर्निविच्छ्रोत्रम्परिधानीया^७ ॥३॥ तद्वैतदेके त्रिष्टुभा परिदधत्य-
 नुष्टभके । त्रिष्टुभात्वैव परिदध्यात् ॥४॥ तद्वैतदेक एता व्याहृती-
 रभिव्याहृत्य शंसन्ति^८ महान्मद्या^९ समधत्त देवो देव्या समधत्त
 ब्रह्म ब्राह्मण्या^{१०} समधत्त । तद्यत्समधत्त समधत्तेति ॥५॥ तस्मा-
 दिदानीम्पुरुषस्य शरीराणि प्रतिसंहितानि । पुरुषो ह्येतदुक्त्यम्
 ॥६॥ महान्मद्या समधत्तेति । अग्निर्वै महानियमेव मही ॥७॥
 देवो देव्या समधत्तेति । वायुर्वै देवोऽन्तरिक्षं देवी ॥८॥ ब्रह्मा
 ब्राह्मण्या समधत्तेति । आदित्यो वै ब्रह्म द्यौर्ब्राह्मणी ॥९॥ तासां
 वा एतासां देवतानां द्वयोर्द्वयोर्देवतयोर्नव-नवाऽक्षराणि सम्पद्यन्ते
 एतादिमे^{१५} लोकास्त्रिणवा^{१६} भवन्ति ॥१०॥ तद्ब्रह्म वै शिष्टव ।
 तद्ब्रह्माऽभिव्याहृत्य शंसन्ति । एष उ एव स्रोमस्सोऽनुचरः ॥११॥

४ आस्या, आर्या । ५ प्राग्-। ६ धार्या । ७-धात्नी-।

८ तदुक्त्यम् अधिक हे (हादिये मे) ? । ९-य । १०-मद्या । ११ इदानी ।

१२-या । १३-मौ । १४-यो । १५-मौ । १६-की । १७ पा । १८ सा ।

यदिममाहुरेकस्तोम इत्ययमेव योज्यम्भवते । एषोऽधिदेवतम् ।
 प्राणोऽध्यात्मम् । तस्य शरीरमनुचरः^{१९} ॥१२॥ तद्यथा ह वै मणौ
 मणिमूत्रं सम्प्रोतं स्याद्-॥१३।३।४॥

प्रथमेऽनुवाके चतुर्थं खण्ड ।

एवं^१ हैतस्मिन्सर्वमिदं सम्प्रोतं गन्धर्वाप्सरसः पशवो
 मनुष्याः ॥१॥ तद्ध^२ मुञ्जस्सामश्रवसः^३ प्रययौ । तस्मै^४ ह स्वाजनिर्वै-
 श्यः प्रेयाय^५ ॥२॥ तस्य हाऽन्तरिक्षात्पतित्वा नवनीतापिण्ड उरासि
 निषपान । तं हाऽऽद्याऽनुदर्शौ^६ ॥३॥ ततो^७ ह वै स्तोमं ददर्शाऽन्तरिक्षे
 विततम्बहुशोभमानम् । तस्यो^८ ह युक्तिं ददर्श ॥४॥ वहिष्पवमान-
 मासद्य^९ दीत्रं विपि प्राण्य इति कुर्यात् दीत्रं गृह्णित्वं^{१०} अपान्य इति
 वाच । दिदृक्षे^{११} तैवाऽस्तिभ्यं शुश्रूषे^{१२} तैव कर्णाभ्याम् । स्वयमिदम्म-
 नोयुक्तम् ॥५॥ तद्यत्र वा इपुरत्यग्रो भवति न वै स ततो
 हिनस्ति^{१३} तदु^{१४} वा एतं नोपाप्नुयात् । प इत्येवाऽपान्यात् । तद्यथा
 विम्बेन मृगमानयेद्देवमेवैनमेतया देवतयाऽऽनयाति । स युक्तः
 करोति । एष^{१५} एवापि युक्तः^{१६} ॥६।३।५॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्ड । प्रथमोऽनुवाकस्तमाप्त ॥

१६-रन्तम॥

१ पयम् (पया) के पहले पञ्चम कं० का द्वि० वाक्य । २ मीञ्ज- ३
 साहस- ४ तमस्मै । ५ प्रीयाय । ६ ततो ७-अ । ८-इ । ९ दीत्र, पहला
 अक्षर ल मी हो । १० गृह्णित्व । ११ अस्ति । हनस्ति । १२ यद् । १३-नो । १४-ति॥

योऽसौ साध्नः प्रत्ति^१ वेदम हास्मै दीयते ॥१॥ ददा इति ह वा
 अयमाग्नेर्दीप्यते तथेति वायुः पत्रते हन्तेति चन्द्रमा ओमित्या-
 दित्यः ॥२॥ एषा ह वै साध्नः प्रत्तिः^२ । एतां ह वै साध्नः प्रत्तिं^३
 मुदाक्षिणः क्षेमिर्विदां चकार ॥३॥ तां हेतां हेतुर्वाऽऽज्ये गायन्मै-
 श्रावरुणस्य वा तां^४ ददा^५ तथा^६ हन्ता^७ हिम्भा ओवा इति ।
 म ह वा अस्मै दीयते ॥४॥ [सो] ऽप्यन्यान् बहुनुपसुपरि^८ य
 एवमेतां साध्नः प्रत्तिं वेद ॥५॥ य उ ह वा अवन्धुर्वन्धुमत्साम
 वेद यत्र हाऽप्येनं न विदुर्यत्र रोपन्ति यत्र परीवचत्तते तद्वाऽपि
 श्रेष्ठ्यमाधिपत्यमन्नाद्यम्पुरोधाम्पर्येति ॥६॥ आग्नेर्ह वा
 अवन्धुर्वन्धुमत्साम । कस्माद्वा ह्येनं दावोः कस्माद्वा पर्याष्टत्य
 मन्यन्ति स श्रेष्ठ्यायांऽऽधिपत्यायाऽन्नाद्याप पुरोधाय^९ जायते
 ॥७॥ स यत्र ह वा अप्येवंविद् न विदुर्यत्र रोपन्ति यत्र परीव-
 चत्तते तद्वाऽपि श्रेष्ठ्यमाधिपत्यमन्नाद्यम्पुरोधाम्पर्येति ॥८॥ ३॥६॥

द्विर्तायेऽनुवाके प्रथमः खण्ड ।

स्वयमु तत्र यत्रेनं विदुः ॥१॥ मुदाक्षिणो ह वै क्षेमिः प्राचीनशा-
 लिर्जावाली ते ह सप्रह्वचारिण आमुः ॥२॥ ते हेमे बहु जप्यस्य

१ प्रत्ति । २ तदान्, ददान् । ३ प्रक्ति, प्रवृत्तिः । ४ नो ।
 ५ 'हन्ताऽ' अधिक है । ७ नास्ति । ८ अप्य् । ९-हृन्त्य । १०-उप ।
 ११-सु । १२-धा । १३ धेष्- । १४-आये । १५ परिं ॥

१-शाःलिर । २ ह ।

चाऽन्यस्य चाऽनूचिरे^३ प्राचीनशालिश्च^४ जाबालौ च ॥३॥ अथ ह
 स्म मुदाक्षिणः^५ क्षैमिर्यदेव यज्ञस्याज्जो यत्सुविदितं तद् स्मैव
 पृच्छति ॥४॥ त उ ह वा अपोदिता न्याक्रोशमानाश्चेरुशुद्रौ^६
 दुरनुचान इति ह स्म मुदाक्षिणं क्षैमिमाक्रोशन्ति^७ प्राचीनशालिश्च^८
 जाबालौ च ॥५॥ स ह स्माऽऽह मुदाक्षिणः क्षैमिर्यत्र भूमिष्ठाः
 कुरुपञ्चालास्मागता भवितारस्तत्र एव संवादो नाऽनुपदृष्टे शूद्रा
 इव संवदिष्यामह^९ इति ॥६॥ ता उ ह वै जाबालौ दिदीक्षते^{१०} शुक्रश्च
 गोशुश्च^{११} । तयोर्ह प्राचीनशालिर्वृत^{१२} ज्ञाता ॥७॥ स तद् मुदाक्षिणो
 ऽनुबुबुधे जाबालौ हाऽदीक्षिपातामिति । स ह संग्रहीतारमुवाचा-
 ऽऽनयस्वाजरे जाबालौ हाऽदीक्षिपातां तद्गमिष्याव इति ॥८॥ ३७॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीय खण्डः ।

तस्य ह ज्ञातिका अश्रुमुखा इवाऽऽसुरन्यतरां वा
 अयमुपागादिति ॥९॥ अथ ह स्म वै यः पुत्राव्रह्मवाद्यं वदत्यन्य-
 तरामुपागादिति ह स्मेनम्मन्यन्ते । अथो ह स्मेनम्मृत्मिवैवोपासते
 ॥१०॥ तं ह संग्रहीतोवाचाऽय यद्गवस्ते ताभ्यां न कुशलं

२ द्वे । ३ ऽनूच-१४-शालाश् । ५-क्षै । ६ प्य-१-भ्रा । ७ चोरुन् ।
 ८-भ्रा । ९ अक्रोश-१० क्षीन् । ११-यतिष्य-१२ वदी-१३-रुश् ।
 १४ प्र-१५ संसं-१६ दिदीक्ष-१७-यास्वा ॥

कथेत्थमात्थेति ॥३॥ शोमिति होवाच गन्तव्यम्म आचार्यस्सुय-
मानमन्यवेति ॥४॥ स ङ रथमास्थाय प्रधावयांचकार । तं ह स्म
प्रतीक्षन्ते ॥५॥ कं जानीतेति । मुदादिण इति । न वै नूनं स
इदमभ्यवेयादिति । स एवेति ॥६॥ स ह सोपानादेवाऽन्तर्वेद्यव-
स्थायोवाचाऽङ्गन्यित्थं गृह्यता३ इति । ङ ह नाऽनूदतिष्ठा-
सत् । स होवाचाऽनूत्थाता^६ म^७ एवे । ऋष्णाजिनोऽसी[ति] ।
तदिमे कुस्पञ्जाला अविदुरनूत्थातैव त इति होचुः ॥७॥ तं ह
कनीयान्भ्रातौवाचाऽनुत्तिष्ठ^{११} । भगव उद्गातारमिति । तं हा
ऽनूत्तस्यौ ॥८॥ स होवाच त्रिवे^{१२} गृहपते पुरुषो जायते ।
पितुरेवाऽग्नेऽधि जायतेऽथ मातुरथ यज्ञात् ॥९॥ त्रिवे^{१३} व^{१४} त्रियत^{१५}
इति । स यद् वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भृतं सिञ्चति-॥१०॥११८

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयं खण्ड ।

—तत्प्रथमम्व्रियते ॥१॥ अन्धमिव वै तमो योनिः । लोहि-
तस्तोको वा वै स तदाभयस्यपां वा स्तोकः । किं हि स^१ तदा-
भवति ॥२॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भरति या

२ त- । ३ आर्चे- । ४ सुय- । ५-ष्टम् । ६-ऊदा- ।
७ म । ८ 'इति' अधिक हे । ९ भ्रातो । १० वा । ११ अनुत्तिष्ठ ।
१२ त्रि- । १३ अ, ऊ । १४ नास्ति । १५ त्रियत ॥

१ अन्ध- । २ यो । ३ म् ।

चैनं तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥३॥ अथ
य एनमेतद्दीक्षयन्ति ताद्वितीयमिन्द्रयते । वपन्ति केशश्मश्रूषि ।
निकृन्तन्ति नखान् । मृत्यञ्जन्यद्धानि । प्रत्यचत्यङ्गुलीः ।
अपहृतोऽपवेष्टित आस्ते । न जुहोति । न यजते । न योषितं
चरति । अमानुषी वाचं वदति । मृतस्य वावैष^{१०} तदा रूपम्भवाति
॥४॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं
तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥५॥ अथ य
एनमेतदस्माल्लोकात्पेतंचित्यामादधति तद् तृतीयमिन्द्रयते ॥६॥ स
यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं तम्मृत्यु-
मतिवहति^{११} स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥७॥ एतावद्देवोक्त्वा^{१४}
रथमास्थाय प्रधावयांचकार ॥८॥ तं ह जात्रालम्पत्येतं कनीयान्
भ्रातोवाच^{१५} काम्भराञ्छूद्रको वाचमवादीति । हस्तिना गाधमैषी-
रिति ॥९॥ प्र हैवैनं तच्छंसं यः कथमवोचद्गव इति । यस्वपाणा-
मृत्युनां साम्नाऽतिवाहं वेद स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥१०॥१॥९॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

४ चे । ५ दि-१६-अजत् । ७ यज्- । ८ अय- । ९ यौष्-१० स ।
११ का' अधिक है । १२ यन्तम् । १३-तीति । १४ वा । १५वहतीति'
अधिक है । १६-घञ् ॥

तं वाच भगवस्ते पितोऽज्ञातारममन्यतेति होवाच । तदु इ
 मार्चीनशाना विदुर्य एपामयं दृन उद्गाताऽऽसं । तास्मिन् इ ना-
 ऽनुविदुः ॥१॥ ते होचुरनुधावत कारइरियामिति । तं हाऽनु-
 ससुः । ते इ कारइवियमुद्गातारं चक्रिरे ब्रह्माण्म्राचीन-
 शालिम ॥२॥ तं हाऽभ्यवेद्योवाचैवमेव ब्राह्मणो मोषाय
 वादाय नाऽग्लायत् । स नाऽणु साम्नोऽन्विच्छतीति । प्राति हैवैनं
 तच्छक्रे ॥३॥ स यद् वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्च-
 त्यादित्यो हैनं तद्योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति । स हाऽस्य तत्र
 मृत्योरीशे ॥४॥ अथो यदेवैनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति
 तद् वाच स ततोऽनुसम्भवति प्राणं च । यदा होव रेतस्सिक्तं
 प्राण आविशत्यथ तत्सम्भवति ॥५॥ अथो यदेवैनमेतदीक्षयन्त्य-
 मिहैवैनं तद्योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति । स हैवाऽस्य तत्र
 मृत्योरीशे ॥६॥ अथो यामेवैतां वैसर्जनीयामाहुतिमध्वर्युर्जुहोति
 तमिव स ततोऽनुसम्भवति छन्दांसि चैव ॥७॥ अथ य एनमे-

१-ए । २ विपुद् । ३ सः । ४ फान्त्याचयम् । ५-च्छ. ।
 ६ ब्राह्मणम् । ७-वेद्यया । ८ न्वीच्छ- । ९ रणम् । १० नास्ति । ११ एत्- ।
 १२-धो । १३ 'अथोवाच' अधिक है । १४ 'अथो य एनमेतदी-
 क्षयन्त्य' 'तत्रमृत्योरीशे' अधिक है । १५ 'अथो यदेवैनमे-
 तदीक्षयन्ति' अधिक है । १६ अस्ति ।

तदस्माद्धोकात्प्रेनं चित्यामादधति चन्द्रमा हैवेनं तद्योन्यां रेतो
भृतं सिञ्चति । स उ हैवाऽस्य तत्र मृत्योरीशे ॥८॥ अथो यदेवैन-
मेतदस्माद्धोकात् प्रेतं चित्यामादधत्यथो या एवेता अबोक्षणी-
या आपस्ता एव स ततोऽनुसम्भवति प्राणम्वेव । प्राणो ह्यापः ॥९॥
तं ह वा एवंविद्द्राता यजमानमोमित्येतेनाक्षरेणाऽऽदित्यमृत्यु-
मतिवहति वागित्यार्थि हुमिति वायुम्भा इति चन्द्रमसम् ॥१०॥
तान् वा एतान्मृत्युन् साम्नोद्राताऽऽत्मानं च यजमानं चाऽति-
वहत्योमित्येतेनाक्षरेण प्राणेनाऽमुनाऽऽदित्येन ॥११॥

तस्यैष श्लोकः—

उनेषा ज्येष्ठं उत वा किनष्ट उतीषाम्पुत्र उत वा पितेषाम् ।

एको ह देवो मनसि प्रविष्ट पूर्वो ह जसे स उ गर्भेऽन्त —

इति ॥१२॥ तद्यदेशोऽभ्युक्तं इममेव पुरुषं योऽथमाह्वञ्चो
ऽन्तरोमित्येतेनैवाक्षरेण प्राणेनैवाऽमुनैवाऽऽदित्येन [...] ॥१३॥ १३१०

द्वितीयेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

त्रिहं वै पुरुषो अियते त्रिर्जायते ॥१॥ स हैतदेव प्रथममिन्द्रयते
प्रेतसिक्तं सम्भूतम्भवति । स प्राणमेवाऽभिसम्भवति । आशाम-

१७-आन् । १८-वन्तीति । १९ ता । २० जैष्ठ । २१ लघु-
२१ अह्वयन् ॥

१ हे । २ 'स हैतदेव प्रथममिन्द्रयते त्रिर्जायते' अधिक ही । ३ सम्भू-

भिजायते ॥२॥ अथैतद्वितीयमिन्द्रियते यदीक्षते । स छन्दांस्येवा-
 ऽभिसम्भवति । दक्षिणामभिजायते ॥३॥ अथेतत् तृतीयमिन्द्रियते
 यन्मिन्द्रियते । स श्रद्धामेवाऽभिसम्भवति । लोकमभिजायते ॥४॥
 तदेतत् व्यावृत्तं गायति । तस्य प्रथमयाऽऽद्यतेममेव लोकं जयति
 यदु चाऽस्मिँलोके । तदेतेन चैनम्वाणेन समं यति यमभिसम्भवसेतां
 चाऽस्मा आशाम् प्रयच्छति यामभिजायते ॥५॥ अथ द्वितीययाऽऽद्यते-
 दमेवाऽन्तरिक्षं जयति यदु चान्तरेक्षे । तदेतैश्चैनं छन्दोभिस्स-
 मर्षयति यान्यभिसम्भवति । एतां चास्मै दक्षिणाम्प्रयच्छति याम-
 भिजायते ॥६॥ अथ तृतीययाऽऽद्यताऽगुमेव लोकम् जयति यदु
 चाऽमुष्मिँलोके । तदेतया चैनं श्रद्धया समं यति ययैरैनमेतच्छ्रद्ध-
 याऽप्राप्तभ्यादधाति समयामितो भविष्यतीति । एतं चास्मै लो-
 कम्प्रयच्छति यमभिजायते ॥७॥३११॥

तृतीयेऽनुराक्षे प्रथमं खण्ड ।

एतदे तिष्ठभिरावृद्धिरिमोश्च लोकाञ्जयत्येतैश्चैनम्भूतैस्समं य-
 ति यान्यभिसम्भवति ॥१॥ अथ वा अतो हिङ्गारस्यैव । तं ह स्वर्गे
 लोके सन्तम्भृत्युरन्वेरांशन्वा ॥२॥ श्रीर्वा एषा मजापतिस्साम्नो

४ घोव । ५-म । ६ त्रियु- । ७-अन्ति । ८ इम-(!) । ९-मृध- ।

१० 'न्यभिसम्भवति' अधिक द्वे खाल रग से कटा हुआ । ११ घ ।

१२ ऽद्यात् । १३-आ ।

१ खोष्- । २-मृध- । ३ नास्ति । ४ सितम् । ५ अनेति । ६ थी ।

यदिङ्कारः । तमिदुंरात्रा श्रिया प्रजापतिना हिङ्कारेण मृत्युमपस्येध-
 त्ति ॥३॥ हुम्भेयाह गाऽन नु गा यत्रैवजमान इति हैतव ॥४॥
 स यथा श्रेयसा सिद्धः पापीयान् प्रतिविजते एव हैवाऽस्मान्मृत्युः
 पाप्मा प्रतिविजते ॥५॥ यन्भेयाह चन्द्रमा वै मा मासः । एष
 ह वै मा मासः । तस्मान्भेयाह । भा इति हैतत्परोक्षेणैव । यस्माद्वेव
 भेयाह पदेव^१ भेयाहेतानि त्रीणि । तस्मान्भेति ह्ययात् ॥६॥११२॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीय खण्डः ।

हुम्भा इति ब्रह्मवर्चसकामस्य । भातीव हि ब्रह्मवर्चसम् ॥७॥
 हुम्भो इति पशुकामस्य । जो इति ह पशवो वाश्यन्ते ॥८॥ हुम्
 वगिति श्रीकामस्य । वगिते ह श्रियम्पणायन्ति ॥९॥ हुम्
 भा भोवा इत्येतदेवोपगीतम् ॥१०॥ महादिनाऽभिपरिवर्तयन् गांय-
 दिति ह स्माऽऽह नाको महाग्रामो महानिवेशो भवतीति । स यथा
 स्थाणुमर्षयिचेतरेण^२ वेतरेण वा परियायात्^३ तादृक्तव ॥११॥ तदु
 होवाच शाश्वायनिः कस्मै कामाय स्थाणुमर्षयेत् । अथोपगीतमे-
 वैतव । नैवैतदादिनेनेति ॥१२॥ [इति] नु हिङ्काराणाम् । अथ वा

७ पद । ८ ' इति ' अधिक है । ९-विच-न १० प पवम् ।
 ११ भाग । १२ पेष ॥

१ घा । २ धिंङ्-; -सु । ३-या, अयित्वा । ४ रेव । ५ पव्या-न
 ६ ङ्ङ् । ७ घाङ्- । ८ हिङ्कार-

अग्नो निधनमेव । ओवी इति द्वे अक्षरे । अन्तो वै साधो निरन-
 मन्तस्वर्गो लोकानामन्तो अत्रम्य विष्टपम् ॥७॥ तमेतद्गुहाता
 यजमानमोमिसेतेनाक्षरेणान्ते स्वर्गे लोके दधाति ॥८॥ य उ
 ह वा अपत्तो वृक्षाग्रं गच्छसव वै स ततः पद्यते । अत्र यद्वै पत्नी
 वृक्षाग्रे यद्वैस्यारायां यत्तुरधारायामाम्ने न वै स ततोऽपपद्यते ।
 पक्षाभ्यां हि संयत् आस्ते ॥९॥ तमेतद्गुहाता यजमा-
 नमोमिसेतेनाक्षरेण स्वरपक्षं कृत्यान्ते स्वर्गे लोके दधाति । स
 यथा पक्ष्यविभ्यदासीतैवमेव स्वर्गे लोकेऽविभ्यदामेऽयाऽऽचरति
 ॥१०॥ ते ह वा एते अक्षरे देवलोकश्च मनुष्यलोकश्च । आदि-
 लश्चै ह वा एते अक्षरे चन्द्रमाश्च ॥११॥ आदित्य एव देवलोक-
 श्चन्द्रमा मनुष्यलोकः । ओमित्यादिसौ वागिति चन्द्रमाः ॥१२॥
 तमेतद्गुहाता यजमानमोमिसेतेनाक्षरेणाऽऽदित्यं देवलोक गमय-
 ति । १३॥१३॥

वृमीयेऽनुवाके चर्तय्य चरड् ।

तं हाऽऽगतमृच्छानि कम्बमसीति । स यो ह नाज्ञा वा गो-
 त्रेण वा मरूते तं हाऽऽह यस्तेऽयम्यात्माऽमूदेप ते स इति ॥१॥

तस्मिन् हाऽऽत्मन् प्रतिपद । तमृतवस्सम्पदार्यपद्गृहीतमपकर्षन्ति ।
 तस्य हाऽहोरात्रे लोऽरुमाप्नुवः ॥२॥ तस्मा उ हैतेन^३ प्रभ्रुवीत^४ को-
 ऽहमस्मि सुवस्वम् । स त्वा स्वर्ग्यं^५ स्वरगामिति ॥३॥ को ह वै
 प्रजापतिरथ हैवंविदेव नृवर्गः । स हि सुरगञ्जति ॥४॥ त हा-
 ऽऽह यस्त्वमसि सोऽहमस्मि योऽहमस्मि स त्वमस्येहीति ॥५॥
 स एतमेव मुष्टतरसम्प्रविशति । यदु ह वा अरिमँल्लोके मनुष्या
 यजन्ते^६ यत्साधु^७ कुर्वन्ति तदेपामूर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति । तदमुं
 चन्द्रमसम्मनुष्यलोकम्प्रविशति ॥६॥ तस्यैदम्मानुपनिकाशन-
 मण्डमुदरे^{१०}ऽन्तस्सम्भरति । तस्योर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति स्तनार्वाभि^{११} ।
 स यदाजायतेऽथाऽस्मै माता स्तनमन्नाद्यम्प्रयच्छति ॥७॥ अजातो
 ह वै तारत्पुरूपो यावन्न यजते स यज्ञेनैव जायते । स यथाऽण्ड
 म्प्रथमनिर्भिण्णमेवमेव ॥८॥ तदा ते ह वा एविवदुद्राता यज-
 मानमोमित्येतेनाऽन्तरेणाऽऽदित्यं देवभोकं गमयति । चाग्नि-
 त्यस्मा उत्तरेणाऽन्तरेणा चन्द्रमसमन्नाद्यमक्षितिम्प्रयच्छति ॥९॥
 अथ यस्यैतदविद्वानुद्रायति^{१५} न हैवैन देवभोकं गमयति नो

२ त । ३ तैत । ४-प्रह-, -घीत् । ५-गम् । ६ सुस्वर-, -म् ।
 ७ जायन्ते । ८-सै- । ९-सै । १०-पँ-निष्-इस के पश्चात् 'इदम्' । ११ अदरे ।
 १२ सूव- । १३-नाच् । १४ जायते । १५-स । १६-यक्षिति । १७ ना ।

एनमन्नाद्येन समर्धयति ॥१०॥ स यथाऽऽहं विदिग्धं शयीता-
 ऽन्नाद्यमलभमानमेवमेव विदिग्धश्चेत्तेऽन्नाद्यमलभमानः ॥११॥
 तस्माद्दु ह्येवंविदमेवोद्गापयेत् । एवंविदिह्वोद्गातारिति हृतः
 प्रतिमृणुयात् ॥१२॥३११४॥

तृतीयेऽनुयाके चतुर्थं खण्ड । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

वागिति हेन्द्रो विश्वामित्रायोक्यमुवाच । तदेतद्विश्वामित्रा
 उपासते वाचमेव ॥१॥ मनुर्ह वसिष्ठाय ब्रह्मत्वमुवाच । तस्मादा-
 हुर्वासिष्ठमेव ब्रह्मोति ॥२॥ तद्दु वा आहुरेवंविदेव ब्रह्मा । क उ
 एवंविदं वासिष्ठमर्हतीति ॥३॥ प्रजापतिः प्राजिजनिपत् । स
 तपोऽतप्यत् । स ऐक्षत इन्त नु प्रतिष्ठां जनये ततो याः प्रजारस्रक्ष्ये
 ता एतदेव प्रतिष्ठास्यन्ति नाऽप्रतिष्ठाश्चरन्तीः प्रदधिप्यन्त इति ॥४॥
 स इमं लोकमजनयदन्तरिक्षलोकममुं लोकमिति । तानिमूर्खी-
 ल्लोकाञ्जनयित्वाऽभ्यश्राम्यत् ॥५॥ तान् समतपत् । तेभ्यस्संतप्ते-
 भ्यस्त्रीणि शुक्रायुदायन्नाग्निः पृथिव्या वायुरन्तरिक्षादादित्यो
 दिवः ॥६॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्यस्संतप्तेभ्य

१८-मृध-। १९-आ । २०-आ । २१-श्रुणु-॥

१ हे । २ उत्थ-। ३ जाये, जनये । ४ मृध-। ५ ताम् । ६-मु ।

७ सममयत् । ८ स्म । ९-त् ।

स्त्रीण्येव शुक्रायुदायन्मृग्वेद एवाऽग्नेर्यजुर्वेदो धायोस्सामवेद
 आदिसात् ॥७॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्य-
 स्संतप्तेभ्यस्त्रीण्येव शुक्रायुदायन्भूरित्सेयर्ग्वेदाद्भुव इति यजुर्वेदा-
 त्स्वरिति सामवेदात्तदेव^{१०} ॥८॥ तद्ध वै त्रयै विद्यायै शुक्रम ।
 एतावदिदं सर्वम् । स यो वै त्रयीं विद्यां विदुषो लोकस्सोऽस्य
 लोको भवति य एवं वेद ॥९॥१०॥११॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अयं वाच यज्ञो योऽयम्भवते । तस्य वाक् च मनश्च वर्तन्यौ ।
 वाचा च ह्येष एतन्मनसा च वर्तते ॥१॥ तस्य होताऽध्वर्युरुद्गाते-
 तन्यतरां वाचा वर्तन्ति संस्कुर्वन्ति ! तस्मात्ते वाचा कुर्वन्ति ।
 ब्रह्मैव मनसाऽन्यतराम्^१ । तस्मात्स तृप्णीमास्ते ॥२॥ स यद्ध सो-
 ऽपि स्तूयमाने वा शस्यमाने वा वाचद्यमान आसीताऽन्यतरामेवा-
 ऽस्यापि तर्हि स वाचा वर्तन्ति संस्कुर्वति ॥३॥ स यथा पुरुष
 एकपाद्यन् श्रेपन्नाति रथो वैकचत्रो वर्तमान^३ एवमेव तर्हि यज्ञो
 श्रेपन्नेति ॥४॥ एतद्ध तद्विद्वान् ब्राह्मण उवाच ब्रह्माण्म्यातरनु-

वाक उपाकृते वा वद्यमानमासीनमर्षे वा इमे तर्हि यज्ञस्याऽन्तर-
 गुरिति । अर्थ हि ते तर्हि यज्ञस्याऽन्तरीयुः ॥५॥ तस्माद्ब्रह्मा
 प्रातरनुवाक उपाकृते वाचंयम आसीताऽऽपरिधानीयाया आ वपद्
 कारादितरेषां स्तुतशस्त्राणामेवाऽऽमंस्थायै पवमानानाम् ॥६॥
 स यथा पुरुष उभया पाद्यन् श्रेपं न न्येति रथो बोभयान्नरो-
 वर्तमान एवमेतर्हि यज्ञो श्रेपं न न्येति ॥७॥३१६॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स यदि यज्ञ ऋक्तो भ्रेपानियाद्ब्रह्मणे मद्रूतेसाहुः । अथ यदि
 यजुष्टो ब्रह्मणे मद्रूतेसाहुः । अथ यदि सामतो ब्रह्मणे मद्रूतेसाहुः ।
 अथ यद्यनुपस्मृतात् कुत इदमजनीति ब्रह्मणे मद्रूतेसेवाऽऽहुः ॥१॥
 स ब्रह्मा माद् उदेत्य सुवेणाऽऽग्नीध्र आज्यं जुहुयाद्भुवस्स्वरिसे-
 ताभिर्व्याहृतिभिः ॥२॥ एता वै व्याहृतयस्सर्वे शायश्चित्तयः । तद्यथा
 लवणेन सुवर्णं सैदध्यात् सुवर्णेन रजतं रजतेन अपु ब्रपुष्णा
 लोहायसं शोहायसेन कार्पणायसं कार्पणायसेन दारु दारु च चर्म

१-भो । २-चास्त्र- द्विवार पदा गया है । ७-र । ८-गु-
 रुर । ९-ऽन्तर्युः । १०-अ । ११-पाद् । १२-यद् । १३-नं ॥

१६-। २-यो । ३-रथ । ४-प्रन्व । मा । ५-विद्घ- । ६-यु
 ७-कर-।

च श्लेष्मणैर्वमैवेयं विद्वोस्तत्सर्वं भिषज्यति ॥३॥ तदाहुर्यदहोपीन्मे
 ग्रहान्मेऽग्रहीदिसध्वर्यवे दक्षिणानयन्त्संसीन्मे वषट् अकर्म इति
 होत्र उदगासीन्म इत्युद्गात्रेऽथ क्रिं चक्रुपे ब्रह्मणे दृष्णीमासीनाय
 समावतीरेवेतरैर्ऋत्विग्भिर्दक्षिणा नयन्तीति ॥४॥ स ब्रूयादर्ध-
 भाग्य वै स यज्ञस्याऽर्धं ह्येष यज्ञस्य वहतीति । अर्धा ह स्म वै
 पुरा ब्रह्मणे दक्षिणा नयन्तीति । अर्धा इतरेभ्य ऋत्विग्भ्यः ॥५॥
 तस्यैप श्लोको—

मयीदम्मन्ये भुवनादि सर्वम्, मयि लोका मयि दिशश्चतस्रः ।

मयीदम्मन्ये निमिषद्यदेजति, मय्याप ओषधयश्च सर्वा, इति ॥६॥

मयीदम्मन्ये भुवनादि सर्वमित्थेवंविदं ह वावेदं सर्वम्भुवनमन्वा-
 यत्तम् ॥७॥ मयि लोका मयि दिशश्चतस्र इत्येवंविदि ह वावलोका
 एवंविदि दिशश्चतस्रः ॥८॥ मयीदम्मन्ये निमिषद्यदेजति मय्याप
 ओषधयश्च सर्वा इत्येवंविदि ह वावेदं सर्वम्भुवनम्प्रतिष्ठितम् ॥९॥
 तस्माद्दु हेवंविदेमेव ब्रह्माणं कुर्वीत । स ह वाव ब्रह्मा य एवं
 वेद ॥१०॥११॥७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्ड ।

८ श्लेष्म (सदध्यात्) ण कोष्ठ लाल रंग में कटा हुआ । ९-पृ ।
 १० अहृण् । ११ मय् । २० 'एव' नास्ति । २१ आशांसीन् । १२-२२ ।
 १३-आह । १४ नास्ति । १५ वै । १६ प । १७ मतिही । १८-२ । १९ यव ।

अथ वा अतस्तोमभागानामेवाऽऽनुमन्त्राः ॥१॥ तद्धैतदेके
 स्तोमभागैरेवाऽऽनुमन्त्रयन्ते । तत्तथा न कुर्यात् ॥२॥ देवेन सवित्रा
 प्रमृतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्येत्यु हैकेऽऽनुमन्त्रयन्ते सविता वै
 देवानाम्प्रसविता सवित्रा प्रमृता इदमनु मन्त्रयामह इति वदन्तः ।
 तद्दु तथा न कुर्यात् ॥३॥ भूर्भुवस्स्वमित्यु हैकेऽऽनुमन्त्रयन्त एषा
 वै त्रयीविद्या त्रय्यै वद प्रिययाऽऽनुमन्त्रयामह इति वदन्तः । तद्दु
 तथा नो एव कुर्यात् ॥४॥ ओमित्सेवानुमन्त्रयेत् ॥५॥ अथैष
 वसिष्ठस्यैकस्तोमभागानुमन्त्रः । तेन हैतेन वसिष्ठः प्रजातिकामो-
 ऽनुमन्त्रयां चक्रे देवेन सवित्रा प्रमृतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्य
 भूर्भुवस्स्वरोमिति । ततो वै स बहुः पजया पशुभिः प्रजायत ॥६॥
 स एव तेन वसिष्ठस्यैकस्तोम भागानुमन्त्रेणाऽऽनुमन्त्रयेत् बहुरेव
 प्रजया पशुभिः प्रजायेत् । इव त्वेवस्थितिरोमित्सेवाऽऽनुमन्त्रयेत्
 ॥७॥३१७॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थे अक्षरे ।

१ स्तोम- २ नु । ३ कुर्यात् । ४ हं । ५ ने ' ए ' खाल में कटा,
 ए । ६-ई । ७ त्रय्ये । ८ इत् । ९-याया । १०-हु । ११-जाया ।
 १२ प्राज्ञ- । १३ तस्मात्-) १४-येते । १५ इय । १६ पञ्चम ।
 १७-स्ता ॥

अथैष वाचा वज्रमुदगृह्णाति । यदाह सोमः पवत इति वोपावर्त-
 ध्वामिति वा वाचैव तदाचो वज्रं विगृह्यते वाचस्सत्येनातिमुच्यते ।
 तस्मादोमित्येवाऽनुमन्त्रयेत् ॥१॥ देवा वा अनया^२ त्रय्या
 [विद्यया] सरसयोर्ध्वास्स्वर्गं लोकमुदक्रामन् । ते मनुष्या-
 षामन्वागमाद्विभ्यतस्त्रयं^३ वेदमपीलयन् ॥२॥ तस्य पीलयन्त
 एकमेवाक्षरं नाऽशक्नुवन्पीलयितुमोमिति यदेतत् ॥३॥ एष उ
 ह वाव सरसः । सरसा इ वा एवंविदस्त्रयी विद्या भवति ॥४॥
 स यां ह वै त्रय्या^४ विद्यया सरसया जितिं जयति यामृद्धिमृध्नोति
 जयति तां जितिमृध्नोति तामृद्धिं य एवं वेद ॥५॥ एतद् वा
 अक्षरं त्रय्यै विद्यायै प्रतिष्ठा^५ । ओमिति वै होता प्रतिष्ठित ओमित्य-
 ध्वयुरोमित्युद्गाता ॥६॥ एतद् वा अक्षरं वेदानां त्रिविष्टपम् ।
 एतस्मिन्वा अक्षरं^६ ऋत्विजो यजमानमाधाय स्वर्गं लोके समुदहन्ति
 तस्मादोमित्येवानुमन्त्रयेत् ॥७॥ ३।१-६॥

चतुर्थेऽनुयाके पञ्चमः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

गुहासि देवोऽस्युपवा^१स्युप^२ तं वायस्व^३ योऽस्मान्द्वेष्टि^४ ये च वयं
 द्विष्मः ॥१॥ माहेनासि^५ बहुनामि वृहत्यासि रोहियस्यपन्नासि ॥२॥

१ य । २-सं । ३ विम्- । ४ त्रय्य- । ५ प्रतिष्ठे । ६-ए ।

१ देवास्मि । २ ए । ३ ध्वयस्वि । ४ महिका ।

सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । मूतिरसि
भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तत्र ताः पर्येमि । उप ते
ता दिशामि ॥४॥ नाम मे शरीरम्मे प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि
तन्मे मोऽपहृया इतीषाम्पृथिवीमवोचत् ॥५॥ तामियमागतम्पृथिवी
प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावय लोक इति ॥६॥
यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किंनु ते मयीति ।
नाम मे शरीरम्मे प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि तन्मे पुनर्देहीति ।
तदस्मा^{१४} इयम्पृथिवी पुनर्देदाति ॥८॥ तामाह प्र मा बहेति ।
किमभीति । अग्निमिति तमग्निमभिप्रवहति ॥९॥ मोऽग्निमाहा-
ऽभिजिदस्याभिजय्यासम्^{१०} । लोकजिदसि लोकं जय्यासम् ।
आत्तिरस्यन्नमयासम् । अन्नादो भवति यस्त्यैवं वेद ॥१०॥
सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । मूतिरसि
भूयासम् ॥११॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तत्र ताः पर्येमि ।
उप ते ता दिशामि ॥१२॥ तपो मे तेजो मेऽन्नम्मे वाढ मे । तन्मे
त्वयि । तन्मे मोऽपहृया^{१२} इत्याग्निमवोचत् ॥१३॥ त तयैवाऽऽगत-

५ धामृत्तिर् । ६ स । ७ मवी । ८ म । ९-हन्ति ।
१० 'अभिजिदस्य' दोषात् प्राया है । ११ जय्ये- । १२-धाय ।
१३ तस्मा । १४ अस्मात् ॥

भाग्निः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकस्सह नावयं लोक इति ॥१४॥
 यद्वाव मे त्वयीत्याहु तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१५॥ किं नु ते
 मयीति । तपो मे तेजो मेऽन्नम्मे वाद् मे । तन्मे त्वयि । तन्मे
 पुनर्देहीति । [तद्] अस्मा^{१२} भाग्निर्पुनर्ददाति ॥१६॥ तमाह प्र मा
 वहेति ॥१७॥१२०॥

पञ्चमऽनुवाके प्रथम खण्डः ।

किमभीति । वायुमिति । तं वायुमभिप्रवहति ॥१॥ स वायु-
 माह यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रो राजा भूतो वासि । यद्दक्षिणतो वासीशानो
 भूतो वासि । यत्पश्चाद्वासि वरुणो राजा भूतो वासि । यदुत्तरतो
 वासि सोमो राजा भूतो वासि । यदुपरिष्ठादववासि प्रजापतिर्भूतो-
 ऽववासि^१ ॥२॥ व्रात्यो^२ ऽस्येऋवात्योऽनवष्टो^३ देवानाम्बिलमप्यवा^४ ॥३॥
 तव प्रजास्तवा^५ पथयस्तवाऽऽपो विचलितमनुविचलन्ति ॥४॥ सम्भू-
 र्देवो^६ ऽसि समहम्भूयासम् । प्राभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि
 भूयासम् ॥५॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टानाऽहं तव ताः पर्येमि । उप
 ते ता दिशामि ॥६॥ प्राणापाणौ मे श्रुतन्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे
 मोऽपष्टया इति वायुमवोचत् ॥७॥ तं तथैवागतं वायुः प्रतिनन्दत्ययं
 ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥८॥ यद्वाव मे त्वयी-

साह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥६॥ किं नु ते मयीति । प्राणापानौ
मे श्रुतस्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै वायुः पुन-
र्ददाति ॥१०॥ तमाह प्र मा वहेति । किमभीति । अन्तरिक्षलोक-
मिति । तमन्तरिक्षलोकमभिप्रवहति ॥११॥ तं तथैवाऽऽगतमन्तरिक्ष
लोकः प्रति नन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक
इति ॥१२॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१३॥ किं
नु ते मयीति । अयम् आकाशः स मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति ।
तमस्मा आकाशमन्तरिक्ष लोकः पुनर्ददाति ॥१४॥ तमाह प्र मा
वहेति ॥१५॥१२॥१३॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीय खण्डः ।

किमभीति । दिश इति । तं दिशोऽभिप्रवहति ॥१॥ तं तथै-

वागतं दिशः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक

इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं

नु तेऽस्मास्विति । श्रोत्रमिति । तदस्मै श्रोत्रं दिशः पुनर्ददति ॥४॥

ता आह प्र मा वहेति । किमभीति । अहोरात्रयोर्लोकमिति ।

तमहोरात्रयोर्लोकमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतमहोरात्रे प्रति-

नन्दतोऽयं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव

मे युवयोरित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तमिति ॥७॥ किं नु त आवयोरिति ।
 अक्षितिरिति । तामस्मा अक्षितिमहोरात्रे पुनर्दत्तः ॥८॥ ते आह
 प्र मा वहतमिति ॥९॥३१२२॥

पञ्चमेऽनुषाके तृतीयः खण्डः ।

किमभीति । अर्धमासानिति । तमर्धमासानभिप्रवहतः ॥१॥
 तं तथैवागतमर्धमासाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह
 नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्ते-
 ति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि क्षुद्राणि पवाणि । तानि
 मे युष्मासु । तानि मे प्रति संधत्तेति । तान्यस्यार्धमासाः पुनः
 प्रति संदधति ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । मासा-
 निति । तम्मासानभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतम्मासाः
 प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥
 यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मा-
 स्विति । इमानि स्थूलानि पर्वाणि । तानि मे युष्मासु । तानि मे
 प्रति संधत्तेति । तान्यस्य मासाः पुनः प्रति संदधति ॥८॥
 तानाह प्र मा वहतेति ॥९॥३१२३॥

पञ्चमेऽनुषाके चतुर्थः खण्डः ।

किमभीति । ऋतूनि । तमृतूनभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं तथैवाऽऽगतमृतवः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोज्यं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि ज्यायांसि पर्वाणि । तानि मे युष्मासु तानि मे प्रतिसंधत्तेति । तान्यस्यर्तयः पुनः प्रतिसंदायति ॥४॥ तानाह प्र मा बहेति । किमभीति । संवत्सरमिति । तं संवत्सरमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं संवत्सरः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे त्वधीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयीति । अयम्प्रात्मा । स मे त्वाये तन्मे पुनर्देहीति । तमस्मा आत्मानं संवत्सरः पुनर्ददाति ॥८॥ तमाह प्र मा बहेति ॥९॥ ३।२४॥

पञ्चमेऽनुवाके पञ्चम खण्डः ।

किमभीति । दिव्यान् गन्धर्वानिति तं दिव्यान् गन्धर्वानभिप्रवहति ॥१॥ त तथैवाऽऽगतं दिव्या गन्धर्वाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोज्यं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति ।

१ नै-२ त्यधी । ३ घृते ॥

३ त । *

गन्धो^२ मे मोदो मे ममोदो मे । तन्मे युष्मांसु । तन्मे पुनर्दत्तेति
 तदस्मै दिव्या गन्धर्वाः पुनर्ददति ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति ।
 किमभीति । अप्सरस इति । तमपसरसोऽभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं
 तथैवाऽऽगतमपसरसः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं
 लोक इति ॥६॥ यद्वा^३व मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति
 ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । हसो मे क्रीळा मे मिथुनम्मे । तन्मे
 युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति । तदस्मा अप्सरसः पुनर्ददति ॥८॥
 ता आह प्र मा वहतेति ॥९॥३२५॥

पञ्चमेऽनुवाके षष्ठः खण्डे ।

किमभीति । दिवमिति । तं दिवमभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं
 तथैवाऽऽगतं द्यौः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं
 लोक इति ॥२॥ यद्वा^३व मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥
 किं नु ते मयीति । तृप्तिरिति । सकृत्तृप्तेव द्वेषा । तांस्मै तृप्तिं
 द्यौः पुनर्ददाति ॥४॥ तंमाह प्र मा वहतेति । किमभीति । देवानिति ।
 तं देवानभिप्रवहति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं देवाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते
 भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वा^३व मे युष्मास्वि-

२ गन्धर्वो । ३ युयद् ॥

१ द्यौः ।

साह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । अमृतमिति ।
तदस्मा अमृतं देवाः पुनर्ददाति ॥८॥ तानाह प्रमावहतेति ॥९॥ ३ । २६ ॥

पञ्चमेऽनुयाके सप्तम खण्डः ।

किमभीति । आदित्यमिति । तमादित्यमभिपवदन्ति ॥१॥ स
आदित्यमाह विभुः पुरस्तात्सम्पत् पश्चात् । सम्यहं त्वमसि ।
समीचो मनुष्यानरोपी रूपतस्त श्यपिः पाप्मानं हन्ति । अपहत-
पाप्मा भवति यस्त्वेवं वेद ॥२॥ सम्भृद्वैवोऽसि समहम्भूयासम् ।
आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा
उपदिष्टा नाहं तत्र ताः पर्येभि । उप ते ता दिशामि ॥४॥ भोजो
मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे त्वयि तन्मे योऽपहृथा इत्यादित्यमरोचत् ॥५॥
तं तथैवाऽऽगतमादित्यः प्रतिनन्दस्यं ते भगवो लोकः । स ह
नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे त्वयीसाह तद्वाव मे पुनर्देही-
ति ॥७॥ किं नु ते मयीति । भोजो मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे
त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मा आदित्यः पुनर्ददाति ॥८॥
तमाह प्रमा वहेति । किमभीति । चन्द्रमसमिति । तं चन्द्रमसमभि-

२-दाति ॥

१-यत् । २ सम्यहं । ३ अतोत्तियि 'ति' लाख से कटा हुआ है ।
। ४ त्व् । ५ एषम् । ६-भूतिर् । ७ भूतिर् । ८ अगता । ९ नास्ति ।
१० त्वयी. त्वी घीति । ११ खं द-

प्रवहति ॥६॥ स चन्द्रमसमाह सतस्य पन्या न त्वा जहाति^{१२} ।
 अमृतस्य^{१४} पन्या न त्वा जहाति ॥१०॥ नवो नवो भवसि जाय-
 मानो भरो नाम ब्राह्मण उपास्ते । तस्मात्ते सखा उभये देवमनुष्या
 अन्नाद्यम्भरन्ति । अन्नादो भवति यस्त्वेवं^{१५} वेद ॥११॥ सम्भूर्देवो-
 ऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि
 भूयासम् ॥१२॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि ।
 उप ते ता दिशामि ॥१३॥ मनो मे रेतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भू-
 तिर्मे^{१६} तन्मे त्वयि तन्मे मोऽपहृथा इति चन्द्रमसमवोचत् ॥१४॥ तं
 तथैवाऽऽगतं चन्द्रमाः मतिनन्दलयं ते भगवो लोकः । सह नावयं
 लोक इति ॥१५॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१६॥
 किं नु ते मयीति । मनो^{१७} मे रेतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भूतिर्मे^{१८} । तन्मे
 त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै चन्द्रमाः पुनर्ददति ॥१७॥
 तमाह प्र मा ब्रहेति ॥१८॥ ११२७॥

पञ्चमेऽनुषाके ऽष्टमः खण्डः ।

किमभीति । ब्रह्मणो लोकमिति । तमादित्यमाभिप्रवहति ॥१॥

स आदित्यमाह प्र मा ब्रहेति । किमभीति । ब्रह्मणो लोकमिति ।

११ चन्द्र- १२ वा । १३-आस । १४ नास्ति, अमृतस्य पयसा
देवोऽसि समहम् । १५-ति । १६ मे, म । १७ किं नु ॥

१ मघमो । २ ग्राह- ।

तं चन्द्रमसमभिप्रवहति । स एवमो देवो अनुसंचरति ॥२॥
 एषोऽन्तोऽतः परः प्रदाहो नास्ति । यानु काँश्चाऽतः प्राचो लोका-
 नभ्यवादिष्यं ते सर्वं आप्ता भवन्ति ते जिनास्रोप्यस्य सर्वेषु काम-
 चारो भवति य एनं वेद ॥३॥ स यदि कामयेन पुनरिहाऽऽजाये-
 येति यस्मिन् कुलेऽभिध्यायेद्यदि ब्राह्मणकुले यदि राजकुले
 तस्मिन्नाजायते । स एतमेव लोकम्पुनः प्रजानमभ्यारोहयेति ॥४॥
 तद्गु होवाच शात्र्यायनिर्गुह्य्याद्वितो वा अयम्बहुशो लोकः । एतस्य
 वै कामाय नुं व्रुवते [वा] श्राम्यन्ति वा क एतत्प्रास्य पुनरिहेया-
 दत्रैव स्यादिति ॥५॥१२८॥

पञ्चमेऽनुवाकौ नयम खगडः । पञ्चमोऽनुवाकरसमाप्तः ।

उचैदश्रवा इ कौपयेयः वीरव्यो राजाऽऽस । तस्य ह केशी
 दार्भ्यः पात्रालो राजा स्वसीय आस । तौ हाऽन्योन्यस्य मिया-
 वासतुः ॥१॥ स होचैदश्रवाः कौपयेयोऽस्माह्लोकात् प्रेयाय ।
 तस्मिन् इ प्रेते केशी दार्भ्योऽरण्ये मृगयां च वाराऽऽप्रिगं रिनिनी-

३-अन्ति, । ४ 'एवात्समभिप्रवहति । > मा वहेऽति । किममीऽति ।
 प्रज्ञा लोकाभिति ... देवते अनु संचरति' अधिक है । ५ अस्मि ।
 ६-दिष्ट । ७ हेतु । ८ 'वा' अधिक है । ९ श्रुवते । १० 'वा' अधिक है ।
 १-पेथ्-। २ कौय-। ३ केशी, केश्य । ४ स्वर्मा-। ५ 'गा' लाज रङ्ग
 में कदा हुआ अधिक है ।

पवाणः ॥२॥ स ह तयैव पल्यमानो मृगान् प्रसरन्^३ तरेणे-
 वोच्चैश्च^४ वसं कौपेयपनधिजगाम ॥३॥ तं होवाच दृप्यामि स्त्रीः-
 ज्ञानामीति । न दृप्यसीति होवाच जानासि । स एवास्मि यस्मा
 मन्यस इति ॥४॥ अथ यद्गव आहुरिति होवाच य आविर्भव-
 त्यन्येऽस्य लोकमुपयन्तीत्यथ कथमशको म आविर्भवितुमिति ॥५॥
 ओमिति होवाच यदा वै तस्य लोकस्य गोप्तारमविदेऽतस्त आवि-
 रभूवमपि^५ चास्य विनेष्याम्यनु चैनं शासिष्यामीति ॥६॥ तथा
 भगव इति होवाच । तं वै नुत्वा परिष्वजा इति । तं ह स्म
 परिष्वजमानो यथा धूमं वापीयाद्वायुं वाकाशं वाग्न्यर्चि वाऽपोवैवं
 ह स्मैनं व्येति । न ह स्मेनम्परिष्वङ्गायोपलभते ॥७॥ १२-६॥

पष्ठेऽनुपाके प्रथमः सपठः ।

स होवाच^१ यद्दे ते पुरा रूपमासीत्तत्ते रूपम् । न तु त्वा परि-
 ष्वङ्गायोपनभं^२ इति ॥ ॥ ओमिति होवाच ब्राह्मणो वै मे साप
 विद्वान् साम्नोहायन् । स मे शरीरेण साम्ना शरीराण्यधूनोव ।
 चक्षस्य वै किञ्च साम विद्वान् साम्नोहायति देवतानामेव मनोक्ता
 गमयतीति ॥७॥ पतङ्गः प्राजापत्य इति होवाच प्रजापतेः प्रियः

६ प्रस्मर- । ७ ऽच्चैश्च-ऽच्चैश्च- । ८ य । ९ अत । १० वा ।
 ११ हे । १२ धं ॥

१ स्व । २ ने । ३-गोयो । ४ इर लभते । ५-पारय्य ।

पुत्र भ्रास । स तस्मा एतत् सामाद्वीत् । तेन स ऋषीणामुद-
 गायत् । त एत ऋषयो धूतशरीरा इति ॥३॥ एतेनो एव
 साम्नेति होवाच प्रजापतिर्देवानामुदगायत् । त एत उपरि देवा
 धूतशरीरा इति । ४॥ तस्मिन् हेममनुशशास । तं हानुशिष्यो-
 षाच यस्मैवैतत् साम विधात स स्मैव त उद्रायत्विति ॥५॥ स
 हानुशिष्टं आजगाम । स ह स्म कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणानुपपृ-
 ष्यमानश्चरति ॥६॥३॥३०॥

पष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

व्यूढच्छन्दसा वै द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि । स यो
 वस्तत्साम वेदं यदहं वेद स एव म उद्रास्यति । धीर्मांसध्वमिति
 ॥१॥ तस्मै ह धीर्मांसमानानामैकश्चन [न] सम्प्रत्यभिदधाति
 ॥२॥ स ह तथैव यक्ष्यमानश्शमशाने वा वने वाऽऽवृत्तीशया-
 नमुपाधावयाचकार । तं ह चाकमानः प्रजहौ ॥३॥ तं हो-
 वाचं कोऽसीति । ब्राह्मणोऽस्मि मावृदो भ्राह्म इति ॥४॥ स किं
 वेत्येति । सामेति ॥५॥ शोमिति होवाच । व्यूढच्छन्दसा वै
 द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि । स यदि तत्साम वेत्य यदहं वेद त्व-

६ धा । ७ तं । ८ वे । ९-ए । १०-याने- ।

१-सम- । २-यदि । ३-शम । ४-घेत्य । ५-शमश्चनाम् । ६-याच,सार्ध । ७-न ।
 ८-इष,इष । ९-पृष्टायान,जायान । १०-सम्- । ११-‘यदहं घेत्य’ अधिषः है ।

मेव म उद्गास्यासि । मीमांसस्वेति ॥६॥ तस्मै ह मीमांसमानस्त-
 देव^{११} सम्प्रत्यभिदधौ ॥७॥ तं होवाचाऽथमन उद्गास्यतीति^{१६} ॥८॥
 तस्मै ह कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणा असूयन्त आहुरेषु ह वा अयं^{१५}
 कुल्येषु सत्सूद्गास्याति^{१८} । कस्मा अयमलमिति ॥ ६ ॥ अलम् नै^{१९}
 मलमिति हस्माऽह । सैवाऽलम्मस्याऽलम् मतायैद्वतस्य हाऽल-
 मवोऽजगौ । तस्मादान्म्यैलाजोद्गातेत्याख्यापयन्ति ॥१०॥११॥१२॥

पष्ठेऽनुवाके तृतीय खण्डः ।

तद् सात्यकीर्ता आहुर्या वयं देवतामुपारमह एकमेव वयं तस्यै
 देवतायै रूपं गव्यादिशाम एकं वाहन एकं हस्तिन्येकम्पुरुष एकं
 सर्वेषु भूतेषु । तस्या एवेदं देवतायै सर्वं रूपमिति ॥१॥ तदेतदेकमेव
 रूपम्नाण एव । यावद्धचेव प्राणेन प्राणिति तावद्रूपम्भवति तद्-
 रूपम्भवति ॥२॥ तद्य यदा प्राण उत्क्रामति दावेवेव भूतोऽनर्थ्यः
 परिशिष्यते न किञ्चन रूपम् ॥३॥ तस्यान्तरात्मा तपः । तस्मा-
 त्तप्यमानस्योऽप्यतरः प्राणो भवति ॥४॥ तपसोऽन्तरात्माग्निः ।
 स निरुक्तः । तस्मात्स दहति ॥५॥ अथाग्निदेवतम् । इयमेवैषा

१२-ति से ठीक किया हुआ १३ 'त' अधिक है । १४ नास्ति 'इति' ।
 १५-पान्च- १६ घासू- १७ कुल्येषु । १८ ऽगास- १९ अयंम । २० न्यै
 इसके भागे 'म' जाज रंग में कटा हुआ है । २१ 'म' अधिक है । २२ एयो ॥

१ पद । २ एयो । ३-प । ४-पः । ५ दति । ६-देव- ७-प- ८-प-

देवता योऽयम्पवते^७ । तस्मिन्नेतमिन्द्रापोऽन्तः । तदग्रम् । सो-
 ऽरुन्त उपासितव्यः । यद्रास्मिन्नापोऽन्तस्तेनाऽरुन्तः ॥६॥ तस्या-
 न्तरात्मा तपस् । तस्मादेष आतपत्युष्णतरः पवते ॥७॥ तपसो-
 ऽन्तरात्मा विद्युत् । स निरक्तः । तस्मात्सोऽपि दहति ॥८॥ तानि
 वा एतानि चत्वारि साम प्राणो वाइमनस्स्वरः । स एष प्राणो
 वाचा करोति मनो नेत्रः । तस्य स्वर एव प्रजाः । प्रजावान्
 भवति य एवं वेद ॥९॥३।३२॥

पष्ठेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

स यो वायुः प्राण एव सः । योऽग्निर्वागेव सा । यश्चन्द्रमा
 मन एव तद् । य आदित्यस्स्वर एव सः । तस्मादेतमादित्यमाहु-
 स्स्वर एतीनि ॥१॥ स यो ह वा अमूर्देवता उपास्ते या अमूराधि-
 देवतं दूरुपा^२ वा एता दुरनुसम्भाप्या^३ इव । कस्तद्रेद्येता अनु
 या सम्भाप्नुयाद्य वा ॥२॥ अथ य एना अध्यात्ममुपास्ते स हा-
 ऽन्तिदेवो भवति । निर्जीर्यन्तीष^४ वा इत एता । [५] अस्य वा
 एतादशरीरस्य सह प्राणेन निर्जीर्यन्ति । क उ एव तद्वेद यद्येता
 अनु वा सम्भाप्नुयान् ॥३॥ अथ य एना उभयीरेकधा भव-

'तानि वासितव्या (१) यद्रास्मिन्नापोऽन्तम्—तस्मात्सोऽपि
 दहति' इत्यादा आया हे ॥

१ यदा । २-दूरु । ३-आया । ४ वा । ५ छ । ६ उभेयीर् ।

न्तीवेद स एवानुष्ठया साम वेद स आग्नेः ॥५॥
 तदाहुः नदिशमात्राद्वा इत एता रश्मि र्गति । ॥६॥ १०-
 स्स्वर्य^{१०} उपर्युपरि वर्तन इति ॥३॥ अथ इह प्राणुश्चतुर्गुणान्ता इत
 एता एरुम्भवन्तीति । अतो ह्येवायन्त्वा^{१०}रस्वर्य^{१०} उपर्युपरि
 वर्तत इति ॥६॥ स एष ब्राह्मण आवर्त^{११} । स य एनेतन्मण्ड^{११}ण
 आवर्त वेदाऽभ्येनम्रजाः पशव आवर्तन्ते सर्वमायुगेति ॥७॥ स
 यो हैवं विद्वान्प्राणेन प्राण्याऽपानेनाऽपान्य मनसेता उभयोर्दे-
 घता आत्मन्येत्य मुख आधत्ते तस्य सर्वमाहम्भवति सर्वं जितम् ।
 न हास्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एव वेद ॥८॥१३३॥

पष्ठेऽनुवाके पञ्चम खण्ड ।

तदेतन्मिथुन यद्वाक्च प्राणश्च । मिथुनश्चक्षुषामे । आचतुर
 वाव^१ मिथुनम्प्रजननम् ॥१॥ तद्यत्राऽऽ आह सोमः पवंत इति
 वोपावर्तध्वामिति वा तत्सहैव वाचा ममसा प्राणेन न्यरेण हिङ्-
 कुर्वन्ति । तद् हिङ्कारेण^२ मिथुन क्रियते ॥२॥ सहैव वाचा मनसा
 प्राणेन स्वरेण निधनमुपयन्ति । तन्नियनेन मिथुन क्रियते ॥३॥
 तत्सप्तविधं साम्नः^३ । सप्तकृत्य उद्राताऽऽत्मान च यजमान च
 शरीरात्मजनयति ॥४॥ यादृशस्यो ह वै रेतो भवति तादृश

सम्भवति यदि वै पुरुषस्य पुत्रप एव यदि गौर्गौरैव यद्यश्वस्याश्व
 एव यदि मृगस्य मृगएव । यस्यैव रेतो भवति तदैव सम्भवति ॥५॥
 तद्यथा ह वै सुवर्णी हिरण्यमग्नौ प्रास्यमानं कल्याणतरं कल्याण-
 तरम्भवति एवमेव कल्याणतरेण कल्याणतरेणात्मना सम्भवति
 य एव वेद ॥६॥ तदेतदद्याभ्यनूच्यते ॥७॥ ३।३४॥

पठेऽनुवाके षष्ठं सप्तमं ।

पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा
 विपश्चितः । समुद्रे अन्तः कवयो विचक्षते मरीची-
 नाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ॥१॥ पतङ्गमक्तमिति । प्राणो
 वै पतङ्गः । पतञ्चिव ह्येष्वङ्गेष्यति रथमुदीक्षते । पतङ्ग इत्याचक्षते
 ॥२॥ असुरस्य माययेति । मनो वा असुरम् । तदश्वसुपु रमते ।
 तस्यैव माययाक्तः ॥३॥ हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चित इति ।
 हृदैव ह्येते पश्यन्ति यन्मनसा विपश्चितः ॥४॥ समुद्रे अन्तः कवयो
 विचक्षते इति । पुरपो वै समुद्र एव विद् उ कवयः । त इमाम्पु-
 रूपेऽन्तर्वाचं विचक्षते ॥५॥ मरीचीनाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ।
 मरीच्य इव वा एता देवता यदाग्निर्वायुरादिसश्चन्द्रमाः ॥६॥ न ह

वा एतासां देवतानाम्प्रदममि । पदेनो ह वै पुनर्भृत्युरन्वेति ॥७॥
 तदेतदनन्वितं साम पुनर्भृत्युना । अति पुनर्भृत्युं तरति य एवं
 वेद ॥८॥९॥१०॥

पद्येऽनुवाके सतमः खण्डः ।

पतङ्गो वाचम्मनसा विभर्ति तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः ।
 तां द्योतमानां स्वयम्मनीषामृतस्य पदे कवयो निपान्ति
 इति ॥१॥ पतङ्गो वाचम्मनसा विभर्तीति । माणो वै पतङ्गः । स
 इमां वाचम्मनसा विभर्ति ॥२॥ तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तरिति ।
 माणो वै गन्धर्वः पुरुष उ गर्भः । स इमाम्पुरुषेऽन्तर्वाचं वदति ॥३॥
 तां द्योतमानां स्वयम्मनीषामिति । स्वर्षा ह्येषा मनीषा यद्वाक् ॥४॥
 अृतस्य पदे कवयो निपान्तीति । मनो वा अृतमेवंविद् उ कवयः ।
 भोमित्येतदेवाक्षरमृतम् । तेन यद्वचस्मीमांसन्ते यद्यजुर्पत्साम
 तदेनां निपान्ति ॥५॥६॥७॥

पद्येऽनुवाकेऽष्टमः खण्डः ।

८ धे ।

१-ओ । २-आ । ३ वदति । ४ अन्त-न ५-अ । ६ 'यत्साम'
 के प्रागे 'भोमित्ये-अतम्' हे ॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तरम् ।

स सध्रीचीस्म विपूचीर्वसान आ वरीवर्त्ति भुवनेष्वन्तर इति ॥१॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानामिति । प्राणो वै गोपाः । स हीदं सर्वम-
निपद्यमानो गोपायति ॥२॥ आ च परा च पथिभिश्चरन्तमिति ।

तद्ये च ह वा इमे प्राणा अमी च रश्मय एतैर्ह वा एष एतदा च
परा च पथिभिश्चरति ॥३॥ स सध्रीचीस्स विपूचीर्वसान इति ।

सध्रीचीश्च ह्येष एतद्विपूचीश्च प्रजा वसते ॥४॥ आ वरीवर्त्ति भुवने-
श्वन्तरिति । एष ह्येवैषु भुवनेश्वन्तरावरीवर्त्ति ॥५॥ स एष इन्द्र

उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति नैवोद्गातुश्चोपगातृणां
च विज्ञायते । इत एकोर्धस्स्वरुदेति । स उपरि मूर्ध्नां लेलायति ॥६॥

स विद्यादागमादिन्द्रो नेह कश्चन पाप्मा न्यद्गः परिशेच्यत इति ।
तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यद्गः परिशिष्यते ॥७॥ तदेतद्-

भ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स
यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव [न] कंचन भ्रातृव्य-

म्पश्यते य एतदेवं वेशयो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥८॥१३७॥
पष्ठेऽनुशाके नवम खण्ड । पष्ठोऽनुवाकस्तमात ॥

१-वीच्-इस पाद के प्रारम्भ में 'धर्ति' ऐसा अधिक है । २ सस्ते ।
३-तृष्ण- । ४-व्य । ५ आगाद् । ६ परिये- । ७ एत । ८ अ-॥

प्रजापतिम्ब्रह्माऽऽजत । तमपश्यममुखम^१ऽजत ॥१॥ तमप्र-
 पश्यम^२मुखं शयानम्ब्रह्माऽऽविशत् । पुरुष्यं^३ तत् । प्राणौ वै ब्रह्म ।
 प्राणौ वावैनं तद्वाविशत् ॥२॥ स उदतिष्ठत् प्रजानां जनयिता ।
 तं रक्षांस्यन्वसचन्त^४ ॥३॥ तमेतदेव साम गायन्नत्रायत् । यद्रायन्न-^५
 त्रायत् तद्रायत्रस्य गायत्रत्वम् ॥४॥ त्रायत् एनं सर्वस्मात्पाप्मनो
 मुच्यते य एवं वेद ॥५॥ तमुपाऽस्मै गायता नर इत्यृचाऽऽश्रव-
 णीयेनोपागायन्^६ ॥६॥ यदुपाऽस्मै गायता नर इति तेन गायत्रम-
 भवत् । तस्मादेपैव प्रतिपत्कार्या ॥७॥ पवमानायेन्दावा अभि
 देवमिया-हुम्-भान्नाता इति षोडशाक्षराण्यभ्यगायन्त^७ । षोडशकलं^८
 वै ब्रह्म । कलाश एवैनं तद्ब्रह्माऽऽविशत् ॥८॥ तदेतच्चतुर्विंशत्यक्षरं
 गायत्रम् । अष्टाक्षरः प्रस्तावः^९ । षोडशाक्षरं गीतं तच्चतुर्विंशतिस्स-
 म्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्यर्धमासस्संवत्सरः^{१०} । संवत्सरस्साम ॥९॥ तां
 ऋचश्शरीरेण मृत्युरन्वैतत् । तद्यच्छरीरिवत्तन्मृत्योराप्तम् । अथ यद्-
 शरीरं तदमृतम् । तस्याऽऽशरीरेण साम्ना शरीराण्यधूनोत् ॥१०॥
 ३।३८॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्ड ।

१ मुख- २ अप्रव- ३-य । ४-मास्य । ५ अनुसत्- ६ गा-
 यत्रेण । ७ अथसीय- ८ षष्ठा- ९-ताम् । ११ प्रास्त- १२ तम् ।
 १३-यत् । १४-सात् ॥

ओवा३चोवा३चोवा३च् हुम्भा ओया इति षोडशक्षरा-
 ण्यभ्यगायत । षोडशकलौ वै पुरुषः । कलाश एवास्य तच्छरी-
 राण्यधूनोत् ॥१॥ स एषोऽपहतपाप्मा घृतशरीरः । तदेविक्रया-
 दितियुदासंगायसो इत्युदास । आ इति आवृथात् । वागिति
 तद्ग्रन्थ । तदिदन्तरित्तं सोऽयं वायुः पवते । हुमिति चन्द्रमाः ।
 भा इत्यादिसः ॥२॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भातीसाच-
 क्षते ॥३॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भ्रमिसाचक्षते ॥४॥
 एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोः कुभ्रमिसाचक्षते ॥५॥ एतस्य
 ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्दुभ्रमिसाचक्षते ॥६॥ एतस्य ह वा
 इदमक्षरस्य क्रतोर्वृषभ इसाचक्षते ॥७॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य
 क्रतोर्दुर्भ इसाचक्षते ॥८॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्यो
 मातीसाचक्षते ॥९॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोस्सम्भवती-
 साचक्षते ॥१०॥ तद्यत्किं च भा३ इति च भा३ इति च तदेत-
 न्मियुनं गायत्रम् । य मियुनेन जायते य एवं वेद ॥११॥
 ३।३-६॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

१-आ । २ कृत्- ३ सूर्यत्र पेसा पाठ । ४-ह्र । ५ वृष्ट-
 ६ द्भ, सम्भवती । ७ य भेती । ८ भ् ॥

तदेतद्मृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन
 देवा एतेनर्षयः ॥१॥ तदेतद्ब्रह्म प्रजापतयेऽब्रवीत् प्रजापतिः
 परमेष्ठिने प्राजापत्याय परमेष्ठी प्राजापत्यो देवाय सवित्रे देवस्सविता-
 ऽमयेऽग्निरिन्द्रायेन्द्रः काश्यपाय काश्यप ऋश्यशृङ्गाय काश्यपाय
 ऋश्यशृङ्गः काश्यपो देवतरसे श्यावसायनाय काश्यपाय देवतराश्या-
 वसायनः काश्यपश्शुषाय वाहेयाय काश्यपाय श्रुषो वाहेयः का-
 श्यप इन्द्रोताय देवापाय शौनकायेन्द्रोतो देवापश्शौनको इत्य
 ऐन्द्रोतये शौनकाय इतिरेन्द्रोतिश्शौनकः पुलुपाय प्राचीनयोग्याय
 पुलुपः प्राचीनयोग्यस्सत्यज्ञाय पौलुपये प्राचीनयोग्याय सत्य-
 यज्ञः पौलुपिः प्राचीनयोग्यस्सोमशुष्माय सात्यज्ञाय प्राचीन-
 योग्याय सोमशुष्मस्सात्ययज्ञिः प्राचीनयोग्यो हृत्स्वाशयायाऽऽल-
 केयाय माहावृषाय राज्ञे हृत्स्वाशय आल्लकेयो माहावृषो राजा
 जनश्रुताय काण्डिव्याय जनश्रुतः काण्डिव्यस्सायकाय जानश्रुते-
 याय काण्डिव्याय सायको जानश्रुतेयः काण्डिव्यो नगरियो
 जानश्रुतेयाय काण्डिव्याय नगरी जानश्रुतेयः काण्डिव्यश्शङ्गाय^{१०}

१. 'काश्यपो' अधिक है । २ द्यावसाय । ३ भूयो, धूपो ।
 ४, पाप्ने । ५ इन्द्रात्- । ६-पिश् । ७ लोक्- । ८ स् स सात्यायज्ञिः
 प्राचीनयोग्यो हृत्स्वा' अधिक है । ९ जानुश्-, जानदश्- ।
 १० शिण- ।

शात्र्यायनय^{११} आत्रेयाय शद्रशात्र्यायनिरात्रेयो रामाय कातुजाते-
याय वैयाग्रपद्याय रामः कातुजतियो वैयाग्रपद्यः—॥२॥३॥४०॥

सप्तमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

—शङ्गाय वाभ्रव्याय शङ्गे वाभ्रव्यो दत्ताय कात्यायनय^१
आत्रेयाय दत्तः कात्यायनिरात्रेयः कैसाय वारक्ये कैसो वारकिः
भोष्टपादाय वारक्याय भोष्टपादो वारक्यः^२ कैसाय वारक्याय^३
कैसो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यः कुवेराय
वारक्याय कुवेरो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो
जनश्रुताय वारक्याय जनश्रुतो वारक्यस्मुदत्ताय^४ पाराशर्याय
मुदत्तः पाराशर्योऽपाशर्योत्तराय^५ पाराशर्यायाऽपाश^६ उत्तरः पारा-
शर्यो विपश्चिते शकुनिमित्राय पाराशर्याय विपश्चित्शकुनिमित्रः
पाराशर्यो जयन्ताय पाराशर्याय जयन्तः पाराशर्यः—॥१॥३॥४१॥

सप्तमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

—श्यामजयन्ताय लौहित्याय श्यामजयन्तो लौहित्यः पद्मि-
गुप्ताय लौहित्याय पद्मिगुप्तो लौहित्यस्ससश्रवसे लौहित्याय^१ सस-

११-नाब ।

१-जाय, कात्यायनय-। २ चर-। ३ पू-। ४ सुदत्ता, सुदत्ताय ।

५ अय् (।), आश-॥

१ लोह-।

श्रवा लौहित्यः कृष्णधृतये सारकये कृष्णधृतस्सासाकश्याम-
 मुजयन्ताय लौहिषाय श्याममुजयन्तो लौहित्यः कृष्णदत्ताय
 लौहिषाय कृष्णदत्तो लौहित्यो मित्रभृतये लौहित्याय मित्रभृति^२
 लौहित्यश्यामजयन्ताय लौहिषाय श्यामजयन्तो लौहित्यस्त्रि-
 वेदाय कृष्णराताय लौहिषाय त्रिवेदः कृष्णरातो लौहित्यो
 यशस्विने जयन्ताय लौहित्याय^३ यशस्वीजयन्तो लौहित्यो जयकाय
 लौहित्याय जयको लौहित्यः कृष्णराताय लौहित्याय कृष्णरातो
 लौहित्यो दत्तजयन्ताय लौहित्याय दत्तजयन्तो लौहित्यो
 विपश्चिते दृढजयन्ताय लौहित्याय^४ विपश्चिद्दृढजयन्तो लौहित्यो
 वैपश्चिताय^५ दार्ढजयन्तये दृढजयन्ताय लौहित्याय वैपश्चितो दार्ढ-
 जयन्तिर्दृढजयन्तो लौहित्यो वैपश्चिताय दार्ढजयन्तये गुप्ताय
 लौहित्याय ॥१॥ तदेतदभृतं गायत्रमथ यान्यन्यानि गीतानि
 काम्यान्येव तानि काम्यान्येव तानि ॥२॥३॥४॥१॥

सप्तमोऽनुवाके पञ्चम खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्तमाप्तः ॥

२-ति । ३ 'श्यामजयन्तो लौहित्याय' अधिक हे । ४ वैविष्- ।

[चतुर्थोऽध्यायः]

श्वेताश्वो दशतो हरिनीलोऽसि हरितस्पृशस्समानबुद्धो मा
 हिंसीः । न मां त्वं वेत्य प्रद्रव ॥१॥ यदभ्यवचरणो^१ऽभ्यवैपि
 स्वपन्तम्पुरुपमकोविदमश्रमयेन^२ वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥२॥
 यदभ्यवचरणो^३ऽभ्यवैपि स्वपन्तम्पुरुपमको विदमयस्मयेन वर्मणा
 वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥३॥ यदभ्यवचरणो^३ऽभ्यवैपि स्वपन्तम्पु-
 रुपमकोविदं लोहमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥४॥
 यदभ्यवचरणो^३ऽभ्यवैपि स्वपन्तम्पुरुपमकोविदं रजतमयेन वर्मणा
 वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥५॥ यदभ्यवचरणो^३ऽभ्यवैपि स्वपन्तम्पु-
 पमकोविदं सुवर्णमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥६॥

आयुर्माता^५ मतिः पिता नमस्त आविशोपण ।

ग्रहो नामाऽसि विश्वायुन्तस्मै ते विश्वाहा^६ नमो

नमस्ताम्राय नमो वरुणाय नमो जिघांसते ॥७॥ यच्चम राजन्मा मां
 हिंसीः । राजन् यच्चम मा हिंसीः । तयोस्तंविदानयोस्तसर्वभापुर-
 यान्यहम् ॥८॥४१॥

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्त ।

१-णा । २ इति मन्ममयत । ३ अयापय । ४ सिद्धेप है ।
 ५ मातन । ६-वाहाय । ७ रुणाय । ८ अं ॥

पुरुषो वै यज्ञः ॥१॥ तस्य यानि चतुर्विंशतिवर्षाणि तत्प्रात-
 स्सवनम् । चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री । गायत्र्यम्प्रातस्सवनम् ॥२॥
 तद्रसूनाम् । प्राणा^२ वै वसवः । प्राणा हीदं सर्वं वसवाददते ॥३॥
 स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपद्गुपद्रवेत्स ह्य्यात्प्राणा^१ वसव इदम्मे-
 प्रातस्सवन माध्यन्दिनेन सवनेनानुसंतनुतेति । अगदो हैव
 भवति ॥४॥ अथ यानि चतुश्चत्वारिंशत् वर्षाणि^४ तन्माध्यन्दिनेन
 सवनम् । चतुश्चत्वारिंशदक्षरा त्रिष्टुप् । त्रैष्टुभं माध्यन्दिनं
 सवनम् ॥५॥ तद्गुद्राणाम् । प्राणा वै रुद्राः । प्राणा हीदं सर्वं
 रोदयन्ति ॥६॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपद्गुपद्रवेत् स
 ह्य्यात्प्राणा रुद्रा इदम्मे माध्यन्दिन सवनं तृतीयसवनेनानुसंत-
 नुतेति । अगदो हैव भवति ॥७॥ अथ यान्याष्टचत्वारिंशत्
 वर्षाणि तत् तृतीयसवनम् । अष्टचत्वारिंशदक्षरा जगती । जागत
 तृतीयसवनम् ॥८॥ तदादिखानाम् । प्राणा वा आदित्याः ।
 प्राणा हीदं सर्वमाददते ॥९॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपद्गु-
 पद्रवेत्स ह्य्यात्प्राणा आदित्या इदम्मे तृतीयसवनमायुषानु-
 सतनुतेति । अगदो हैव भवति ॥१०॥ एतद् तद्विद्वान् ब्राह्मण

उवाच महिदास ऐतरेय उपतपति किमिदमुपतपसि योऽहमनेनो-
पतपता न प्रेष्यामीति । स ह षोडशशतं वर्षाणि जिजीव । प्र ह
षोडशशतं वर्षाणि जीवति नैनस्मात्साम्यायुषो जहाति य एवं
वेद ॥११॥४॥२॥

द्वितीयोऽनुवाकस्तमात् ।

त्र्यायुषं कश्यपस्य जमदग्नेस्त्र्यायुषम् ।

त्रीरयमृतस्य पुष्पाणि त्रीरयायूंषि मेऽकृणोः ॥१॥

स नो मयोभूः पितवाविशस्व शान्तिको यस्तनुवे स्योनः ॥२॥

येऽमयः पुरीष्याः प्रिविष्टाः पृथिवीमनु ।

तेषां त्वमस्युत्तमः प्र णो जीवातवे सुव ॥३॥४॥३॥

तृतीयोऽनुवाकस्तमात् ।

अरण्यस्य वत्सोऽसि विश्वनामा विश्वाभिरक्षणाऽपाम्पक्वो-

ऽसि वरुणस्य दृतोऽन्तर्धिनाम ॥१॥ यथा त्वममृतोर्मर्त्येभ्योऽन्तर्हितो-

ऽस्येवं त्वमस्मानवायुभ्योऽन्तर्धेहि । अन्तर्धिरसि स्तेनेभ्यः ॥२॥४॥४॥

चतुर्थोऽनुवाकस्तमात् ।

१ सम्य ॥

२ त्रियायु । ३ त्रीण्यु । ४ आयुषि । ५ त । ६ चतुष्का ।

७ य । ८-धो । ९ प्रा ।

१ विश्वोन्-धे । २-क्षमा । ३ ऽन्तर्धिनाम । ४ त । ५ मर्त्येभ्यो ॥

व्युपि सविता भवस्युदेप्यन् विष्णुरुद्यन्पुरुप उदितो बृहस्पति-
 रभिप्रयन्मयवेन्द्रो वैकुण्ठो माध्यान्दिने भगोऽपराह्ण^२ उग्रो देवो लो-
 हितायन्नस्तमिते यमो भवसि ॥१॥ अश्वसु सोमो राजा निशाया-
 म्पितृराजस्त्वमे मनुष्यान्प्रविशसि पयसा पशून् ॥२॥ विरात्रे
 भवो भवस्यपररात्रेऽङ्गिरा आग्निहोत्रवेलायाम्भृगुः ॥३॥ तस्य तदे-^४
 तदेव मण्डलमूधः । तस्यैतौ स्तनौ यद्वाक् च प्राणश्च । ताभ्या-
 म्भेदुच्चाऽध्यायन्ब्रह्मर्चयन्मजाम्पशून् स्वर्गं लोकं सजातवन-
 स्यात् ॥४॥ एता आशिष आशासे । भूर्भुवस्त्वः । उदिते शुक्रमा-
 दिश^५ । तदात्मन्दधे ॥५॥४५॥

पञ्चमोऽनुवाकस्तमास ।

भगेरयो हैच्चाको राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाण आस ॥१॥
 तद्दु ह कुरपश्चालानाम्ब्राह्मणा ऊचुर्भगेरयो ह वा अयमैच्चाको
 राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाणः^१ । एतेन कथां वदिष्याम इति ॥२॥
 तं हाऽभ्येयुः । तेभ्यो हाऽभ्यागतेभ्योऽपचितीश्चकार ॥३॥ अथ
 हैपां स भाग आवव्राजोप्त्वा^४ केशश्मश्रूणि नखान्निष्कृत्याऽऽज्ये-

१-भो । २ पराहोण । ३-ज । ४ त । ५-य । ६ आसिप ।
 ७ आदिप ॥

१-पाञ्च- २ यक्ष्म- ३ एततेन । ४ 'मा' अक्षिफ है ।
 ५ उपत्वा

नाऽभ्यज्य दण्डोपानहम्बिभ्रव ॥४॥ तान् होवाच ब्राह्मणा
 भगवन्तेः कतमो वस्तद्वेद यथाऽऽश्रावितमत्याश्राविते देवान् गच्छत
 इति ॥५॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यद्विदुपस्सूद्राता मुहोता
 स्वध्वर्युस्सुमानुपविदाजायत इति ॥६॥ अथ होवाच कतमो
 वस्तद्वेद यच्छन्दांसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि संस्तुतान्यभि-
 सम्पद्यन्त इति ॥७॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यथा गायत्र्या
 उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपि गच्छत इति ॥८॥ अथ होवाच कतमो
 वस्तद्वेद यथा दक्षिणाः प्रतिपृहीता न हिंसन्तीति ॥९॥४६॥

पष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतान् हेनान् पञ्च प्रश्नान् पमच्छ ॥१॥ तेषां ह कुरूपञ्चा-
 लानाम्बको दासभ्योऽनूचान आस ॥२॥ स होवाच यथाऽऽश्रा-
 वितमस्याश्राविते देवान् गच्छत इति प्राच्यां वै राजन् दिश्या-
 श्रावितमसाश्राविते देवान् गच्छतः । तस्मात्प्रादतिष्ठन्नाश्रावयति
 प्राद् तिष्ठन्मत्याश्रावयतीति ॥३॥ अथ होवाच यद्विदुपस्सूद्राता
 मुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुपविदाजायत इति यो वै मनुष्यस्य
 सम्भूतिं वेदेति होवाच तस्य सूद्राता मुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुपवि-

४ ज्या ॥

१-पाञ्च- २ अस्म- ३ एत- ४ प्रेक्ष- ।

दाजायत इति प्राणा उ ह वाव राजन् मनुष्यस्य सम्भूतिरेवेति
 ॥४॥ अथ होवाच यच्छ्रुन्दांसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि
 संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति गायत्रीमु ह वाव राजन् सर्वाणि
 छ्रुन्दांसि संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति ॥५॥ अथ होवाच यथा
 गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति वपदकारेणो ह
 वाव राजन् गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥६॥
 अथ होवाच यथा दक्षिणाः प्रतिशृङ्गीता न हिंसन्तीति-॥७॥४॥७॥

पष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

—यो वै गायत्र्यै मुखं वेदेति होवाच तं दक्षिणा प्रतिशृङ्गीता
 न हिंसन्तीति ॥१॥ अग्निर्ह वाव राजन् गायत्रीमुखम् ।
 तस्माद्यदभावंभ्यादधाति भूयानेव स तेन भवति वर्धते । एव-
 मेवैवं विद्वान्ब्राह्मणः प्रतिशृङ्खन्भूयानेव भवति वर्धत उ एवेति ॥२॥
 स होवाचाऽनूचानो वै किलाऽयम्ब्राह्मण आस । त्वामहमनेन
 यज्ञेनैषीति ॥३॥ तस्य वै ते तयोद्गास्यामीति होवाच यथै-
 कराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेप्यसीति ॥४॥ तस्मा एतेन गाय-
 त्रेणोद्गीथेनोज्जगौ । स हैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमिषाय ।

४ सम्भूतिद्घुट, सम्भूतिर्द्धर । ५ है ॥

१ धदन्-१ २-यन्द । ३ गायत्र सो ।

तेन हैतेनैकरादेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेति [य एव वेद] ॥५॥ ओं
 वा इति द्वे प्रक्षरे । ओं वा इति चतुर्थे । ओं वा इति षष्ठे ।
 हुम्भा ओं वागित्यष्टमे ॥६॥ तेन हैतेन प्रतीदर्शोऽस्य भयदस्या-
 ऽऽसमात्यस्योज्ज्वलौ ॥७॥ तं होवाच किं त आगास्यापीति । स
 होवाच हरीमे देवाश्वा वागापेति । तयेति । तौ हास्मा आजगौ ।
 तौ हैनमाजग्मतुः ॥८॥ स वा एष उद्गीथः कामानां सम्पदो
 वाश्चो वाश्चो वाश्च हुम्भा ओं वागिति । साद्गो हैव स तनुर-
 भूतस्सम्भवति य एतदेव वेदायो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥९॥४॥८॥

षष्ठोऽनुवाके तृतीय खण्ड । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्त ॥

पुरुषो वै यज्ञः पुरुषो होद्गीथः । अथैत एव मृत्यवो यद्-
 द्विर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः ॥१॥ ते ह पुरुषं जायमानमेव मृत्युपाशैर-
 भिदधाति । तस्य वाचमेवाग्निरभिदधाति प्राणं वायुश्चक्षुरादित्यश्च-
 श्रोत्रं चन्द्रमाः ॥२॥ तदाहुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्ये प्राणो-
 भ्योऽधि मृत्युपाशानुन्मुञ्चतीति ॥३॥ तद्यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति
 य एवास्य वाचि मृत्युपाशस्तमेवास्पोन्मुञ्चति ॥४॥ अथ यस्यैवं

४ सोम । ५-शे । ८ सयद् ॥

१ अवा । २ यज्ञा- ३ उमुञ्च-

विद्वानुद्गायति य एवास्य प्राणो मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥५॥
 अथ यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्य चक्षुषि मृत्युपाशस्तमे-
 वास्योन्मुञ्चति ॥६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्निधनमुपैति य एवास्य
 श्रोत्रे मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्गाता
 यजमानस्य प्राणोभ्योऽधि मृत्युपाशानुन्मुञ्चति ॥८॥ तदाहृस्त
 वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणोभ्योऽधि मृत्युपाशानुन्मुञ्चति यै-
 साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्सृष्ट्यातीति ॥९॥४१-९॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तद्यस्यैवं विद्वान्दिङ्करोति य एवास्य लोमसु मृत्युपाशस्त-
 स्मादेवैनं सृष्ट्याति ॥१॥ अथ यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति य एवास्य
 त्वचि मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं सृष्ट्याति ॥२॥ अथ यस्यैवं विद्वान्ना-
 दिमादत्ते य एवास्य मांसेषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं सृष्ट्याति ॥३॥
 अथ यस्यैवं विद्वानुद्गायति य एवास्य स्नावसु मृत्युपाशस्तस्मा-
 देवैनं सृष्ट्याति ॥४॥ अथ यस्यैवं विद्वान्प्रतिहरति य एवास्याङ्गेषु
 मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं सृष्ट्याति ॥५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवति य
 एवास्यास्यिषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं सृष्ट्याति ॥६॥ अथ यस्यैवं

४-द्वा । ५ उद्गायति । ६ प्राणे । ७ नास्ति । ८ प्रतिहरति ॥

१ ऋ- २ या ।

विद्वान् निधनमुपैति य एवास्य मज्जसु मृत्युपाशस्त तस्मादेवैनं
 स्पृणाति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्राता यजमानस्य प्राणेभ्योऽधि-
 मृत्युपाशानुन्मुच्यायैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्तस्पृणाति ॥८॥ तदा-
 हूस्त वा उद्राता यो यजमानस्य प्राणेभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुच्यायैनं
 साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्तस्पृत्वा स्वर्गे लोके सप्तधा दधातीति ॥९॥
 स वा एष इन्द्र वैमृध उद्यन् भवति सवितोदितो मित्रस्संगवकाल^१
 इन्द्रो वैकुण्ठो मध्यान्दिने समावर्तमानश्शर्व उग्रो देवो लोहितायन्
 प्रजापतिरेव संवेशोऽस्तमितः ॥१०॥ तद्यस्यैवं विद्वान् हिङ्करोति य
 एवास्योद्यतस्स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥११॥ अथ यस्यैवं
 विद्वान् प्रस्तौति य एवास्योदिते स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति
 ॥१२॥ अथ यस्यैवं विद्वानादिमादत्ते य एवास्य संगवकाले^२
 स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१३॥ अथ यस्यैवं विद्वानुद्रायति
 य एवास्य मध्यान्दिने स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१४॥ अथ
 यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्यापराह्णे स्वर्गो लोकस्तस्मिन्ने-
 वैनं दधाति ॥१५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवाति य एवास्यास्तं-
 बतस्स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्नि-

धनमुपैति य एवास्यास्तमिते स्वर्गे लोकस्तीस्मिन्नेवैनं दधाति ॥२७॥
 एवं वा एवविदुद्गता यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मु-
 च्याधैन साङ्ग सतनु सर्वमृत्योम्सृत्वा स्वर्गे लोके सप्तधा^१
 दधाति ॥१८॥४१०॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीय खण्ड । सप्तमोऽनुवाकस्तमात ॥

पइं ढं वै देवतास्स्वयम्भुषोऽभिर्बापुःसाधादित्यः प्राणोऽन्न
 वाक् ॥१॥ तांश्चैष्ट्ये^१ व्यवदन्ताऽहं श्रेष्ठाऽस्म्यह श्रेष्ठाऽस्म्य? [स्मि]
 मां श्रियमुपाध्वमिति ॥२॥ ता अन्योन्यस्यै^२ श्रेष्ठतायै नाऽतिष्ठन्त ।
 ता अद्भुवन्न वा अन्योन्यस्यै^३ श्रेष्ठतायै तिष्ठामह एतां सम्प्रवामहे
 यथा श्रेष्ठास्सम इति ॥३॥ ता अग्रिमद्भुवन्कथ त्वंश्रेष्ठोऽसीति ॥४॥
 सोऽन्नवीदहं देवानाम्मुखमस्म्यहमन्यासाम्प्रजानाम् । मयाऽऽहुतयो
 ह्यन्ते । अह देवानामन्न विकरोम्यहम्मनुष्याणाम् ॥५॥ स यन्न
 स्याममुखा एव देवास्स्युरमुखा अन्याः प्रजाः । नाऽऽहुतयो ह्येरन् ।
 न देवानामन्न विक्रियेत न मनुष्याणाम् ॥६॥ तत इद सर्वम्परा-

१ सप्त ॥

१ पइं २ ढं । ३-आ । ४-ठे । ५ स्ववद्- । ६ श्रेष्- ।
 ७ अन्या- । ८-है । ९ एत । १० त्वा । ११-कार- । १२ अ ।
 १३ ह्यन्ते (!) विप्र कर ह्यरन् (१) किया गया । १४-ए ।

भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥७॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह^{१०}
 किञ्चन परिशिष्येत यत् त्व न स्या इति ॥८॥ अथ वायुमद्रुव-
 न्कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥९॥ सोऽब्रवीदहं देवानाम्प्राणोऽस्म्यह-^{१०}
 म्न्यासाम्प्रजानाम् । यस्मादहमुत्क्रामामि ततरस प्रश्रुवते ॥१०॥
 स यदहं न स्यां तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येते-
 ति ॥११॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत्त^{१६} यत् न स्या
 इति ॥१२॥ ॥११॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथादित्यमद्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥१॥ सोऽब्रवीद-
 हमेवोद्यन्नहं भवान्पहमस्तंयन्रात्रिः । मया चक्षुषा कर्माणि कियन्ते ।
 स यदहं न स्यां नैवाहस्स्यान्न रात्रिः । न कर्माणि क्रियेरन् ॥२॥
 तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥३॥
 एवमेवेति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत् न स्या इति ॥४॥
 अथ प्राणमद्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥५॥ सोऽब्रवीत्प्राणो
 भूवाऽदिदीप्यते । प्राणो भूत्वा वायुराकाशमनुभवति । प्राणो
 भूत्वाऽऽदित्य उदेति । प्राणादन्नम्प्राणाद्वाक् ॥६॥ स यदहं न स्यां तत^५

१५-प्यं । १६ य । १७ अहदम् । १८ अह ह ॥

१ हंन । २ ए । ३ उक्त् । ४ अंक्त्-न ५ तत् (!) ।

इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥७॥ एवमेवेति
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥८॥ अथान्न-
 मब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठमसीति ॥९॥ तदब्रवीन्मयि प्रतिष्ठायाभिर्दी-
 प्यते । मयि प्रतिष्ठाय वायुगकाशमनुविभवाति । मयि प्रतिष्ठाया-
 दिस उदेति । मदेव पाणो यद्वाक ॥१०॥ स यदहं न स्यां तत
 इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥११॥ एवमेवेति
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१२॥ अथ
 वाचमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठमसीति ॥१३॥ साब्रवीन्मयैवेदं विज्ञायते
 मयाऽदः । स यदहं न स्यां नैवेदं विज्ञायेत नाऽदः ॥१४॥ तत
 इदं सर्वम्पराभवेत् नैवेह किञ्चन परिशिष्येतेति ॥१५॥ एवमेवे-
 ति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१६॥ १७॥ १८॥

अष्टमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

ता अष्टवक्षेता वै किल सर्वा देवताः । एकैकामेवानुस्यः ।
 स यन्नु नस्तर्वासां देवतानामेकाचन न स्यात्तत इदं सर्वम्परा-
 भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येत । हन्त सार्धं समेत्य यच्छ्रेष्ठं

६ सक्षेप करते है । 'स (! न के स्थान में) स्या इति' यहाँ
 तक छोड़ दिया है । ७ इ-त्य् (!) संक्षिप्त दिया है । ८-शिष्य । ९ तुर ॥

हृत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकपायन् ॥१०॥ अपहत्य मृत्यु-
मपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य एवं वेद ॥११॥४॥१३॥

अष्टमेऽनुयाके तृतीय. अष्टः ।

ता ब्रह्माऽब्रुवन्त्वपि प्रतिष्ठायैतमुद्यच्छामेति । ता ब्रह्माऽब्रवी-
दास्येन^१ प्राणेन युष्प्राना^२स्येन प्राणेन मामुपाप्रवायेति ॥१॥
ता एतेन प्राणेनौकारेण वाच्यकारमभिनिषेध्यन्त्यो^३ दिङ्काराद्रका-
रमौकारेण वाचमनुस्वरन्त्य उभाभ्याम्प्राणाभ्यां गायत्रमगायत्रो-
वाश्चोवाश्चोवाश्च् इय मा वो वा इति ॥२॥ स यथोभया-
पदी प्रतिष्ठित्येवमेव स्वर्गं लोके प्रत्यतिष्ठन् । प्रति स्वर्गं लोके
तिष्ठति य एवं वेद ॥३॥ य उ ह वा एवं विदस्माह्लोकात्मैति स
प्राण एव भूत्वा वायुमप्येति वायोरध्यध्राण्यभ्रेभ्योऽधि दृष्टिं
दृष्ट्यैवेमं लोकमनुविभवति ॥४॥ अष्टपयो ष सन्नमासां चक्रिरे ।
ते पुनः पुनर्वह्नीभिर्वह्नीभिः प्रतिपाद्विस्वर्गस्य लोकस्य द्वारं
नानुचनं शुशुधिरे ॥५॥ त उ श्रमेण तपसा व्रतचर्येणोन्द्रमवरु-
धिरे ॥६॥ तं होत्रुस्वर्गं वै लोकमैप्सिष्म । ते पुनः पुनर्वह्नीभि-
र्वह्नीभिः प्रतिपाद्विस्वर्गस्य लोकस्य द्वारं नानुचनाऽभुत्स्महि ।

१ आस्येनेन । २-प्रा,-आँन । ३-अत् । ४ ए- । ५-त्र- । ६ वेप्सिष्पु ।
७ 'वह्नीभिर्' अधिक है । ८ अभूत्- । ९ मेयन्त- ।

तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुमज्ञायाऽनार्तास्त्वस्ति
संवत्सरस्योद्वचं गत्वा स्वर्गं लोकमियामेति ॥७॥ तान् होवाच
को वस्त्वविरतम इति ॥८॥४११४॥

अष्टमेऽनुवाके चतुर्थं खण्ड ।

अहमित्त्वगस्त्यः ॥१॥ स वा एहीति होवाच तस्मै वै^१ नेऽहं
तद्द्रव्यामि^२ यदिद्राँसस्वर्गस्य लोकस्य^३ द्वारमनुमज्ञायाऽनार्तास्त्वस्ति
संवत्सरस्योद्वचं गत्वा स्वर्गं लोकमेप्यधेति ॥२॥ तस्मा एतं
गायत्रस्योद्गीथमुपनिपदममृतमुवाचाऽग्नौ वापा^४वाहित्ये प्राणेऽन्ने
वाचि ॥३॥ ततो वै ते स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुमज्ञायाऽनार्ता-
स्त्वस्ति संवत्सरस्योद्वचं गत्वा स्वर्गं लोकमायन् ॥४॥ एवमेवैवं
विद्वान् स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुमज्ञायाऽनार्तास्त्वस्ति संवत्सर-
स्योद्वचं गत्वा स्वर्गं लोकमेति ॥५॥४११५॥

अष्टमेऽनुवाके पञ्चमं खण्ड । अष्टमाऽनुवाकसमाप्त ॥

एवं वा एतं गायत्रस्योद्गीथमुपनिपदममृतमिन्द्रोऽगस्त्याथो-
वाचाऽगस्त्य इपाय दयावाश्वय इपद्रव्यावाभिर्गौपृक्तये गौपृक्ति-

१ 'अहमित्त्व' (१) अधिक है ॥

२ नास्ति । २-तामि । ३ 'द्वारमेव' अधिक है । ४ धाय ॥

१-गीत्- २-धायो ।

ज्वालायनाय^३ ज्वालायनदशाध्यायनये^४ शाध्यायनी रामाय कातु-
जानेयाय त्रैयाघ्रपत्राय रामः कातुजातेयोवैयाघ्रपद्यः-॥१॥ ११६॥

नवमेऽनुवाके प्रथम खण्ड ।

-शङ्खाय वाभ्रव्याय शङ्खो वाभ्रव्यो दक्षाय कात्यायनय^१
आत्रेयाय दक्षः कात्यायनिरात्रेयः कॅसाय वारक्याय^२ कॅसो वार-
क्यम्मुयज्ञाय शाण्डिल्याय मुयज्ञशाण्डिल्योऽग्निदत्ताय शाण्डि-
ल्यायाऽग्निदत्तशाण्डिल्यरसुयज्ञाय शाण्डिल्याय मुयज्ञशाण्डि-
ल्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो जनश्रुताय वारक्याय
जनश्रुतो वारक्यस्तु^३ दत्ताय पाराशर्याय ॥१॥ सैषां^४ शाध्यायनी
गायत्रस्योपनिषदेवमुपास्मितव्या ॥२॥ ४१७॥

नवमेऽनुवाके द्वितीय खण्ड । नवमऽनुवाकरसमाप्त ॥

केनेपिनम्यतति प्रेपितम्मनः केन प्राणः प्रथमः प्रैति युक्तः ।

केनेपितां माचामर्मां वटान्त चक्षुश्श्रोत्र क उ देरो युनक्ति ॥१॥

श्रोत्रय श्रोत्रम्नसो मनो यद् वाचो हवाचं स उ प्राणस्य प्राणः ।

चक्षुषश्चक्षुरानिमुच्य धीराः प्रेताऽस्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥२॥

३ व्या-१ ४-आये । ५ वाय्या-॥

१-आय । २ प-१ ३-ओ, ओर 'जनश्रुताय वारक्याय
जनश्रुते (!) वारक्यस्' अधिक है । ४-ओ ।

न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनः ।
 न विद्म^१ न विजानीमो^२ यथैतदनुशिष्याव^५ ॥३॥
 अन्यदेव तद् विदितादयो अविदितादधि ।
 इति शुश्रुम^५ पूर्वेपां ये मस्तद्गव्याश्चक्षिरे ॥४॥
 यद् वाचाऽनभ्युदितं वेन वागभ्युद्यते ।
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥५॥
 यन्मनसा न मनुते येनाऽऽहूर्मनौ मतम् ।
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥६॥
 यच्चक्षुपा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यति ।
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥७॥
 यच्छ्रोत्रेण न शृणोति येन श्रोत्रमिदं श्रुतम् ।
 तदेव^१ ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥८॥
 यद् प्राणेन न प्राणिति^{१०} येन प्राणः प्रणीयते ।
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥९॥ ४।१८॥

दशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

यदि मन्यसे सुवेदेति दहमेवाऽपि नूनं त्वं वेत्स्य ब्रह्मणो रूपं यदस्य
 त्वं यदस्य देवेषु । अथ नु मीमांस्यमेव ते मन्येऽविदितम् ॥ १ ॥

१ विदुः । २-अ । ३ ऽवे अधिक हे । ४-शिष्य- ५-भू-
 ६ मन्यो । ७ मतेम् । ८ तश् । ९ उक्तानुक्त है । १०-णीति ॥

नाऽहम्मन्ये मुवेदेति नो न वेदेति वेद च ।

यो नस्तद् वेद तद्वेद नो न वेदेति वेद च ॥२॥

यस्याऽमतं तस्य मतम्तं^५ यस्य न वेद सः ।

अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम् ॥३॥

प्रतिबोधविदितम्मतममृतत्वं हि विन्दते ।

आत्मना विन्दते वीर्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम् ॥४॥

इह चेद्वेदीदय सखमस्ति । न चेदिहाऽवेदीन्महतीविनष्टिः ।

भूतेषु-भूतेषु विविच्य धीराः मेराऽस्माज्जोकादमृता भवन्ति ॥५॥४॥१-६

दशमेऽनुवाके द्वितीयं अष्टकम् ।

ब्रह्म ह देवेभ्यो विजिग्ये । तस्य ह ब्रह्मणो विजये देवा अमहीयन्त ।

त ऐक्षन्ताऽस्माकमेवाऽयं विजयः । अस्माकमेवऽयं महिमेति ॥१॥

तद्वैपां विजिग्यौ । तेभ्यो ह प्रादुर्दभूव । तन्न च्यजानन्त^३ किमिदं

यत्तमिति ॥२॥ तेऽग्रिमश्रुवज्जातवेद एतद् विजानीहि^३ किमेतद्

यत्तमिति । तयेति ॥३॥ तदभ्यद्ववत् । तमभ्यवदत् कौऽसीति ।

अग्निर्वा अहमस्मीत्तव्वीज्जातवेदा वा अहमस्मीति ॥४॥ तस्मिँ-

स्त्वयि किं वीर्यमिति । अपीदं सर्वं दहेयम् यदिदमृथिव्यामिति ॥५॥
 तस्मै तृणं निदधावेतद्दहेति । तद्रूपमेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाकदग्धुम् ।
 स तत एव निवहते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥६॥ अथ
 वायुमद्भुवन् वायवेतद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ॥७॥
 तदभ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति । वायुर्वा अहमस्मीत्यत्रवी-
 न्मातरिथा वा अहमस्मीति ॥८॥ तस्मिँस्त्वयि किं वीर्यमिति ।
 अपीदं सर्वं भाददीय यदिदमृथिव्यामिति ॥९॥ तस्मै तृणं
 निदधावेतदादत्स्येति । तद्रूपमेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाका-
 ऽऽदातुम् । स तत एव निवहते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥१०॥
 अथेन्द्रमद्भुवन् मद्यवधेराद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ।
 तदभ्यद्रवत् । तस्मात् तिरोऽद्ध्ये ॥११॥ स तस्मिन्नेवाऽऽकाशे
 स्त्रियमान्नागाम बहु शोभमानामुमां हैमवतीम् । तां होवाच किमेतद्
 यत्नमिति ॥१२॥४२०॥

दशमेऽनुवाके तृतीय. खण्ड ।

ब्रह्मेति होवाच ब्रह्मणो वा एतद् विजये महीयध्व इति । ततो
 हैव विदांचकार ब्रह्मेति ॥१॥ तस्माद्वा एते देवा अतितरामि-

चान्यान् देवान् यदाग्निर्वीयुरिन्द्रः । ते ह्येनन्नेदिष्टम्पस्पृथुस्स ह्येनत्^१
 प्रथमो विदांचकार ब्रह्मेति ॥२॥ तस्माद् वा इन्द्रोऽतितरामिवा-
 ऽन्यान् देवान् । स ह्येनन्नेदिष्टम्पस्पर्श स ह्येनत् प्रथमो विदांचकार
 ब्रह्मेति ॥३॥ तस्यैप आदेशो यदेतद् विद्युतो व्यशुतदा^४ इति^५ ।
 न्यमिपदा^६ । इसधिदेवतम् ॥४॥ अथाऽध्यात्मम् । यदेनद्
 गच्छतीव च मनोऽनेन चैनदुपस्मरत्यभीक्ष्णं संकल्पः^७ ॥५॥ तद्ध
 तद्गनं नाम । तद्गनमित्युपासितव्यम् । स य एतदेवं वेदाऽभिहैनं
 सर्वाणि भूतानि संवाञ्छन्ति ॥६॥ उपनिपदम्भो ब्रूहीति । उक्ता
 त उपनिपत् । ब्राह्मी वाच त उपनिपदमब्रूमेति ॥७॥ तस्यै तपो
 दमः कर्मेति प्रतिष्ठा^१ वेदास्सर्वाङ्गाणि सत्यमायतनम् ॥८॥
 यो^{१०} वा एतामेवं वेदाऽपहस्य पाप्मानमनन्ते स्वर्गे लोकेऽज्येये
 प्रतितिष्ठति ॥९॥४।२१।

दशमोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । दशमोऽनुवाकरसमाप्तः ॥

१ नेदिष्मा, नेदिष्टम् । २ ते । ३ अन् । ४ विद्यु । ५ इती३ । ६ मीप् ।
 ७ सुप् । ८ सर्व्वेत्तन्ति । ९ ध्रो । १०-५ ॥

आशा वा^१ इदमग्र आसीद्विष्यदैव । वदभवत् । ता आपो-
 ऽभवत् ॥१॥ तास्तपोऽवप्यन्त । तास्तपस्तेषाना हुस्सितेव प्राचीः
 प्राश्वसन् । स वाव प्राणोऽभवत् ॥२॥ ताः प्राण्याऽपानन् । स
 वा अपानोऽभवत् ॥३॥ ता अयान्य^३ व्यानन्^४ । स वाव व्यानो-
 ऽभवत् ॥४॥ ता व्यान्य समानन् । स वाव समानोऽभवत् ॥५॥
 तास्समान्योदानन् । स वा उदानोऽभवत् ॥६॥ तदिदमेकमेव
 सधमाद्यमासीद्विविक्तम् ॥७॥ स नामरूपमकुरुत् । तेनैन्द्रय-
 विनक्^६ । वि ह पाप्मनो विच्यते य एवं वेद ॥८॥ तदसौ वा
 आदित्यः प्राणोऽग्निरपानं आपो व्यानो दिशस्समानश्चन्द्रमा
 उदानः ॥९॥ तद्वा एतदेकमभवत्प्राण एव । स य एवमेतदेकम्भ-
 वद्वेदैवं हैतदेकधा भवतीत्येकधैव श्रेष्ठस्त्वानाम्भवाति ॥१०॥
 तदीप्रैर्वै प्राणो वागिति पृथिवी वायुर्वै प्राणो वागित्यन्तरित्तमा-
 दित्यो वै प्राणो वागिति द्यौर्दिशो वै प्राणो वागिति श्रोत्रं चन्द्रमा
 वै प्राणो वागिति मनः पुमान्वा वै प्राणो वागिति स्त्री ॥११॥ तस्येदं
 सृष्टं शिथिलम्भुवनमासीदपर्याप्तम् ॥१२॥ स मनोरूपमकुरुत् ।

१ 'आशा वा' का पुनः पाठ है । २ येद् । ३ अपान ।
 ४ ए-। ५-मादम् । ६-रूपम् । ७-विनोत् । ८-इम् । ९ उपा-१० स्त्रै-॥

तेन तत्पर्यागोत्र । दृढं ह वा अस्येदं सृष्टमशियिलम्भुवनम्पर्या-
प्तम्भवति य एवं वेद ॥१३॥४१२२॥

एकादशेऽनुवाके प्रथमं खण्ड ।

सैषा^१ चतुर्था^२ विहिता^३ श्रीरुद्रीयस्सामाकर्ष्यं ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥१॥
प्राणो वावोद्राग्नी^४ स उद्गीथः ॥२॥ प्राणो वावामो वाक् सा
तत्साम ॥३॥ प्राणो वाव को वागृक् तद्वर्क्यम् ॥४॥ प्राणो वाव
ज्येष्ठो वाग्ब्राह्मणं तज्ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥५॥ उपनिषद्भो
व्यूहीति । उक्ता त उपनिषदस्य ते धातव उक्ताः । त्रिधातु विष्णु
षाव त उपनिषदभ्रूमेति ॥ ६ ॥ एतच्छुक्लं कृष्णं ताम्रं
सामवर्णं इति ह स्माह यदेव शुक्लकृष्णे ताम्रो वर्णोऽभ्यवैति
स वै ते दृढते^९ दशमं^{१०} मानुषमिति त्रिधातु । स पेन्त क नु म
उत्तानाय^{११} शयानायेमा देवता वर्लि हरेयुरिति ॥७॥४१२३॥

एकादशेऽनुवाके द्वितीयं खण्ड ॥

स पुरुषमेव प्रपदनायाऽवृणीत ॥१॥ तम्पुरस्तात्प्रसञ्जम्प्रा-

१ स्तात् । २ विहिता । ३ अग्नी , गी । ४ व्युत्प-प्र । ५-पवृ ।

७-दा । ८ वे । ९-त । १० दशम, श के पूर्व एक अक्षर पदा नहीं
जाता, कदाचित् करा है । ११ उत्तानाय ॥

विश्वम् । तस्मा उरुरभवत् । तदुरस उरस्त्वम् ॥२॥ तस्मा अब्रसद्
 एता देवता वरिं हरन्ति ॥३॥ वाचमनुहरन्तीमग्निरस्मै वरिं
 हरति ॥४॥ मनोऽनुहरच्चन्द्रमा अस्मै वरिं हरति ॥५॥ चक्षुरनु-
 हरदादियोऽस्मै वरिं हरति ॥६॥ श्रोत्रमनुहरादिशोऽस्मै वरिं
 हरन्ति ॥७॥ प्राणमनुहरन्तं वायुरस्मै वरिं हरति ॥८॥ तस्यैते
 निष्प्राताः^१ पन्या वलिवाहना^२ इमे प्राणाः । एवं हैतं निष्प्राताः
 पन्या वलिवाहनास्सर्वतोऽपियन्ति^३ प्राणा य एवं वेद ॥९॥ सा
 हैषा ब्रह्मासन्दीमारुढा । आ हास्यै ब्रह्मासन्दीं हरन्त्याधि ह
 ब्रह्मासन्दीं रोहति य एवं वेद ॥१०॥ तदेतद् ब्रह्मयज्ञश्च श्रिया
 परिष्टम् । ब्रह्म ह तु सन् यज्ञसा श्रिया परिष्टो भवति य एवं
 वेद ॥११॥ तस्यैष आदेशो^४ योऽयं दक्षिणेऽन्तः । तस्य
 यच्छुक्रं तदनां रूपं यच्छुष्णं तत्साम्नां यदेव ताम्रमिव यधुरिव
 तद्यजुषाम् ॥१२॥ य एवायं चक्षुषि पुंस्य एष इन्द्र एष मना-
 पतिस्समः पृथिव्या सम आकाशेन समो दिवा समस्सर्वेण
 भूतेन । एष परो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासि-
 तव्यम् ॥१३॥१४॥१५॥

एकादशेऽनुजाके तृतीयः पण्डः ।

सचाऽसच्चाऽसच्च सच्च वाक् च मनश्च [मनश्च] वाक् च
 चक्षुश्च श्रोत्र च श्रोत्र च चक्षुश्च श्रद्धा च तपश्च तपश्च श्रद्धा च
 तानि षोडश ॥१॥ षोडशकलम्ब्रह्म । स य एवमेतत् षोडशकलम्ब्रह्म
 वेद तमेवैतत् षोडशकलम्ब्रह्माऽप्येति ॥२॥ वेदो ब्रह्म तस्य
 ससमायतन शमः प्रतिष्ठा दमश्च ॥३॥ तद्यथा श्वः प्रैष्यन्
 पापात्कर्मणो जुगुप्सेतैवमेवाऽहरहः पापात्कर्मणो जुगुप्सेताऽऽ
 कालात् ॥४॥ अथैषा दशपदी विराट् ॥५॥ दश पुरुषे स्वर्ग-
 नरकाणि । तान्येन स्वर्ग गतानि स्वर्ग गमयन्ति नरक गतानि
 नरक गमयन्ति ॥६॥४॥२५॥

एकादशेऽनुवाके चतुर्थं खण्ड ।

मनो नरको वाद् नरकः प्राणो नरकश्च चक्षुर्नरकश्च श्रोत्रं
 नरकस्त्वद् नरको हस्तौ नरको गुद नरकश्शिश्रु नरकः पादौ नरकः
 ॥१॥ मनसा परीक्ष्याणि वेदेति वेद ॥२॥ वाचा रसान्वेदेति वेद
 ॥३॥ प्राणेन गन्धान्वेदेति वेद ॥४॥ चक्षुषा रूपाणि वेदेति
 वेद ॥५॥ श्रोत्रेण शब्दान्वेदेति वेद ॥६॥ त्वचा सस्पर्शान्वे-
 देति वेद ॥७॥ हस्ताभ्या कर्माणि वेदेति वेद ॥८॥ उदरेणा-

ऽशनयां वेदेति वेद ॥६॥ शिशनेन रामान्वेदेति वेद ॥१०॥
 पादाभ्यामध्वनो वेदेति वेद ॥११॥ प्लक्षस्य प्रासवणस्य
 प्रादेशमात्राद्बुदक् तत्पृथिव्यै मध्यम् । अथ यत्रैते ससर्पयस्तदिवो
 मध्यम् ॥१२॥ अथ यत्रैत ऊपास्तत्पृथिव्यै हृदयम् । अथ यदे-
 तत्कृष्णं चन्द्रमासे तदिवो हृदयम् ॥१३॥ स य एवमेते घावा-
 पृथिव्योर्मध्ये च हृदये च वेद नाऽकामोऽस्माज्जोकात्मैति ॥१४॥
 नमोऽतिसामायैऽतुरेताय धृतराष्ट्राय पार्थुश्रवसाय^५ ये^६ च प्राणं
 रक्षन्ति ते मा रक्षन्तु । स्वस्ति । कर्मैति गार्हपत्यशर्म^७ इत्याह-
 वनीयोदम इत्यन्वाहार्यपचनः ॥१५॥४॥२६॥

एकादशेऽनुवाके पञ्चमः अयडः । एकादशोऽनुवाकस्तस्मात्. ॥

कस्तविता । का सावित्री । अग्निरेव सविता । पृथिवी
 सावित्री ॥१॥ स यत्राऽग्निस्तत्पृथिवी यत्र वा पृथिवी तदग्निः ।
 ते द्वे योनी । तदेकम्मियुनम् ॥२॥ कस्तविता । का सावित्री ।
 वरुण एव सविता । आपस्तावित्री ॥३॥ स यत्र वरुणस्तदापो
 यत्र वाऽऽपस्तद्वरुणः । ते द्वेयोनी । [तदेकम्मियुनम्] ॥४॥

२-बद् । ३-कामो । ४-सामय-सामाय । ५-एतुर ।
 ६ पाङ्गुंध-से ठीक क्रिया हुआ है । ७-मय ॥

कस्सविता । का सावित्री । वायुरेव सविता । आकाशस्सावित्री
 ॥५॥ स यत्र वायुस्तदाकाशो यत्र वाऽऽकाशस्तद्वायुः । ते द्वे^२
 योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥६॥ कस्सविता । का सावित्री । यज्ञ एव
 सविता । छन्दांसि सावित्री ॥७॥ स यत्र यज्ञस्तच्छन्दांसि यत्र
 वा छन्दांसि तद्यज्ञः । ते द्वे^२ योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥८॥
 कस्सविता । का सावित्री । स्तनयित्नुरेव सविता । विद्युत् सावित्री
 ॥९॥ स यत्र स्तनयित्नुस्तद्विद्युद्यत्र वा विद्युत् तत्स्तनयित्नुः । ते
 द्वे^२ योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१०॥ कस्सविता । का सावित्री ।
 आदित्य एव सविता । द्यौस्सावित्री ॥११॥ स यत्राऽऽदित्यस्तद्द्यौर्यत्र
 वा द्यौस्तदादित्यः । ते द्वे^२ योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१२॥
 कस्सविता । का सावित्री । चन्द्र एव सविता । नक्षत्राणि सावित्री
 ॥१३॥ स यत्र चन्द्रस्तन्नक्षत्राणि यत्र वा नक्षत्राणि तच्चन्द्रः ।
 ते द्वे^२ योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१४॥ कस्सविता । का सावित्री ।
 मन एव सविता । वाक् सावित्री ॥१५॥ स यत्र मनस्तद्वाग्यत्र
 [वा] वाक् तन्मनः । ते द्वे^२ योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१६॥ कस्स-
 विता । का सावित्री । पुरुष [एव] सविता । स्त्री सावित्री । स
 यत्र पुरुषस्तत् स्त्री यत्र वा स्त्री तत्पुरुषः । ते द्वे योनी । तदेकस्मि-
 थुनम् ॥१७॥४२७॥

तस्या एष प्रथमः पादो भूस्तत्सवितुर्वरेण्यमिति । -अग्निर्वै
 वरेण्यम् । आपो वै वरेण्यम् । चन्द्रमा वै वरेण्यम् ॥१॥ तस्या
 एष द्वितीयः पादो भर्गमयो भुवो भर्गो देवस्य धीमहीति । अग्निर्वै
 भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः ॥२॥ तस्या एष तृतीयः
 पादस्स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री
 च वै पुरुषश्च प्रजनयतः ॥३॥ भूर्भुवस्तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य
 धीमहीति । अग्निर्वै भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः
 ॥४॥ स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री
 च वै पुरुषश्च प्रजनयतः ॥५॥ भूर्भुवस्तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो
 देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयादिति । यो वा एतां सावित्री-
 मेवं वेदाऽप्य पुनर्मृत्यु तरति सावित्र्या एव सन्नो कृतां जयति
 सावित्र्या एव सन्नो कृतां जयति ॥६॥४॥२८॥

द्वादशोऽनुवाके द्वितीय खण्ड । द्वादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

इत्युपनिषद्ब्राह्मणं समाप्तम् ॥

१-सँ । २ 'यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री च वै पुरुषश्च प्रजनयत'

अग्निष मरो ॥

१-ऋषि-नामों की सूची ।

वं० से वस का अभिप्राय दे ।

- अगस्त्य, ४२५॥१॥२६॥ वं० ।
 अतिसाम एतुरेत, ४०६१५॥
 अनुवक्ता सात्यकीर्त, १११५॥
 अमयद् आसमात्य ४८७॥
 अभिप्रतारी, ३१२११॥२१२,३,२३॥
 अभिप्रतारी काक्षसंनि २५६१॥३१२१॥
 अयास्य, २८७८॥११८॥
 अयास्य आङ्गिरस, २१७२,६॥३॥
 अयाद उत्तर पागशय ३४११॥ वं०
 आङ्गिरस, २१२१॥ देवो अयास्य आ० ।
 आज्ञकेशी, १६३॥
 आज्ञद्विश, देवो यम्य आ० ।
 आङ्गार, देवो पार आ० ।
 आत्रिय, देवो दक्ष कात्यायनि आ०, शन्न शाठ्यायनि आ० ।
 आरुणि, १४२१॥
 आरुण्य, २१११॥
 आर्चाकायण, देवो गलूनस आ० ।
 आरुकेय, देवो हृत्स्वाशय आ० ।
 आसमात्य, देखा अमयद् आ० ।
 इन्द्रोत देवाप शौनरु, ३४०१॥ वं० ।
 इय दयावाश्वि, ४१६१॥ वं०
 उर्मेश्रवस कावयेय, ३२२१२,२,३॥

उत्तर, देखो घ्रावाह उ० पाराशर्य ।

रुमा हूमयती, ४२०११॥

बलुक्य (?) जानश्रुतेय, १६३॥

बशन पाव्य २१७२, ६॥

ऋष्यशृङ्ग काश्यप, ३१८०१॥ घ० ।

एतुरत (?) देखो अतिसाम ए० ।

एशवाक, देवो भगेरथ ए० ।

एदगाक वाष्ण, १५१०॥

एनरेय देखो महिदाम ।

एन्द्रेति, देरती हति ए० शौनक ।

कम धारकी ३१८११॥ घ० ।

कस धारक्य ३१८११॥ घ० १४ १३१॥ ब० ।

कक्षीघन्त २५११॥

कश्यप, ४३३१॥

काक्षसेनि देवा अभिप्रनारी का० ।

काण्डविय ३१०२॥ देवा जनश्रुत का० । नगरी जानश्रुतेय का० ।

सायक जानश्रुतेय का० ।

कान्यायनि, देखो दत्त का० घ्रात्रेय ।

कापेय, ३११२ १२॥ देखो शौनक का० ।

कारीरादि, २१४४॥

कान्य, देखो उदान का० ।

काश्यप ३१४०१॥ घ० । देखो ऋष्यशृङ्ग का० । देयतर. दशावसावन

का० । भुव वाह्येय का० ।

कुवर धारक्य, ३१८११॥ घ० ।

कुरु (एक्य०) ११६११ (पठ्य०) ११३८१॥ देखो कौरव ।

कुरुपञ्चाजा, ३१७११॥ ३१७११॥ ३१७११॥ ३१७११॥ ३१७११॥

कुरुपञ्चाजा कौटिल्य ३१८११॥ घ० । देखो त्रिवेद क० कौटिल्य ।

प्याभूति सात्यकि, ३४२१॥ वं० ।

रुण्यरात लौहित्य, ३४२१॥ वं० । देखो त्रिवेद क० लौहित्य ।

केशी द.भ्यं, ३४२१,२॥

कौपयेय, देखो उष्यश्चयः ।

क्रातुजातेय, देखो राम क्रा० वैयाघ्रपथ ।

सैमि, देखो सुदक्षिण च० ।

नालूनस भार्ताकायण, ११२८४॥

मन्धर्षाप्सरस, १४११॥१५१०,११॥३५११॥

गुप्त, देखो वंपश्चित दार्ढजयन्ति गु० लौहित्य ।

गोबल वाप्यं, ११६१॥

गोंधु (जापाल), ३४७७॥

गौतम (भारुणि) १४२१॥

गौपुक्ति, ४१६१॥ वं० ।

शैदिमानेय, १३७७॥२५२॥ (बहुव०) १३११॥

देखो ब्रह्मदत्त च० । वासिष्ठ च० ।

शैत्ररथि, देखो सत्याधिचाक च० ।

जनधुत फारङ्गिय, ३४०२॥ वं० ।

जनधुत धारक्य, ३४११॥ वं० । ३४१७१॥ वं० ।

जमर्दाप्त, ३३११॥४३१॥

जयक लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

जयन्त, देखो यशस्वी ज० लौहित्य ।

जयन्त पाराशर्य, ३४११॥ वं० ।

जयन्त धारक्य, ३४११॥ वं० । (इस नाम के दो व्यक्ति) ४१७१॥ वं० ।

जानधुत, देखो नगरी जा० फारङ्गिय ।

जानधुतेय, देखो उलुङ्गय जा० । सायक जा० फारङ्गिय ।

जाबान, ३४११॥ (द्विव०) ३४७२,३,५,७,८॥ देखो गोंधु शुक्र ।

जैवलि, १।३८।४॥

ज्याजायन, ४।१३।१॥ घं० ।

जसदस्यु, २।१।१॥

त्रिवेद कृष्णरात लौहित्य, २।४२।१॥ घं० ।

दत्त कात्यायनि आश्रय, ३।४।१।१॥ घं० ।

दत्तजयन्त लौहित्य, ३।४२।१॥ घं० ।

दासंजयन्ति, देसो वैपश्चित दा० गुण लौहित्य, वैपश्चित दा०
दत्तजयन्त लौहित्य ।

दाभ्यं, देसो केशी दा० ।

दात्म्य (ब्रह्मदत्त चकितानेय), १।३८।१॥५६।३॥

दात्म्य देसो वन दा० ।

दत्तजयन्त, देसो विपश्चित दा० लौहित्य, वैपश्चित दासंजयन्त दा०
लौहित्य ।

दति ऐन्द्रोति शौनक, ३।४०।२॥ घं० ।

देवतरस् इयावसायन काश्यप, ३।४०।२॥ घं० ।

देवाप, देसो इन्द्रोत दे० शौनक ।

धृतराष्ट्र, ४।२६।१॥

नगरी जानश्रुतेय काश्यप, ३।४०।१॥ घं० ।

नाक, ३।१६।५॥

पतरू प्राजापत्य, ३।३०।३॥

परमेष्ठी प्राजापत्य, ३।४०।२॥ घं० ।

पल्लिगुत लौहित्य, ३।४२।१॥ घं० ।

'पाराशर्यं, देसो छवाट उत्तर पा० । जयन्त पा०। वैपश्चित दाशुर्नि-
मिन् पा० । सुदत्त पा० ।

पायुंधयन, ४।२६।१॥

पाप्यो शैलं, २।४।८॥

पुत्रुय प्राचीनयोग्य, ३४०२॥ ध०।

पृथु धैर्य, ११०॥३४५॥४५॥१॥

पौलुधि, देखो सत्ययज्ञ पौ० प्राचीनयोग्य ।

पौलुधित देखो सत्ययज्ञ पौ० ।

प्रतीदर्श ४०७॥

प्राचीनयोग्य, १२६१॥ देखो पुत्रुय प्रा० । सत्ययज्ञ पौलुधि प्रा० ।

सोमशुष्म सत्ययज्ञ प्रा० ।

प्राचीनशाल (बहु०), ३१०१॥

प्राचीनशालि, ३७२३५७॥१०१॥

प्राजापत्य, देखो परमेष्ठी प्रा० ।

प्रातृद् भाल, ३३१॥४॥

प्राञ्जय, देखो ह्यत प्रा० ।

प्रीष्टयार् चारक्य, २४१॥१॥ ध० ।

प्लव प्राञ्जय, ४२६१॥१॥

षक दाल्भ्य, ११०॥३४७॥१॥

षम्य आज्ञधिप, २७२॥६॥

षान्नव्य, देखो शङ्ख वा० ।

षान्नव्य वैशितानेय, १२६१॥५६॥१॥

मगेरथ पदवाक, ४३१॥२॥

माल, देखो प्रातृद् भा० ।

माहृधित (बहु०), २४७॥

मनु, ३१५१॥

महिदास पेनरेय, ४२१॥१॥

मातरिश्चन्, ४२०॥७॥

मानय, देखो शर्पांत प्रा० ।

मित्रभृति सादित्य ३४०१॥ ध० ।

मुञ्ज सामध्वस, ३।१।१॥

यशस्वी जयन्त लौहित्य, ३।४।१।१॥ घं० ।

राम क्रातुजातेय वैयामपद्य, ३।४।१।१॥ घं० । ४ १६।१॥ घं०

रौद्रिण, १।५६।७, १०॥

लौहित्य, देखो कृष्णादत्त लौ०, कृष्णारात लौ०, जयका लौ०, त्रिषेद्
कृष्णारात लौ०, दत्त जयन्त लौ०, पल्लिगुप्त लौ०, मित्रभूति
लौ० यशस्वी जयन्त लौ०, विपश्चित् ददजयन्त लौ०,
वैपश्चित् दादंजयन्ति गुप्त लौ०, वैपश्चित् दादंजयन्ति
ददजयन्त लौ०, श्यामजयन्त लौ०, श्यामसुजयन्त लौ०,
सत्यध्रवस् लौ० ।

वासिष्ठ, ३।२'१३।१५।-।।१८।६, ७॥ तुल० वासिष्ठ ।

वारकि, देखो कंस वा० ।

वारुण्य, देखो कंस वा०, कुबेर वा०, जमथुत वा०, जयन्त वा०
प्रोष्ठपाद् वा० ।

वाष्पा, देखो ऐक्ष्वाक वा०, गोक्षल वा० ।

वासिष्ठ चैकितानेय, १।४।२।६॥

वाह्येय, देखो ध्रुव वा० काश्यप ।

विपश्चित् ददजयन्त लौहित्य, ३।४।१।१॥ घं० ।

विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य, ३।४।१।१॥ घं० ।

विश्वामित्र, ३।१।७।१।१॥ (यदुच०) ३।१।५।१॥ तुल० वैश्वामित्र

वैकुण्ठ (इन्द्र), ४।५।१।१०।१०॥

वैन्य, १।४।५।१॥ देखो पृथु घं० ।

वैपश्चित् दादंजयन्ति गुप्त लौहित्य, ३।४।१।१॥ घं० ।

वैपश्चित् दादंजयन्ति ददजन्त लौहित्य, ३।४।१।१॥ घं० ।

वैमृच (इन्द्र), ४।१०।१०॥

वैश्वपत्त, देखो राम क्रातुजातेय घं० ।

- शकुनिमित्र, देखो विपश्चित् श० पागदार्थ ।
- शङ्ख वाष्पव्य, ३८११॥ वं० । ४१७१॥ वं० ।
- शङ्ख शास्त्रायति आत्रेय, ३४०१॥ वं० ।
- शर्ष, ४१०१०॥
- शर्षात मानव, २०७१॥३,५॥
- शास्त्रायति, १६२॥३०१॥२२॥३॥४॥५॥६॥७॥८॥९॥१०॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥
४१६१॥ वं० । १७१॥ वं० । देखो शङ्ख शा० आत्रेय ।
- शाण्डिल्य, देखो सुयम शा० ।
- शालावत्य, १३८५॥
- शुक (जावाल), ३७७७॥
- शैलन (बहुव०), १२३॥२४६॥ देखो पाष्णो शै० सुचित्त शै० ।
- शौनक, १५६२॥ देखो इन्द्रोत डैवाप शौ०, दति एन्द्रोनि शौ० ।
- शौनक कापेय, ३१२१॥
- श्यामजयन्त लौहित्य (इस नाम के दो व्यक्ति), ३४२१॥ वं० ।
- श्यामसुजयन्त लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।
- श्यावसायन, देखो देवतरस् श्या० काश्यप ।
- श्यावाश्वि, देखो इश श्या० ।
- श्रुव याज्ञेय काश्यप, ३४०१॥ वं० ।
- श्वानि (एक वैश्य), ३५२॥
- सत्ययज्ञ पौलुपित, १२६१॥
- सत्ययज्ञ पौलुपि प्राचीनयोग्य, ३४०१॥ वं० ।
- सत्यथवस् लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।
- सत्याधियाक चैत्ररथि, १३६१॥
- सात्यकि, देखो कृष्णाधृति सा० ।
- सात्यकीर्त (बहुव०), ३३२१॥ देखो अनुपक्ता सा० ।
- सात्ययज्ञि (बहुव०), २४५॥ देखो सोमशुष्म सा० प्राचीनयोग्य ।

सामथ्रवस, देखो मुझ सा० ।

सायक ज्ञानधुतेय काण्डविय, ३००१॥ वं० ।

सुचित्त शब्दन, ११५५॥

सुदक्षिण, ३७०॥६॥ (देखो सुदक्षिण कैमि)

सुदक्षिण कैमि, ३६३॥७॥४५६॥ (देखो सुदक्षिण) ।

सुदत्त पाराशर्य, ३५१॥२॥ वं०५१७१॥ वं० ।

सुयज्ञ शाण्डिल्य, ५१७१॥

सोमवृहस्पति (द्विच०), १५८॥६॥

सोमशुभ सात्ययज्ञि प्राचीनयोग्य, ३४०१॥ वं० ।

हृत्स्याशय आह्लकेय, ३४०१॥ वं० ।

दैमवती, देखो उमा है० ।

२-निर्वचनादि सूची ।

अक्षर, १२५१॥४३०१॥५१॥५२॥

४३०॥

अन्तरिक्ष, १२०५॥

अयास्य, २००१॥११॥

अर्क्य, ५२३५॥

असु, १४०५॥

असुर, ३३५३॥

आङ्गिरस, २१११॥

आदि, ११११॥११॥

आदित्य, ५२०॥

आयत्त, ३३३५॥

उरस, ५२५१॥

ऋन्, ११५५॥

गायत्र, ३३५५॥

देवधुत, ११५१॥

पतङ्ग, ३३५१॥

पश्यत, १५६५॥

प्रतिहार, ११११॥

प्रस्ताम, प्रस्तामि, १२५१॥

प्रस्ताव, ११११॥

वृहस्पति, २०१५॥

भीमल, १५७१॥

मधुपुत्र, १५५१॥

महीया, १४५५॥

रुद्र, ५२५॥

रोटर्सी, १३२५॥

घसु, ५२५१॥

चैवामित्र, ३३५५॥

शतसन्नि, १५०५॥

सजात, १५८३॥

समुद्र, १२५५॥

सामन्, १३३५॥ ४०६॥५५॥ ५१२५॥१३२॥ ११२५॥ १५३५॥

५६२५॥५२३३॥

सिन्धु, १२६२॥

सुवर्ग, ३२५५॥

हरि, १५५५॥

३-(क) ऋचादिसूची ।

अदितिर्द्यौरदिति, १४१५॥ ऋ० १८६१०॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमाताम्, ३३७१॥ ऋ० ११२६५३१॥

आत्मा देवानामुत मर्त्यानाम्, ३२५५॥ तु० ५०० उ० ५३३॥

आयुर्माता मति. पिता, ५११॥

इन्द्रमुक्थमृचम्, १५३१॥

इमामेपामृचियीम्, १६५॥ अथ० १०८३६॥

उतीषां ज्येष्ठः, ३१०१२॥ अथ० १०८२८॥

उपास्मै गायत, ३३८६॥ ऋ० ६१३११॥

ऋषय एते मन्त्रकृत, १५५२॥

चत्वारि वाक् परिमिता, १५३३॥ ऋ० ११२६५३५॥

तत्सवितुर्वरेण्यम्, ५२८१॥ ऋ० ३३२१०॥

ध्यायुषं फद्यपस्य, ५३३१॥ तु०, अ० ५१८५॥

नवो नवो भवसि, ३२७११॥ तु०, ऋ० १०८५१६॥

पतद्गमकम्, ३३५१॥ ऋ० १०१७७१॥

पतद्गो वाचमनसा, ३३६२॥ ऋ० १०१७७२॥

मयीदं मन्ये भुवनादि, ३१७६॥

महात्मनश्चतुरो देव, ३२२२॥ तु० ५०० उ० ५३३॥

यदृषावा इन्द्र मे शतम्, १।३।१॥ ऋ० वा १०।५॥
 यस्तत्तरदिमर्दुपम, १।२।७॥ ऋ० २।१२।१२॥
 येऽप्रयः पुरीष्या, ४।३।३॥ य० १।८।६॥
 येर्मिर्वीत इषित, १।३।४।६॥ अथ० १०।८।३५॥
 रूपं-रूपमप्रतिरूप, १।४।४।१॥ ऋ० ६।४।७।१८॥
 रूपं-रूपम्मघवा, १।४।४।६॥ ऋ० ३।५।३।८॥
 स नो मयोभू, ४।३।२॥

स यदा वै त्रियते, १।४।७॥
 स्त्री स्मैवाऽग्रे, १।५।६।५॥
 स्थूणां दिवस्तम्मनीम, १।१०।१॥

(स)

अभिजिदस्यभिजय्यासम, ३।२०।१०॥
 अमोऽहमस्मि, (दीर्घपाठ), १।५।४।६॥ (संक्षिप्त), ५।७।४॥
 अरययस्य घन्तोऽस्ति, ४।४।१॥
 उपायत्तं ध्वम, ३।१६।१॥३।४।२॥
 गुहासि देवोऽस्ति, ३।२०।१॥
 विशास्या शोचम, १।२।२।६॥
 देवेन सवित्रा, ३।१८।३,६॥
 पुरुष प्रजापति, १।४।६।३,४॥
 प्राणा३ प्राणा३ प्राणा३, २।२।७॥
 महाम्महा समधत्त, ३।४।५॥
 यत्पुरस्तात्तासीन्द्रः, ३।२।१।१॥
 यिमूः पुरस्तात्सम्पत्, ३।२।७।१॥
 म्युपि सविता भवसि, ४।५।१॥
 भ्रेताभ्यो दर्यतो, ४।१।१॥
 सत्यस्य पन्था, ३।२।७।१०॥
 सोमः पवते, ३।१६।१॥३।४।२॥